''मेवाड़ प्रशासन में जागीरदारों एवं प्रमुख ऐतिहासिक घरानों की भूमिका'' (18वीं–20वीं शताब्दी)

A STUDY OF THE ROLE OF JAGIRDARS AND CHIEF HISTORICAL FAMILIES IN MEWAR ADMINISTRATION (18TH – 20TH CENTURY)

Submitted for the award of Ph.D. degree

By

RAM SINGH RATHORE

Under the Supervision of

Dr. Ajat Shatru Singh Ranawat

Professor

Pacific University, Udaipur

FACULTY OF SOCIAL SCIENCE & HUMANITIES

DEPARTMENT OF HISTORY

PACIFIC ACADEMY OF HIGHER EDUCATION & RESEARCH UNIVERSITY, UDAIPUR (RAJASTHAN)

2024

''मेवाड़ प्रशासन में जागीरदारों एवं प्रमुख ऐतिहासिक घरानों की भूमिका'' (18वीं–20वीं शताब्दी)

A STUDY OF THE ROLE OF JAGIRDARS AND CHIEF HISTORICAL FAMILIES IN MEWAR ADMINISTRATION (18TH – 20TH CENTURY)

Submitted for the award of Ph.D. degree

By

RAM SINGH RATHORE

Under the Supervision of
Dr. Ajat Shatru Singh Ranawat
Professor
Pacific University, Udaipur

FACULTY OF SOCIAL SCIENCE & HUMANITIES

DEPARTMENT OF HISTORY

PACIFIC ACADEMY OF HIGHER EDUCATION & RESEARCH UNIVERSITY, UDAIPUR (RAJASTHAN)

2024

पेसिफिक उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान विश्वविद्यालय , उदयपुर (पाहेर)

पी.एच.डी. स्तरीय शोध आकल्प

नाम शोधार्थी	:	रामसिंह राठौड़
विश्वविद्यालय	:	पेसिफिक विश्वविद्यालय
शोध संकाय	:	सामाजिक एवं मानविकी विभाग
शोध का स्तर	:	पी.एच.डी. (इतिहास संकाय)
वर्ष	:	2024
शोध विषय	:	**''मेवाड़ प्रशासन में जागीरदारों एवं प्रमुख ऐतिहासिक घरानों की भूमिका'' (18वीं–20वीं शताब्दी)**

पर्यवेक्षक
डॉ. अजातशत्रु सिंह राणावत
प्रोफेसर, इतिहास विभाग
पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर

नाम शोधार्थी
रामसिंह राठौड़
(पी.एच.डी. छात्र)

DECLARATION

I, ***Ram Singh Rathore,***

S/o Fateh Singh Rathore

Residing at – 337 – K – One Road, Bhupalpura,

Girwa, Udaipur (Rajasthan) – 313001

hereby declare that the work in corporate in the

present thesis entitled

"A STUDY OF THE ROLE OF JAGIRDARS AND CHIEF HISTORICAL FAMILIES IN MEWAR ADMINISTRATION"

(18TH – 20TH CENTURY)

''मेवाड़ प्रशासन में जागीरदारों एवं प्रमुख ऐतिहासिक घरानों की भूमिका'' (18वीं–20वीं शताब्दी)

is my own work and is original. This work (in part or in full) has not been submitted to any university for the award of a Degree or a Diploma.

I have properly acknowledged the material collected from original and secondary sources wherever required.

I solely own the responsibility for the originality of the entire content.

Place : Udaipur
Date :

Signature of Candidate
Ram Singh Rathore

CERTIFICATE

It gives me immense pleasure in certifying that the thesis entitled

"A STUDY OF THE ROLE OF JAGIRDARS AND CHIEF HISTORICAL FAMILIES IN MEWAR ADMINISTRATION"

(18TH – 20TH CENTURY)

''मेवाड़ प्रशासन में जागीरदारों एवं प्रमुख ऐतिहासिक घरानों की भूमिका'' (18वीं–20वीं शताब्दी)

and submitted by

Ram Singh Rathore

is based on the work research carried out under my guidance. He has completed the following requirements as per Ph.D regulations of the university.

1) *Course work as per the university rules.*
2) *Residential requirements of the University.*
3) *Regularly submitted half yearly progress report.*
4) *Published accepted minimum of two research papers in the referred research journal.*

I recommend the submission of Thesis to be awarded the Degree of Ph.D. in faculty of Social Science and Humanities.

Place : Udaipur
Date :

Signature of Supervisor
Dr. Ajat Shatru Singh Ranawat
(Professor) Dept. of History
PAHER University, Udaipur

COPYRIGHT

I, ***Ram Singh Rathore***

hereby declare that the Pacific Academy of Higher Education and Research University Udaipur, Rajasthan shall have the rights to preserve, use and disseminate this dissertation / thesis entitled

"A STUDY OF THE ROLE OF JAGIRDARS AND CHIEF HISTORICAL FAMILIES IN MEWAR ADMINISTRATION"

(18TH – 20TH CENTURY)

''मेवाड़ प्रशासन में जागीरदारों एवं प्रमुख ऐतिहासिक घरानों की भूमिका'' (18वीं–20वीं शताब्दी)

in print or electronic format for academic / research purpose.

Place : Udaipur
Date :

Signature of Candidate
Ram Singh Rathore

अनुक्रमणिका

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
1	**अध्याय प्रथम – मेवाड़ रियासत की भौगोलिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि**	**1 – 39**
	1.0 प्राकृतिक क्षेत्र	1
	1.1 मेवाड़ की प्रमुख झीलें	8
	1.2 सिंचाई साधन एवं अन्य जल स्त्रोत	11
	1.3 जलवायु	12
	1.4 मेवाड़ की भू–राजनैतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि	12
	1.5 मेवाड़ की राजधानियाँ एवं प्रशासनिक केन्द्र	19
	1.6 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि	23
	1.7 सौर संप्रदाय	24
	1.8 युग–युगीन मेवाड़ धरा	25
	1.9 मेवाड़ का राजवंष	27
	1.10 भारत में गुहिलोत वंश का विस्तार	30
	1.11 मेवाड़ के गुहिल/सिसोदिया वंशज के अन्य राज्य	32
	पाद टिप्पणियाँ	35

क्र. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
2	**अध्याय द्वितीय – मेवाड़ का मुस्लिम आक्रमणों के विरूद्ध प्रतिरोध (8वीं से 17वीं शताब्दी) (सनातन धर्म और संस्कृति के संरक्षण के सन्दर्भ में)**	**40 – 62**
	2.0 विदेशी यात्रियों एवं यूरोपीय लेखकों के वृत्तान्तों में प्रतिबिम्बित मेवाड़	42
	2.1 भारत में राष्ट्रीयता की अवधारणा	55
	2.2 भारत के राजवंशों की ऐतिहासिक परम्पराओं के प्रमाणित आधार एवं उनके प्रमाणित दस्तावेज	56
	2.3 स्वाधीनता के लिए विदेषी आक्रमणों का प्रतिरोध	58
	पाद टिप्पणियाँ	62

क्र. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
3	**अध्याय तृतीय – मेवाड़ के जागीरदार एवं कतिपय ऐतिहासिक घरानों की पृष्ठभूमि**	**63 – 85**
	3.0 मेवाड़ के प्रमुख जागीरदार	63
	3.1 भोमट के जागीरदार	68
	3.2 मेवाड़ भील कोर की स्थापना (1841 ई.)	72
	3.3 मेवाड़ राज्य – शासन के अन्तर्गत भोमट के ठिकानेदारों के न्यायिक अधिकार	74
	3.4 राणा पूंजा (1572–1610 ई.)	75
	3.5 मेवाड़ प्रशासन के विभिन्न कार्यालय (कारखाने)	78
	3.6 मेवाड़ प्रशासन के सहयोगी – ब्राह्मण वर्ग	79
	3.7 मेवाड़ प्रशासन के सहयोगी वैष्य/जैन वर्ग	80
	3.8 मेवाड़ रियासत के प्रसिद्ध ऐतिहासिक घराने	81
	पाद टिप्पणियाँ	84

क्र. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
4	**अध्याय चर्तुथ – मेवाड़ का शासन प्रबन्धन**	**86 – 116**
	4.0 मेवाड़ में जागीरदारी व्यवस्था : सर्वेक्षण	86
	4.1 आलोच्यकालीन सामन्तशाही	90
	4.2 मेवाड़ शासन प्रबन्ध में सामन्तों की भूमिका	90
	4.3 सामन्तिक पद एवं स्थान	97
	4.4 मान सम्मान	97
	4.5 सामन्त विरूद्ध	99
	4.6 मर्यादाऐं और कर्त्तव्य	101
	4.7 नजराना	102
	4.8 आर्थिक सहायता	103
	4.9 जागीर वृत्ति	104
	4.10 राज्य मंत्रणा	105
	4.11 सैनिक कार्य	107
	4.12 राज्य नियंत्रण	108
	4.13 सामन्तों की स्वतन्त्रता	109
	पाद टिप्पणियाँ	113

क्र. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
5	**अध्याय पंचम – मेवाड़ प्रशासन में प्रमुख ऐतिहासिक घरानों का योगदान**	**117 – 147**
	5.0 भामाशाह–घराना : मेवाड़ प्रशासन में योगदान	117
	5.1 बोलिया घराना	118
	5.2 पाणेरी घराने की भूमिका	122
	5.3 हल्दीघाटी युद्ध का अमर शहीद : कल्याण जी पानेरी	127
	5.4 मेवाड़ का पुरोहित घराना : एक परिचय	130
	पाद टिप्पणियाँ	
	परिशिष्ट – मेवाड़ महाराणा द्वारा प्रदत्त महत्वपूर्ण	135
	ताम्रपत्र	138

क्र. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
6	**अध्याय षष्टम – 18वीं एवं 19वीं सदी का संक्रमणकालीन मेवाड़ (मेवाड़–मराठा संघर्ष)**	**148 – 199**
	6.0 ठाकुर अमरचन्द बड़वा का योगदान (सन् 1751 ई. से 1775 ई.)	149
	6.1 महाराणा हम्मीरसिंह द्वितीय एवं अमरचन्द बड़वा	155
	6.2 मेवाड़ पर मराठा आक्रमण और सत्ता की राजनीति	157
	6.3 मेवाड़ पर मराठा–पिण्डारी आक्रमण एवं सामन्तों में दल बंदी तथा ब्रिटिश प्रभु सत्ता की स्थापना	159
	6.4 प्रधान मेहता अगरचंद की प्रशासनिक भूमिका	161
	6.5 मेवाड़ प्रशासन में प्रधान पद के लिए प्रतिस्पर्द्धा (मेहता शेर सिंह एवं मेहता राम सिंह)	171
	6.6 मेहता गोकलचंद मेवाड़ के प्रधान पद पर नियुक्ति एवं उनकी प्रशासनिक सेवाऐं	175
	6.7 मेवाड़–महाराणा के आदेश से नाथद्वारा के गोस्वामी गिरधारी लाल के विरूद्ध प्रशासनिक कार्यवाही	176
	6.8 राय मेहता पन्नालाल के प्रशासकीय कार्य	177
	6.9 महाराणा शंभू सिंह ने 'लंगर' एवं 'तलवार	179

	बंधाई' का विशेषाधिकार प्रदान किया	
	6.10 प्रशासनिक पुनर्गठन एवं वित्तीय सुधार	179
	6.11 नमक–व्यापार समझौता	180
	6.12 चित्तौड़गढ़ में विशेष दरबार का आयोजन (सन् 1881 ई.)	182
	6.13 मेहता तखत सिंह द्वारा बागोर के सकत सिंह के 'नकली' पुत्र के मामले की छानबीन	184
	6.14 ड्यूक ऑफ कनौट ने फतेह सागर झील एवं जनहित परियोजनाओं की नींव रखीं	185
	6.15 मेवाड़ प्रशासन में सहीवाला अर्जुन सिंह की भूमिका	187
	6.16 1857 का जननायक ताराचन्द पटेल एवं तात्याटोपे की मेवाड़ ब्रिटिश सत्ता के विरोधी गतिविधियाँ	189
	पाद टिप्पणियाँ	191
	परिशिष्ट 1 – मेवाड़ के प्रधान बोलिया घराने का अभिलेख	195
	परिशिष्ट 2 – महाराणा अरिसिंह का शाह मोतीराम बोलिया के नाम ओदश पत्र (मराठा आक्रमणों से मेवाड़ की रक्षार्थ)	196
	परिशिष्ट 3 (अ) – महाराणा मेवाड़ चेरिटेबल ट्रस्ट, सिटी पैलेस, उदयपुर से प्राप्त वंशावली	197
	परिशिष्ट 3 (ब) – मेवाड़ का राजवंश एवं	198

	राजघरानों की तालिका परिशिष्ट 3 (स) – मेवाड़ का राजवंश एवं राजघरानों की तालिका	199

क्र. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
7	**अध्याय सप्तम – 20वीं सदी में मेवाड़ का शासन प्रबन्धन (मेवाड़–ब्रिटिश सम्बन्ध)**	**200 – 253**
	7.0 मामा अमान सिंह का योगदान	200
	7.1 रावली दुकान (राजकीय बैंकिंग व्यवस्था) का मामला	200
	7.2 मेवाड़ रियासत की मुद्रा नीति का विवाद	201
	7.3 मामा अमानसिंह : महाराजकुमार भूपाल सिंह जी के गार्डियन	203
	7.4 भूपाल नोबल्स स्कूल की स्थापना (सन् 1923 ई.)	203
	7.5 माण्डल के तालाब विवाद का प्रकरण	204
	7.6 मेहता रामसिंह का घराना	206
	7.7 पुरोहित राम का घराना	209
	7.8 कोठारी केसरीसिंह का घराना	211
	7.9 महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास का घराना	212
	7.10 महाराणा फतहसिंह कालीन मेवाड़ (1884–1930 ई.)	213
	7.11 वीर भारत सभा तथा केसरीसिंह बारहठ की गतिविधियाँ	216
	7.12 बिजोलिया कृषक आन्दोलन	219
	7.13 लोकसंत बावजी महाराज चतुरसिंह जी : मेवाड़ में सांस्कृतिक पुर्नजागरण	223

	7.14 महाराणा भूपालसिंह (सन् 1930–1956 ई.) : आधुनिक मेवाड़ के स्वप्नदृष्टा	226
	7.15 शिवरती घराना	237
	7.16 मेवाड़ के अंतिम महाराणा भगवत सिंह जी	241
	7.17 संत तुल्य दिव्यपुरुष राजर्षि महाराज श्री शत्रुदमन सिंह शिवरती	242
	पाद टिप्पणियाँ	248
	परिशिष्ट – महाराज शत्रुदमन सिंह हस्तलिखित साधक–संजीवनी के कतिपय पृष्ठ	252

क्र. सं.	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या
8	**अध्याय अष्ठम – शोधकार्य की उपलब्धियां, सारांश एवं भावी शोध हेतु सुझाव**	**254 – 312**
	8.0 मेवाड़ राज्य की भौगोलिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि	254
	8.1 मेवाड़–महाराणा का सामन्तों से सम्बन्ध	257
	8.2 दिल्ली दरबार और महाराणा फतहसिंह (1903 ई.)	261
	8.3 द्वितीय दिल्ली दरबार (1911 ई.)	263
	8.4 भावी शोध हेतु सुझाव	273
	परिशिष्ट 1 – मेवाड़ के महाराणा एवं उनके शासन के प्रमुख जागीरदार / ऐतिहासिक पुरूष	275
	परिशिष्ट 2 – मेवाड़ के राजपुरोहितों की वंशावली	298
	परिशिष्ट 3 – पानेरी घराने का सजरा	300
	परिशिष्ट 4 – मेवाड़ रियासत का संविधान	301
	परिशिष्ट 5 – नक्शा जागीरात राज्य मेवाड़ वि. सं. 1907 (ई.सन् 1850)	303
	परिशिष्ट 6 – महाराणा फतहसिंह कालीन मेवाड़ रेजीडेन्ट्स सन् 1884 से 1930 तक की सूची	306
	परिशिष्ट 7 – महाराणा फतहसिंह कालीन भारत के गवर्नर जनरल एवं वायसराय सन् 1884 से 1930 तक की सूची	307
	परिशिष्ट 8 – ठिकाना परसाद (रियासत मेवाड़)	308

	की वंशावली परिशिष्ट 9 – महाराणा भूपालसिंह जी का राज्यारोहण दरबार का दृश्य परिशिष्ट 10 – मेवाड़ महाराणा के शिविर (कैम्प) की बैठक व्यवस्था परिशिष्ट 11 – महाराज साहब श्री शिवदानसिंह जी की तस्वीर मय लवाजमा वि.सं. 1994 परिशिष्ट 12 – दसरावा का दरीखाना को तरीको	 309 310 311 312
	रिसर्च पेपर्स पब्लिश्ड / प्रजेन्टेड इन द कॉन्फ्रेन्स	
	प्रकाशित शोध पत्र I उदयपुर में बेदला ग्राम के कार्तिक स्वामी मन्दिर का शिलालेख (उदयपुर नगर की स्थापना के विशेष संदर्भ में) मय प्रमाण पत्र	
	प्रकाशित शोध पत्र II लोक संत महाराज चतुरसिंह जी बावजी मय प्रमाण पत्र	
	प्रमाण पत्र	

आमुख

मेवाड़ के गौरवपूर्ण इतिहास में यहां के जागीरदारों एवं प्रमुख ऐतिहासिक घरानों में यथा – **1) ब्राह्मण वर्ग** के पाणेरी–पुरोहित–पालीवाल, बड़वा तथा **2) जैन वर्ग** में भामाशाह – मेहता(चील) – मेहता (बच्छावत) – कोठारी – बोलिया घराना, **3) सहीवाला** घराना एवं **4) पानरवा** (भोमट) ठिकाना और साथ ही मेवाड़ राजवंश से सम्बन्धित घरानों में **शिवरती, करजाली तथा नेतावल** की अत्यन्त महत्वपूर्ण और निर्णायक भूमिका रही है। यहां के सामन्तों/जागीरदारों एवं अन्य वर्गों के प्रमुख व्यक्ति जहां एक ओर शासन प्रबन्ध के स्तम्भ रहे हैं वहीं दूसरी ओर इन्होंने युद्ध अभियानों में राजभक्ति के साथ अप्रतिम साहस, शौर्य व त्याग का परिचय दिया। उन्होंने मेवाड़–धरा की रक्षार्थ जिस निःस्वार्थ भावना से बलिदान दिया वह भारत के इतिहास का एक उज्जवल अध्याय है। अद्यावधि अभी तक प्रकाशित इतिहास ग्रंथों में मेवाड़ के महाराणाओं पर काफी शोध कार्य हुआ है परन्तु यहां के जागीरदारों एवं अन्य वर्गों के योगदान पर कोई शोध कार्य नहीं हुआ है। मेवाड़ राज्य के इतिहास को समझने के लिए यहां के जागीरदारों एवं अन्य वर्गों यथा जैन, ब्राह्मण, जनजातिय भील इत्यादि के बारे में अध्ययन किया जाना आवश्यक है। यद्यपि महाराणा अमरसिंह (द्वितीय) एवं महाराणा भीमसिंह कालीन अभिलेखागार से उपलब्ध बहियों में जागीरदारों के क्रियाकलापों और उनकी उपलब्धियों के बारे में अधिक जानकारी नहीं मिलती तथापि उनकी रेख, उपज, राजस्व और सैनिकों की संख्या अंकित होने से उनके स्तरीकरण और प्रशासन में उनकी भागीदारी का पता लगाया जा सकता है।

महाराणा अमरसिंह द्वितीय कालीन बही में मेवाड़ के जागीरदारों की जाति श्रेणी के अनुसार सूची में ठाकुरों के जागीर गांवों की रेख और राजस्व मद दर्शायी गई है। रेख और उपत ये दोनों शब्द बड़े महत्वपूर्ण हैं। रेख के आंकड़ों का सम्बन्ध जागीरदार व जागीर–गांव दोनों से जुड़ा हुआ है। जागीरदार के स्तर के अनुसार उसकी रेख निश्चित की जाती थी फिर उसकी पूर्ति के केन्द्र में मेवाड़ महाराणाओं, सरदारों, जागीरदारों को रोकड़ वेतन नहीं देकर गांव प्रदान कर दिये जाते थे। गांव की आय के अनुसार उसकी रेख तय की जाती थी। जागीरदार व जागीर पट्टे के गांवों की रेख सदा एक समान रहे यह जरूरी नहीं था। जागीरदार की रेख उसके स्तर और सेवाओं के अनुपात में घटती–बढ़ती रहती थी और उसी अनुपात में उसके पट्टे के गांवों में कटौती अथवा बढ़ोतरी संभव थी। गांवों की रेख अनुमानित आय से आंकी जाती थी और आय के घटने बढ़ने पर अपवादस्वरूप ही उसकी रेख में परिवर्तन किया जाता था। महाराणा राजसिंह की पट्टा बही (ठाकुरां री रेख बही) से यह तथ्य हमारे सामने आया है कि अगर किसी जागीरदार को उसकी रेख के अनुपात में अधिक रेख के गांव दे दिये जाते तो बढ़ी हुई रेख के बदले कुछ रोकड़ रूपये जागीरदार को राजकोष में जमा कराने पड़ते थे। दूसरी ओर अगर जागीरदार को निर्धारित रेख के अनुपात में कम रेख के गांव आवंटित किए जाते तो उसकी पूर्ति हेतु राज्य की ओर से रोकड़ राशि जागीरदार को मिलती थी। रेख के अनुसार जागीरदार को सेवाऐं देनी पड़ती थी और राज दरबार में मान–सम्मान भी उसके अनुसार मिलता था। भारत में मेवाड़ का शासन प्रबन्ध प्राचीन भारत के जनकल्याणकारी राजतन्त्रात्मक प्रणाली के अनुसार था। मेवाड़ का अधिपति मेवाड़नाथ भगवान श्री एकलिंगजी एवं राज्य का दीवान महाराणा थे और सम्पूर्ण राज्य जागीरों में

बँटा हुआ था। केन्द्र में महाराणा या दीवान को प्रशासन की समस्त शक्तियाँ एवं पद प्रतिष्ठा प्राप्त थी। उसी प्रकार उनके जागीरदारों को अपनी जागीरों में प्रशासन से सम्बन्धित शक्तियाँ व पद प्रतिष्ठा थी।

17वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुगल साम्राज्य के विघटन के परिणाम स्वरूप भारत में अनेक राजनैतिक इकाईयों का निर्माण होने लगा। सत्ता के अनेक केन्द्र स्थापित होने से देश के इतिहास का समग्र अध्ययन कठिनाई पूर्ण हो गया। स्वतन्त्रता प्रिय राज्य की शासन प्रणाली के प्रशासन तन्त्र के अध्ययन हेतु यत्र–तत्र स्थानीय रूप से बिखरी हुई सामग्रियों का संकलन, अध्ययन व विश्लेषण की महत्ती आवश्यकता है, इसलिए 1300 वर्षों के प्राचीन मेवाड़ के प्रशासन प्रबन्धन की दृष्टि से शोध कर्ता–इतिहासवेत्ताओं द्वारा विभिन्न स्थानों पर उपलब्ध सामग्री का संकलन करना नितान्त आवश्यक है।

मैंने मेवाड़ के जागीरदारों एवं अन्य निजी ऐतिहासिक संग्रहालयों से शोध सामग्री को उजागर करने का लक्ष्य रखा। इतिहासवेत्ताओं के लिए ऐतिहासिक सामग्री की उपलब्धता की दृष्टि से राजस्थान को स्वर्ग की संज्ञा दी जाती है। यहाँ सम्पूर्ण क्षेत्र में यत्र–तत्र विपुल रूप से बिखरी हुई शोध सामग्रियों अस्तित्व में है। प्राचीन भारत की प्रान्तिय प्रशासनिक अथवा स्थानीय प्रशासन व्यवस्था अनुसार जागीरदारों को जागीर में जन न्याय, लोक कल्याण एवं जन सुरक्षा हेतु उत्तरदायी थे। जहाँ तक मध्यकालीन इतिहास के स्त्रोतों का प्रश्न है यह शोध सम्बन्धित अप्रकाशित सामग्री जितनी राजस्थान में उपलब्ध है उतनी संभवतः देश के किसी अन्य क्षेत्र में नहीं है। वस्तुतः पुरालेख सामग्री विश्वसनीयता की दृष्टि से अन्य अनेक प्रकार के मौलिक स्त्रोतों में अधिक महत्वपूर्ण मानी गयी है। राजस्थान के पूर्व रियासतों की राजधानी में उपलब्ध अधिकांश पुरालेखीय दस्तावेजों को

एकत्रित कर राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर में सुरक्षित रखा गया है। जिसका उपयोग देश–विदेश के विद्वान अपने शोध कार्यों के लिए कर रहे हैं। लेकिन इससे भी अधिक मात्रा में तथा प्रत्येक प्रकार से ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सामग्रियाँ पूर्व सामन्तों के ठिकानों में भी भरी पड़ी है। उसकी ओर यद्यपि गत शताब्दी के सातवें व आठवें दशक में कतिपय इतिहासकारों ने ध्यान आकर्षिक करने का प्रयास किया, किन्तु विद्वानों में इस अत्यधिक महत्वपूर्ण सामग्री के प्रति अपेक्षाकृत उपेक्षा का व्यवहार रहा है। संभवतः इसके पीछे कारण सामग्री प्राप्त करने की कठिनाई रही हो। पूर्व सामन्तों के परिवारों की निजी सम्पत्ति होने से इस प्रकार की स्थिति का निर्माण होना स्वाभाविक भी है।

अपने चयनित विषय हेतु डॉ. मीना गौड़, पूर्व विभागाध्यक्ष इतिहास विभाग मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर साधुवाद की पात्र है कि ऐसी विषम स्थिति में तीन पूर्व जागीरदारों के यहाँ रखी हुई 17वीं से 19वीं शताब्दी की पुरालेखीय सामग्री को प्राप्त करने और शोधार्थियों के लिए उपलब्ध कराने में सफल रही। उन्होंने अपने प्रायोजनान्तर्गत गोगुन्दा, कोठारिया तथा कानोड़ ठिकाने में रखे हुए पट्टे–परवानों का संकलन किया गया है। उपर्युक्त तीनों ठिकानों के सामन्तों की मेवाड़ के इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। तीनों ठिकानों की सामग्री का चयन एक अन्य विशेषता लिए हुए भी है। ये तीनों ठिकाने अलग–अलग राजपूत वंशों के हैं। गोगुन्दा के ठिकानेदार झाला थे तो कोठारिया के चौहान और कानोड़ के सिसोदिया, जो राणा के वंशज ही थे। मैंने इसी प्रकार के कई प्रकाशित एवं अप्रकाशित प्रायोजनाओं, ग्रन्थों को पढ़कर शोध हेतु मेवाड़ के प्रशासन में जागीरदारों एवं ऐतिहासिक घरानों पर शोध कार्य करना

आवश्यक समझा क्योंकि अभी तक इस विषय पर देश–विदेश में शोध नहीं हुआ।

इसी उद्देश्य को लेकर मैंने पेसिफिक उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान विश्वविद्यालय, उदयपुर के सामाजिक एवं मानविकीय संकाय के इतिहास विभाग में शोध कार्य करने हेतु मेरे शोध मार्गदर्शक, इतिहासविद्, प्रोफेसर डॉ. अजात शत्रु सिंह राणावत 'शिवरती' उदयपुर के विद्वत्तापूर्ण परामर्श में यह शोध कार्य सम्पादित किया है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध – **''मेवाड़ प्रशासन में जागीरदारों एवं प्रमुख ऐतिहासिक घरानों की भूमिका'' (18वीं–20वीं शताब्दी)** इस विषय के चयन से लेकर निरन्तर दत्त संकलन और विभिन्न शोध सामग्री के संकलन और संपादन तक सहयोग करने के प्रति आभारी हूँ।

मैं उक्त शोध प्रबन्ध के प्रस्तुतीकरण में विविधतापूर्ण शोध विषयक सामग्री प्रस्तुत करने हेतु दस्तावेजों के लिए भारत के जाने माने इतिहासकार डॉ. जी. एल. मेनारिया निदेशक, तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान, उदयपुर के मूल्यवान योगदान तथा मेवाड़ के वरिष्ठ इतिहासकार डॉ. गिरीशनाथ माथुर के मार्गदर्शन के लिए हृदय से आभारी हूँ। इसके साथ मेरे द्वारा शिवरती घराने के वयोवृद्ध व्यक्तित्व महाराज मानसिंह जी शिवरती, करजाली परिवार से महाराज चन्द्रवीर सिंह जी मेवाड़ प्रशासन में सहयोगी ऐतिहासिक घराने के प्रबुद्ध, बोलिया परिवार के रिटायर्ड इंजीनियर वाई. के. बोलिया, बड़वा परिवार से सम्बन्धित डॉ. राजेन्द्रनाथ पुरोहित, चूण्डावत घराने से श्री करण सिंह जी कल्याणपुर एवं पाणेरी घराने के शिक्षाविद् श्री गणपत पानेरी, मेहता परिवार के कैप्टन श्री प्रताप सिंह जी मेहता, पुरोहित परिवार के डॉ. चन्द्रकान्त पालीवाल से लिए गए साक्षात्कार भी इस शोध कार्य के लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इस हेतु मैं

उनका हृदय से आभारी हूँ। साथ ही पेसिफिक विश्वविद्यालय के डायरेक्टर पी.जी. स्टडी प्रो. डॉ. हेमन्त कोठारी जी, डीन पेसिफिक आर्ट्स कॉलेज डॉ. सौरभ त्यागी, ऐसोसिऐट प्रोफेसर डॉ. मनोज दाधीच, इतिहास विभाग की प्रोफेसर एवं तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान की प्राचार्य डॉ. मिनाक्षी मेनारिया, वाणिज्य एवं प्रबन्धक विभाग पेसिफिक विश्वविद्यालय सहायक प्रोफेसर डॉ. सूर्य प्रकाश वैष्णव एवं विभाग के अन्य सदस्यों के सहयोग एवं प्रोत्साहन के बिना यह कार्य संभव नहीं था। अतः मैं उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

मैं अपने इस शोध कार्य के लिए मेरे परम पूज्य पिता श्री फतह सिंह जी एवं पूजनीय माता श्रीमती विमला देवी की सतत प्रेरणा व स्नेह के प्रति कृतज्ञ हूँ। इसी क्रम में मैं अपनी पत्नि प्रतिभा, पुत्री कीर्ति व गर्विता, पुत्र विनयराज एवं परिवार के अन्य सदस्यों में मेरे छोटे भ्राता अधिवक्ता नारायण सिंह, उनकी पत्नि श्रीमती रतन कंवर एवं भतीजी दिव्यांशी तथा भतीजा जयवर्धन सिंह को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ कि उनको सहयोग से यह शोध कार्य सम्पन्न हो सका। साथ ही मेरे गुरूजी डॉ. चन्द्रकान्त जी पुरोहित (मुंशी जी) सदस्य राजपुरोहित घराना मेवाड़ द्वारा उपलब्ध कराए गए ताम्रपत्र व शोध विषय सामग्री उपलब्ध करवाई इसके लिए में उनका हृदय से आभारी हूँ। इन सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ क्योंकि उनके प्रेरणा एवं आशीर्वाद के बिना यह कार्य सम्भव नहीं था।

मैं महाराणा मेवाड़ हिस्टोरिकल पब्लिकेशन ट्रस्ट के पुस्तकालय, राजस्थान राज्य अभिलेखागार उदयपुर शाखा, राजस्थान विद्यापीठ साहित्य संस्थान के निदेशक डॉ. जीवन सिंह खरकवाल, उप निदेशक डॉ. कुलशेखर व्यास एवं भूपाल नोबल्स के प्रताप शोध संस्थान, तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान चीरवा, शिवरती शोध संस्थान, साथ ही सरस्वती

पुस्तकालय गुलाब बाग और नगर निगम पुस्तकालय उदयपुर से शोध ग्रंथ एवं अन्य उपयोगी शोध सम्बन्धित सामग्री के लिए आभार व्यक्त करना मेरा नैतिक कर्त्तव्य है।

अन्त में मैं भाई श्री हितेष एवं मनीष बिकानेरिया (जूही कलेक्शन, उदयपुर) का आभार प्रकट करना चाहूँगा, जिन्होंने इस मूल्यवान शोध कार्य को पूर्ण दक्षता और सावधानी के साथ कम्प्यूटर टंकण करके इसे समयावधि पूर्णता प्रदान की है।

रामसिंह राठौड़
शोधार्थी

अध्याय प्रथम

मेवाड़ रियासत की भौगोलिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि

अध्याय प्रथम – मेवाड़ रियासत की भौगोलिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि

1.0 प्राकृतिक क्षेत्र

1.1 मेवाड़ की प्रमुख झीलें

1.2 सिंचाई साधन एवं अन्य जल स्त्रोत

1.3 जलवायु

1.4 मेवाड़ की भू–राजनैतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

1.5 मेवाड़ की राजधानियाँ एवं प्रशासनिक केन्द्र

1.6 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

1.7 सौर संप्रदाय

1.8 युग–युगीन मेवाड़ धरा

1.9 मेवाड़ का राजवंष

1.10 भारत में गुहिलोत वंश का विस्तार

1.11 मेवाड़ के गुहिल/सिसोदिया वंशज के अन्य राज्य

पाद टिप्पणियाँ

अध्याय – प्रथम

मेवाड़ रियासत की भौगोलिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि

1.0 प्राकृतिक क्षेत्र –

भौगोलिक व्यवस्था की दृष्टि से सम्पूर्ण मेवाड़ तीन प्राकृतिक क्षेत्रों में बांटा जा सकता है। 1) पर्वतीय भूमि, 2) पठारीय भूमि, 3) मैदानी भूमि

पर्वतीय भूमि –

अरावली पर्वत के छोटी और बड़ी श्रृंखलाऐं मेवाड़ प्रदेश के सम्पूर्ण क्षेत्रफल में बिखरी हुई है। मुख्यतः इन्हें दो भागों में विभक्त किया जाता है। यह श्रृंखलाऐं राज्य के क्षेत्रफल का 3/4 भाग के लगभग थी।

उत्तर–पश्चिमी अरावली श्रृंखला –

अजमेर की ओर से दीवेर के निकट मेवाड़ में प्रवेश करने वाली श्रृंखला पश्चिम – दक्षिण में मारवाड़ राज्य[1] के किनारे–किनारे रेंगती हुई मेवाड़ की दक्षिणी सीमा तक फैली हुई है। इसी श्रृंखला में अरावली की सर्वोच्च चोटी 'जरगा का पहाड़' स्थित है।[2] श्रेणी के पर्वतों में कई संकरे और तंग प्राकृतिक मार्ग स्थित है। जिन्हें स्थानीय भाषा में 'नाल' कहा जाता रहा है। इन नालों में देसूरी, केलवाड़ा और हाथी गुड़ा की नाल जोधपुर राज्य और मेवाड़ राज्य के मध्य आवागमन के लिए प्रयोग होती रही थी।

इसी भू–भाग से राज्य के केन्द्रिय प्रदेश को उपजाऊ बनाने वाली नदियाँ निकलती है। इस पर्वतीय क्षेत्र में अधिकतर राज्य के आदिवासी भीलों का निवास स्थान रहा है। यह जाति पर्वतीय उपज और कृषि[3] पर अपना जीवन निर्वाह करती आई है।

आलोच्यकाल में इस क्षेत्र का भू–प्रबन्ध खालसा एवं जागीर के प्रशासनांतर्गत था। इस क्षेत्र में उदयपुर, कुम्भलगढ़, सायरा, गोगुन्दा, झाड़ोल इत्यादि स्थान जन–जीवन के प्रमुख प्रशासनिक केन्द्र थे।

MAHARANA MEWAR
LIBRARY, UDAIPUR

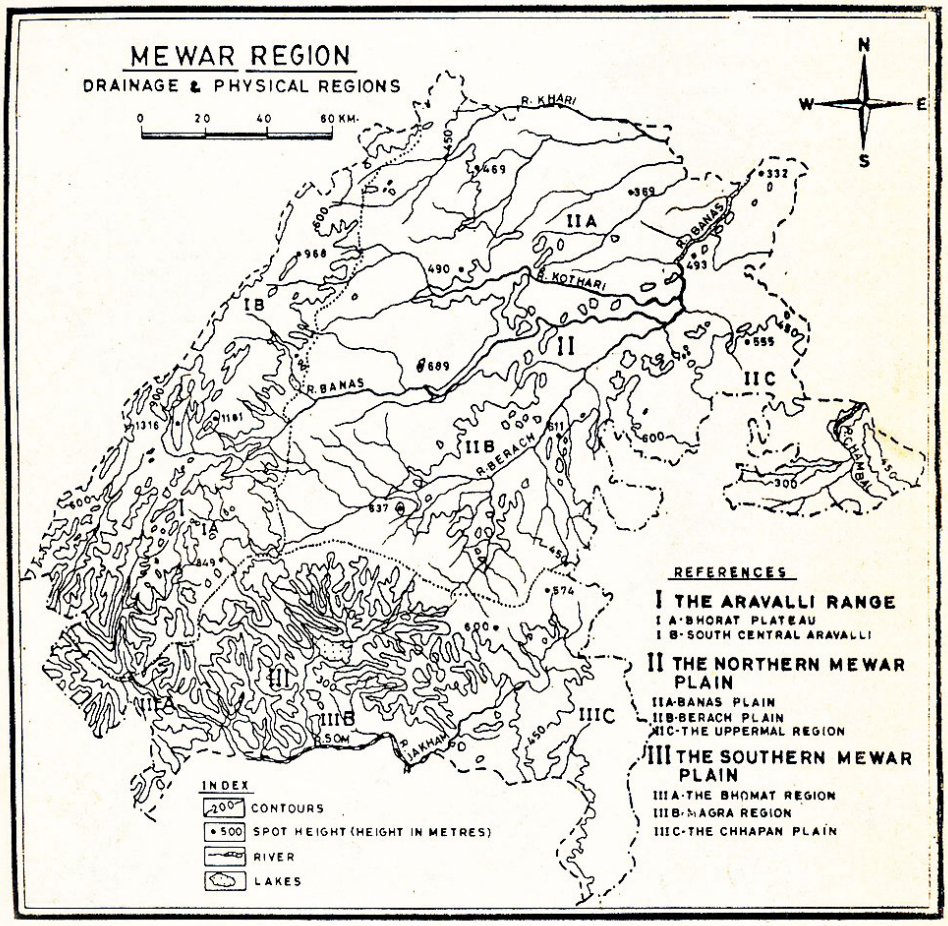

FIG.1.3

दक्षिणी अरावली श्रृंखला –

यह पर्वतीय भाग खान एवं खनिज तथा इमारती काष्ठ की दृष्टि से बहुत सम्पन्न रहा है।[4] इस भाग में राज्य के दक्षिणी भाग की ओर बहने वाली नदियों में गोमती, माही तथा वाकल नदी मुख्य है। यह प्रदेश पुनः मगरा, मेवल तथा छप्पन उपक्षेत्रों में विभक्त थे।[5] मेव, मीणा और भील

जैसे आदिवासियों की बस्तियों के साथ इस क्षेत्र में सलुम्बर, चावण्ड, जवास, ओगणा, पानरवा, जूड़ा ठिकानों के आस–पास अन्य जातियों की बस्तियाँ भी विद्यमान रही थी।

पठारीय भूमि –

मेवाड़ का पठारीय भाग चित्तौड़ से बेगूं, बिजौलिया, माण्डलगढ़, जहाजपुर, भैंसरोड़गढ़ से कोटा, बूंदी राज्यों[6] की सीमा तक फैला हुआ है। यह क्षेत्र स्थानीय बोलचाल में उपरमाल[7] के नाम से जाना जाता है। यह पठार उपज की दृष्टि से मेवाड़ का सम्पन्न भाग रहा है। इस क्षेत्र में आर्थिक लाभ वाली अफीम की खेती बहुतायत से होती रही है। क्षेत्रीय सम्पन्नता से आकर्षित होकर मराठों ने भी बार–बार इसी और अतिक्रमण किए थे। परन्तु यहाँ की भूमि की स्थिति के फलतः मराठों को यातायात सम्बन्धी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

मैदानी भूमि –

उत्तर में खारी नदी से कोठारी नदी के मध्य की प्राकृतिक भूमि तथा बनास नदी से दक्षिणी वन्य प्रदेश तक फैली भूमि मेवाड़ का मैदानी प्रदेश कहलाता है। इस क्षेत्र को मेवाड़ की भाषा में 'माल' कहा जाता है। मेवाड़ की घनी आबादी वाली बस्तियाँ इसी क्षेत्र में बसीयत है। इन बस्तियों में राजपूत, ब्राह्मण तथा महाजन जातियों के साथ कृषि व्यवसायी जातियों में जाट, जणवा, डांगी, धाकड़ आदि अधिक रहते हैं।[8] यही भूमि क्षेत्र मेवाड़ की आर्थिक सम्पन्नता का भी प्रतीक था।

मेवाड़ के पहाड़ एवं नदियाँ –

मेवाड़ भू–भाग अरावली पर्वत श्रृंखला में विभाजित है, अतः इस क्षेत्र में कई संकरी घाटियाँ, नदियाँ, नाले एवं ऊँचे–ऊँचे वनोच्छादित पर्वत हैं, जिनमें वन्य जीव ग्रामीणों संग सौहार्द्रपूर्ण आश्रय पाए हुए हैं। अर्वली, आड़ावाला या अरावली पर्वत श्रृंखला अजमेर और मेरवाड़ में होती हुई दिवेर के निकट मेवाड़ में प्रवेश करती है, जहाँ समुद्रतल से 2383 फीट ऊँची पर्वत श्रेणी है; नैर्ऋत्य कोण में मारवाड़ के किनारे–किनारे बढ़ती गई व कुंभलगढ़ पर इसकी ऊँचाई 3468 फीट तक पहुँच गई है एवं जरगा पहाड़ की ऊँचाई 4325 फीट है। ये पर्वत श्रेणियाँ राज्य के वायव्य कोण से लगाकर सारे पश्चिम तथा दक्षिण क्षेत्र में फैली हुई है। चित्तौड़ से देबारी तक मैदानी क्षेत्र है। दूसरी पर्वत श्रृंखला राज्य के ईशान कोण में देवली से शुरू होकर भीलवाड़ा तक चली गई है। तीसरी पर्वत श्रृंखला देवली के पास से निकलकर राज्य के पूर्व भाग में जहाजपुर, मांडलगढ़, बीजोल्यां, भैंसरोड़गढ़ व मैनाल जल–प्रपात होती हुई चित्तौड़ से दक्षिण तक गई हुई है जहाँ इसकी ऊँचाई 2000 फीट के करीब है। देबारी से लगाकर राज्य का सारा पश्चिम और दक्षिणी क्षेत्र पर्वताच्छादित पहाड़ियों से भरा पड़ा है जहाँ प्रचुर मात्रा में जल संसाधन एवं अल्प मात्रा में कृषि कार्य होते हैं।

दक्षिण–पश्चिमी बहाव वाली नदियाँ तथा पूर्वी बहाव वाली नदियाँ –

दक्षिणी पश्चिमी बहाव वाली नदियों में मेवाड़ तथा डूंगरपुर राज्य[9] की प्राकृतिक सीमा बनाने वाली सोम नदी मुख्य है। यह नदी मेवाड़ के दक्षिणी पश्चिमी भाग में बहती हुई माही नदी में विलीन हो जाती है।

दक्षिणी अरावली श्रृंखलाओं से निकल कर दक्षिण की ओर बहने वाली नदियों में गोमती, सरणी नामक नदियाँ इसकी सहायक नदियाँ रही है।[10]

पूर्वी बहाव की नदियों में मेवाड़ के उत्तरी भाग में स्थित दिवेर की पहाड़ियों से निकल देवगढ़ के पास बहती हुई खारी नदी अजमेर की सीमा पर बनास में विलीन हो जाती है। यह नदी अजमेर तथा मेवाड़ की प्राकृतिक सीमा निश्चित करने में सहायक थी। मेवाड़ के मध्य भागों को प्राकृतिक लाभ प्रदान करने वाली नदियों में कोठारी, बनास तथा बेड़च नदियाँ प्रमुख रही है। तीनों नदियाँ क्रमशः नन्दराय तथा माण्डलगढ़ के आस–पास संयुक्त होती हुई चम्बल में मिलती है। इन नदियों के तट पर राज्य के प्रसिद्ध तीर्थ व्यापारिक एवं प्रशासनिक केन्द्र रहे हैं। बनास की सहायक नदियों में चन्द्रभागा और बेड़च की सहायक नदियों में गम्भीरी तथा मेनाल प्रमुख रही है।

इस पर्वतीय प्रदेश में कई तंग घाटियाँ/नालें भी है जो यातायात की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है। इन घाटियों में महत्वपूर्ण घाटियाँ/नाले निम्न प्रकार से है :–

1) **जीलवाड़ा की नाल** – इसे पगल्या की नाल भी कहते हैं यह अनुमानतः 4 मील लम्बी एवं बहुत संकड़ी है तथा मारवाड़ से मेवाड़ में आने का रास्ता है।

2) **देसूरी की नाल** – इसे सोमेश्वर की नाल भी कहते हैं यह भी मारवाड़ से मेवाड़ में आने की राह है यह बहुत लम्बी व विकट है।

3) **हाथीगुड़ा की नाल** – यह देसूरी से दक्षिण में 5 मील की दूरी पर है। महाराणा कुम्भा के समय में इस नाल में हाथियों का डेरा रहता था, अतः इसका नाम हाथी गुड़ा नाल हो गया। इसी नाल के ऊपर

कुंभलगढ़ का किला स्थित है एवं केलवाड़ा कस्बा भी निकट ही है इसके मुँह पर एक मोरचेबन्द फाटक है जहाँ मेवाड़ के सिपाहियों का पहरा रहता था। इस नाल में कई वीरगति पाये शहीदों के स्मारक, चबूतरे स्थित हैं।

4) **भाणपुर की नाल** – यह घाणेराव के दक्षिण में लगभग 6 मील की दूरी पर स्थित है एवं यातायात के काम आती है।

5) **केवड़ा की नाल** – यह शहर के दक्षिण में स्थित है जो जयसमंद से आगे सलूम्बर के मार्ग पर है।

6) **सांड़ोल माता की नाल** – यह मेवाड़ के पश्चिम–दक्षिण भाग में झाड़ोल के पास अत्यंत संकड़ी एवं ऊँची घाटी गुजरात मार्ग पर स्थित है। आगे सोम का घाटा भी विकट है।

7) **चीरवा घाट** – यह शहर के उत्तर–पूर्व ईशान कोण में प्रवेश द्वारा की तरह है, घाट के मध्य में विशाल दरवाजा एवं चौकी बनी हुई है।

8) **गोरम घाट** – यह मारवाड़–मेवाड़ के मध्य सुरम्य पर्वतीय घाटी है, जिसकी वर्षाकाल में छटा बहुत ही सुन्दर होती है। रेल मार्ग यही से निकाला गया है।

मेवाड़ में वर्ष भर प्रवाहित होने वाली कोई नदी नहीं है। केवल बारहमासी नदी चम्बल है।

मेवाड़ के भैंसरोड़गढ़ के समीप 9 मील क्षेत्र में प्रवाहित होती है, अतः इसे मेवाड़ की नदी नहीं कहा जा सकता। भैंसरोड़गढ़ से 3 कि.मी.

दूर चूलिया नामक स्थान पर यह 60 फीट की ऊँचाई से गिरती है, वहाँ भँवरे पड़ते हैं, बड़ा ही मनोहारी दृश्य है।

1) **बनास** – मेवाड़ की सर्वाधिक महत्वपूर्ण नदी है। इसका उद्‌गम बैरों के मठ – कुम्भलगढ़ में है। नाथद्वारा होते हुए बीगोद के समीप इसमें दाहिनी ओर से बेड़च एवं मेनाली नदी भी मिल जाती है एवं त्रिवेणी संगम है। वहाँ से उतर की तरफ थोड़ी दूर पर नंदराय गाँव के पास कोठारी नदी भी इसमें जा मिलती है। आगे यह जहाजपुर की पहाड़ियों में होती हुई देवली के निकट 180 मील बहने के बाद टोंक जिले में होती हुई रामेश्वर तीर्थ/ग्वालियर समीप चम्बल में मिल जाती है।

2) **बेड़च** – यह बरसाती नदी जाम्बुड़िया की नाल उदयपुर के निकट से निकल कर शहर में होती हुई उदयसागर में गिरती है और आगे नाले के रूप में 130 मील सफल करती हुई बीगोद के समीप बनास में मिल जाती है।

3) **कोटेसरी** – इसको कोठारी भी कहते है यह अर्वली पर्वतश्रेणी से निकलकर दिवेर से दक्षिण में 90 मील का सफर करती हुई नंदराय से दो मील दूर बनास में जा मिलती है।

4) **खारी** – यह मेवाड़ की नदियों में सबसे उत्तर में है। यह दिवेर की पहाड़ियों से निकल कर देवगढ़ के पास होती हुई अजमेर की सीमा पर देवली से थोड़ी दूर पर बनास में मिलती है।

5) **जाखम** – यह नदी छोड़ी सादड़ी के निकट से निकल कर प्रतापगढ़ राज्य के निकट बहती हुई मेवाड़ राज्य के धरियावद गाँव के पास सोम नदी में मिलती है।

6) **वाकल** – यह गोगुन्दा के पश्चिम से निकलत कर 50 मील दक्षिण में ओगणा व मानपुर के पास बहती हुई उत्तर–पश्चिम में कोटड़ा–छावनी होती हुई, पश्चिम दिशा की ओर बहती हुई आगे ईडर राज्य में साबरमती नदी में मिलती है।

7) **सोम** – यह बीचाबेरा के पास राज्य के नैऋत्य कोण की पहाड़ियों से निकलकर डूंगरपुर राज्य की सीमा के पास बहती हुई, साबला में माही नदी में मिल जाती है जहाँ जाखम संगम पर त्रिवेणी संगम प्रसिद्ध तीर्थस्थल बेणेश्वर धाम स्थित है।

1.1 मेवाड़ की प्रमुख झीलें –

मेवाड़ क्षेत्र में हर 10–15 वर्गमील में एक झील या तालाब अवश्य दृष्टिगोचर होता है। वैसे मेवाड़ के 50 वर्गमील क्षेत्र में प्राकृतिक एवं मानव निर्मित विशाल झीलें स्थित है जो इसे झीलों की नगरी के रूप में विश्वविख्यात बनाए हुए है। मुख्य झीलों का विवरण निम्नानुसार है –

1) पीछोला –

यह झील वि.सं. की 15वीं शताब्दी में महाराणा लाखा/लक्ष सिंह के समय एक बनजारे ने बनवाई थी ऐसी मान्यता है। इनके निकट ही पीछोली गाँव होने के कारण भी इसका नाम पीछोला पड़ा, ऐसी किंवदंती है। इसकी लम्बाई ढाई मील एवं चौड़ाई डेढ़ मील है एवं 56 वर्गमील भूमि का जल इसमें आता है। इसके पूर्व किनारे की पहाड़ी पर मेवाड़ के प्रसिद्ध राजमहल बने हुए हैं। इसके किनारे–किनारे बड़ी दूर तक कहीं एक ओर तथा कहीं दोनों ओर सुन्दर घाट, मंदिर और हवेलियाँ बनी हैं। इसक बाँध 334 गज लम्बा है जिसके ऊपर के भाग की चौड़ाई 11 गज व नीचे उससे भी अधिक है। वर्षा में जब पहाड़ी पर हरियाली छा जाती है

एवं झीलें भर जाती हैं तो शोभा कश्मीर की सी दिखने लगती है। झील के मध्य में टापुओं पर जगमन्दिर एवं जगनिवास महल बने हुए हैं जो वर्तमान में ताज ग्रुप के 'लेक पेलेस' नामक होटल के नाम से सुशोभित है। वर्तमान में नौकायन सुविधा भ्रमण एवं होटल हेतु उपलब्ध है।

2) फतहसागर –

शहर से उत्तर के देवाली गाँव के पास एक छोटा तालाब था जिसे बाद में महाराणा फतहसिंह द्वारा विशाल रूप देकर इसका निर्माण करवाया गया। यह झील डेढ़ मील लम्बी एवं एक मील चौड़ी है, बाँध की लम्बाई 2800 फुट है। बाँध के पास यहाँ झील की गहराई 50 फीट है। बाँध के किनारे सुन्दर छतरिया एवं मध्य में संगमरमर का महल सुशोभित है। एक छोर नाला स्थित है जहाँ से चादर गिरती है बड़ी ही नयनाभिराम झील है। इसमें नौकायन तथा उद्यान रेस्टोरेण्ट की भी सुविधा है।

3) उदयसागर –

यह झील उदयपुर से 6 मील पूर्व में स्थित है। इसकी लम्बाई ढ़ाई मील, चौड़ाई 2 मील है एवं 185 वर्ग मील भूमि का जल इसमें आता है। यह झील वि.सं. 1616 से 1621 ई. 5 वर्ष में महाराणा उदयसिंह द्वारा बनवाई गई। इसका बाँध 180 फुट चौड़ा है। बाँध के सामने मेडी मंगरे पर महल बने हुए हैं, झील के आस–पास शिकार हेतु ओदिया बनी हुई है। पाल पर विष्णु मन्दिर तथा किनारे पर जल निकास हेतु नाला बना हुआ है। यह झील आहाड़ की नदी एवं पीछोला–फतहसागर के नाले के पानी से भरती है।

4) बड़ी का तालाब –

यह झील शहर से करीबन 10 किमी. दूरी पर 1650–80 में महाराणा राजसिंह द्वारा निर्मित बड़ी का तालाब है। जिसका क्षेत्रफल 1.55 स्क्वायर किमी. एवं लंबाई 180 मीटर एवं गहराई 18 मीटर है। इसमें पश्चिमी पहाड़ियों का जल आता है इसका उपयोग सिंचाई हेतु होता है। बड़ी ही सुन्दर एवं प्राकृतिक झील है।

5) राजसमंद –

यह झील उदयपुर नगर से 75 किलोमीटर उत्तर में कांकरोली नामक कस्बे पर स्थित है, जो वर्तमान में राजसमंद जिला का मुख्यालय है। इस झील की लम्बाई 4 मील एवं चौड़ाई पौने दो मील है एवं 195 वर्गमील भूमि का जल इसमें आता है। गोमती नदी इसका प्रमुख जल स्त्रोत है। वर्तमान में संगमरमर खदान क्षेत्र होने से इसके पानी में कमी आ गई है एवं यह अधिकतर खाली सा ही रहता है। इसका निर्माण वि.सं. 1718 से 1732 तक महाराणा राजसिंह[11] के शासनकाल में हुआ। यह मानव निर्मित बाँध धनुषाकार में तीन मील लंबा है। 200 गज लम्बी एवं 70 गज चौड़ी इसकी पाल है एवं इस पर पाँच तोरण द्वार एवं तीन सुन्दर कलात्मक संगमरमर की छतरियाँ बनी है। जिनमें ''राज प्रशस्ति महाकाव्य'' पाषाण की 25 बड़ी–बड़ी शिलाओं पर खुदा हुआ है। नौ चौकियाँ बनी हुई है। पहाड़ी पर जैन मन्दिर एवं महल बने हुए है।

6) जयसमंद –

इसका पुराना नाम ढ़ेबर तालाब था। वि.सं. 1744 से 1748 तक महाराणा जयसिंह[12] ने लाखों रूपये खर्च करके इसका निर्माण कराया। यह झील उदयपुर शहर से 32 मील दक्षिण पूर्व में स्थित है। इसमें 9

नदियाँ एवं 99 बरसाती नाले गिरते है। इसकी अधिकतम भराव क्षमता 9 मील लम्बाई में एवं चौड़ाई 6 मील से अधिक हो जाती है। इसके भीतर तीन टापू बने हैं। जिन पर आदिवासी लोग रहते हैं। इस टापू पर बाबा मगरा रिर्सोट हाल ही में बनाया गया है। नावों द्वारा इन टापुओं पर आना–जाना होता है। इसकी पाल 1000 फीट लंबी एवं 95 फीट ऊँची है। पाल पर छः सुन्दर छतरियाँ व दो मन्दिर बने हुए हैं, किनारे पर रूठी रानी का महल एवं हवा महल बने हुए हैं। यहाँ महाराणा ग्रीष्म ऋतु में बिराजते थे, आसपास घना जंगल एवं ओदियाँ बनी हुई है जहाँ शिकार होते थे। इसकी मछली सारे भारत में नाम से बिकती है एवं जल सिंचाई एवं उदयपुर शहर की पेय सुविधा प्रदान करता है।

1.2 सिंचाई साधन एवं अन्य जल स्त्रोत –

मेवाड़ राज्य के प्रत्येक गांव में कम से कम एक तालाब या तलाई अवश्य बनी हुई थी।[13] परन्तु इसमें से अधिकांश ग्रीष्म काल में सूख जाती रही है। वर्ष पर्यन्त जलप्लावित रहने वाले सरोवरों में उदयपुर का पिछोला, स्वरूपसागर, उदयसागर, जनासागर, मदार का तालाब, फतहसागर, कांकरोली का राजसमन्द, सलूम्बर से 15 किलोमीटर उत्तर में स्थित जयसमन्द, माण्डल, कपासन, सरदारगढ़, भीण्डर, कानोड़, बड़ी सादड़ी, आवरीमाता आदि हैं। इन सरोवरों के निर्माण के पृष्ठ में व्यक्तित्व प्रतिष्ठा के साथ लोक कल्याण की भावना भी निहीत थी। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पिछोला, उदयसागर, राजसमन्द तथा जयसमन्द से सिंचाई के लिए नहरें निकाली गई। किन्तु इनका उपयोग केवल राज्य तथा सार्वजनिक बागों की सिंचाई के लिए होता था।[14]

1.3 जलवायु –

मेवाड़ राज्य का मौसम न अधिक आर्द्र और न अधिक ठण्डा रहता है। विभिन्न रिकॉर्डों के अनुसार मेवाड़ का औसतन तापमान 23°C–44°C तथा औसतन वर्षा 28 मिली. – 42 मिली. अंकित की गई है।[15]

कई अवसरों पर जलवायु में अतिवृष्टि, अतिशीत, ओलावृष्टि तथा अतिग्रीष्म द्वारा अन्न, जल तथा तृण का अभाव उत्पन्न कर जनजीवन तथा पशुओं को हानि पहुँचाई थी। मध्यकालीन वर्षों में सन् 1712–1713, 1732–34, 1747, 1755, 1764, 1783 (चालीसा काल वि.सं. 1840), 1790–1793, 1799–1800, 1804–1805, 1810–1813, 1833–1834, 1837–1838, 1860, 1868–1870 (सत्ताइसा काल), 1873, 1877–1878, 1884–1885, 1888–1889, 1890–1891 एवं 1899–1900 ईस्वी (छप्पनिया काल) के अकाल वर्ष थे।[16]

1.4 मेवाड़ की भू–राजनैतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि –

प्राचीन समय में मेवाड़ क्षेत्र भिन्न–भिन्न समय में अलग–अलग नामों से जाना जाता है। ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी के आस–पास इसे शिविजनपद कहा जाता था।[17] आठवीं–दसवीं शताब्दी से वाग्वट्, मेदपाट और मेवाड़ नामक तीन नामों का उल्लेख प्राप्त होता है।[18] किन्तु मेवाड़ नामक नाम सर्वाधिक प्रचलित रहा है। 19वीं शताब्दी से इस प्रदेश को उदयपुर राज्य भी कहा जाने लगा था।[19] यदि यही मेवाड़ क्षेत्र वर्तमान समय में भारतीय गणतन्त्र के राजस्थान राज्य का उदयपुर संभाग कहलाता है एवं संभाग में सम्मिलित निम्नलिखित जिले हैं – यथा उदयपुर, चित्तौड़ तथा भीलवाड़ा प्राचीन मेवाड़ राज्य के मुख्य भाग थे।

शेष दो जिले डूंगरपुर तथा बांसवाड़ा मेवाड़ क्षेत्र की भौगोलिक सीमा में नहीं आते।

सौजन्य से – प्रो. अमरेन्द्रनाथ भट्टाचार्य, देवाली, उदयपुर

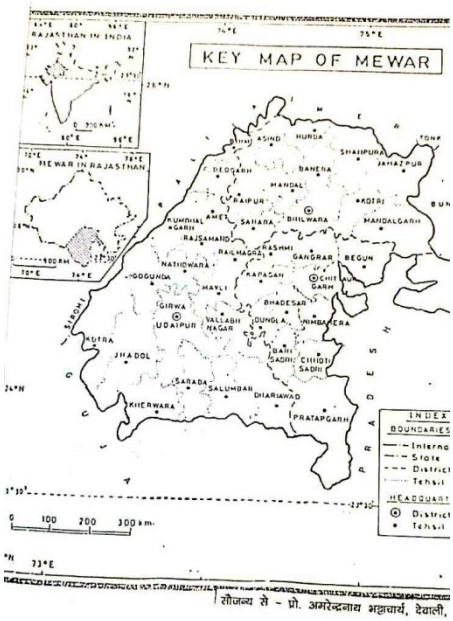

सौजन्य से – प्रो. अमरेन्द्रनाथ भट्टाचार्य, देवाली,

मेवाड़ क्षेत्र का क्षेत्रफल समयान्तर होने वाले बाह्य आक्रमणों तथा राजनैतिक परिस्थितियों के दबाव के फलस्वरूप घटता–बढ़ता रहा था। शौर्यवान शासकों के इसका विस्तार उत्तर–पूर्व में बयाना, दक्षिण में रेवा और माही कांठा, पश्चिम में पालनपुर तथा दक्षिणी पूर्व में मालवा (उत्तरी मध्यप्रदेश) तक विस्तृत रहा था।

राणा अमरसिंह प्रथम के समय में ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो गई थी कि मेवाड़ केवल चावण्ड के पहाड़ी प्रदेश तक सीमित रह गया। किन्तु राणा संग्राम सिंह द्वितीय (1717–1734 ई.) तक मेवाड़ की सीमा पूर्ण बढ़ती रही।[20] इस समय में मेवाड़ राज्य उत्तर–पूर्व में देवली, उत्तर में नसीराबाद के पास तक, पश्चिम–उत्तर तथा पश्चिम में जोधपुर, सिरोही, पश्चिम–दक्षिण में ईडर राज्य के कुछ भाग, दक्षिण में डूंगरपुर, बांसवाड़ा व प्रतापगढ़ राज्य, दक्षिण–पूर्व और दक्षिण में भानपुरा, बुंदी, कोटा तथा उत्तर–पूर्व में जयपुर राज्य की सीमा तक फैला हुआ था। किन्तु 18वीं

सदी के पूर्वार्द्ध से मेवाड़ पर मराठों के अतिक्रमण, चौथ तथा सहायता के बदले में प्रदेश के कई गांव एवं परगने अन्य राजपूत शासकों व मराठा सरदारों द्वारा अधिकृत कर लिए जाने के कारण परिस्थिति पुनः परिवर्तित होने लगी। इस दबाव के परिणामतः घनघौर वन के साथ ही प्रदेश को भूमि की हानि उठानी पड़ी। इसका विवरण निम्न प्रकार से प्राप्त है[21] –

क) राणा जगत सिंह द्वितीय (1734–1751 ई.) के राज्यकाल में राज्य के पूर्वी–पश्चिमी भाग में स्थित रामपुरा का परगना जयपुर शासक सवाई माधवसिंह प्रथम ने मल्हार राव होल्कर को दे दिया था। यह परगना राणा संग्राम सिंह द्वितीय ने 1729 ई. में माधवसिंह को जागीर के रूप में दिया था।[22] किन्तु जयपुर के उत्तराधिकार युद्ध में होल्कर की सामरिक सहायता के बदले में 8,56,985 रू. वार्षिक आय वाला यह परगने जिसका निश्चित क्षेत्रफल ज्ञात नहीं है।

ख) राणा जगतसिंह के पौत्र राणा राजसिंह द्वितीय (1754–1761 ई.) ने चम्बल नदी के निकट स्थित वनखेड़ा, वारड़ा, हिंगलाजगढ़, जामुनिया और बुहड़ 60 लाख रूपया वार्षिक उपज वाले परगने होल्कर के रहन रखे थे। किन्तु पूर्ण राशि चुकता नहीं होने के कारण 1763 ई. में होल्कर द्वारा इन पर स्थायी अधिकार कर लिया गया। इन परगनों का कृषि उत्पादन की दृष्टि से आर्थिक महत्व था। मेवाड़ राज्य को इन परगनों के चले जाने से भूमि के साथ–साथ आर्थिक लाभ से भी वंचित होना पड़ा था।

ग) राणा अरिसिंह (1761–1773 ई.) का शासन काल मेवाड़ में गृह युद्ध तथा जागीरदार – विद्रोह का युग रहा था। राणा ने अपना पक्ष प्रबल करने के लिए कोटा के मुसाहिब झाला जालिम सिंह को

चिताखेड़ी की जागीर तथा जोधपुर के शासक महाराणा विजय सिंह को राज्य के उत्तर–पश्चिम में स्थित 80 लाख रूपया वार्षिक उत्पादन का गोरवाड़ा परगना जागीर में प्रदान किया था। जो कभी मेवाड़ में पुनः सम्मिलित नहीं किया जा सका था।

घ) राणा हम्मीर सिंह के शासन काल (1773–1778 ई.) में माधव राव सिन्धिया ने 1774 ई. में 13,725 रू. वार्षिक उत्पादन के 48 गांव बेंगू जागीर से, 31,451 रू. वार्षिक उत्पादन के 36 गांव, सिंगोली परगने से तथा 3,651 रू. वार्षिक उत्पादन के 18 गांव, भीचोर परगने से लिए थे। इसी प्रकार अहिल्या बाई होल्कर ने भी इसी काल में 10,000 रू. वार्षिक आय वाले 29 गांवों के मोरवण तथा नन्दवास नामक दो परगने के साथ निम्बाहेड़ा को चौथ की बकाया राशि के बदले में स्थाई रूप से अधिकृत कर लिया था।

ड) राणा भीमसिंह के राज्य काल (1778–1828 ई.) में सिन्धिया ने फौज खर्च के बदले राज्य के दक्षिणी–पूर्व में जावद व जीरण नामक क्षेत्र 1788 ई. में और 1800 ई. में अपनी स्व. पत्नि गंगा बाई की छतरी बनाने तथा उसकी व्यवस्था व्यय के बदले में 10 गांव वाला गंगापुर का परगना अपने ग्वालियर राज्य के अन्तर्गत ले लिया था।[23] इस प्रकार फौज खर्च के बदले में झाला जालिम सिंह द्वारा 1802 ई. में जहाजपुर का परगना मेवाड़ से अलग कर दिया गया था जो कि ब्रिटिश–मेवाड़ संधि के पश्चात् तत्कालीन पोलिटिकल एजेन्ट कर्नल टॉड ने 1819 ई. में पुनः मेवाड़ को दिलवाया था।[24]

च) राणा स्वरूप सिंह के शासन (1842–1861 ई.) काल में राज्य की उत्तरी सीमा में रहने वाली मेर और मीणा नामक उपद्रवी जातियों

की व्यवस्था और सैनिक छावनी की आवश्यकता हेतु अंग्रेज सरकार ने मेवाड़ का मेरवाड़ा क्षेत्र स्थाई रूप में अजमेर रेजिडेन्सी के अधीन कर दिया था।

1845 ई. में मेवाड़ के मेरवाड़ा क्षेत्र को अजमेर में मिलाने के पश्चात् मेवाड़ राज्य की सीमा 23.49 से 25.28 उत्तर अक्षांश और 73.1 से 75.49 पूर्व देशान्तर के मध्य फंसी हुई थी। इसका क्षेत्रफल 12,691 वर्गमील अथवा 20,304 वर्ग किलोमीटर था।[25] इस परिधि के उत्तर में अजमेर – मेरवाड़ा व शाहपुरा (फूलिया), पश्चिम में जोधपुर व सिरोही, दक्षिण – पश्चिम में ईडर, दक्षिण में डूंगरपुर, बांसवाड़ा व प्रतापगढ़ राज्य, पूर्व में नीमच, निम्बाहेड़ा तथा कोटा बूंदी राज्य, उत्तर–पूर्व में जयपुर राज्य की सीमाओं से लगी हुई थी। राज्य के 10 गांवों का गंगापुर परगने का भू–भाग सिन्धिया के ग्वालियर राज्य में और 29 गांवों का नन्दवास परगने का क्षेत्र होल्कर के इन्दौर राज्य में स्थित था।[26]

मराठा लूट–खसोट, यातायात के साधनों के अभाव तथा राज्य की स्थिति के प्रति उदासीनता के कारण इन अकालों की भंयकरता का अनुमान निम्न उदाहरणों से प्रस्तुत किया जा सकता है –

1) राणा अरिसिंह के काल में एक ओर मराठों का अतिक्रमण दूसरी तरफ मेवाड़ के जागीरदारों का उपद्रव तथा इसके साथ ही अनावृष्टि से उत्पन्न अकाल सन् 1755 तथा 1764 ई. में लोग अपनी संतानों को बेचने लगे थे लेकिन खरीददार कोई नहीं था। और स्त्रियाँ उदर पूर्ति हेतु सम्पन्न व्यक्तियों का रखैल बनकर रहने लगी थी।[27]

2) 1828 ई. में जहाजपुर परगने में अंग्रेजी प्रशासन के दबाव से तंग आकर कृषक जंगलों में चले गए, राणा जवान सिंह ने ब्रिटिश सरकार की इस स्थिति से अवगत कराया कि यह स्थिति राज्य में अकाल उत्पन्न कर सकती है। किन्तु अंग्रेजी प्रशासन ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया।[28] इसके कारण 1833–34 ई. में अकाल पड़ा। इसमें असंख्य लोग खाद्यान्न के अभाव में मर गए तथा तृणाभाव के कारण पशुओं की संख्या में कमी हुई।[29]

3) 1868 ई. की अनावृष्टि तथा 1869 ई. के अतिवृष्टि से औसतन 200 व्यक्ति प्रतिदिन मरने लगे थे। लाशों को जलाने वाला कोई नहीं था। लड़के–लड़की का क्रय मूल्य 2 रू. प्रति प्राणी था।[30]

1880 ई. में भारत सरकार द्वारा प्रथम फेमिन कोर्ट बनाया गया। जो कि देसी राज्यों में 1883 ई. के पश्चात् लागू किया गया था।[31] इसके लागू होने के पश्चात् राज्य द्वारा ब्रिटिश सरकार की सहायता से अकाल राहत कार्यक्रम चलाए जाने लगे। किन्तु इससे बेगार की समस्या बराबर बनी रही थी।

ईंधन कार्य में प्रयुक्त किए जाने वाले वृक्षों में धावड़ा खाखरा (पलाश), रंग बनाने के लिए सेमल, हड़मत, हल्दू, हिंगोटा, पलाश आदि, पत्तल–दोने बनाने के लिए खाखरा के साथ सुगन्ध एवं श्रृंगार के लिए प्रयुक्त किए जाने वाले चन्दन और मेहन्दी, औषधी के लिए आंवला के पेड़–पौधे प्रकृति द्वारा ही फलते–फूलते थे।[32]

अरावली पर्वतमाला के पेटे में दबे पड़े विभिन्न प्रकार के खनिज तथा खानों ने भी प्रदेश को आर्थिक दृष्टि से प्रभावित किया था। प्राचीन काल में 19वीं सदी तक उदयपुर के दक्षिण की ओर वाली श्रृंखलाओं में

घोड़च, केवड़ा की नाल, उत्तर में देलवाड़ा तथा रेवाड़ (गंगापुर के पास) ताम्बे की खानों से ताम्बा निकाला जाता रहा था।[33] लोहे की खानों में सादड़ी, हमीरगढ़, अमरगढ़, उदयपुर के दक्षिण में स्थित वेदावत की नाल तथा लोहारिया की खान मुगल आक्रमण – काल में बन्द हो गई थी। किन्तु माण्डलगढ़ के पास वाली बिगोद, महूली, जहाजपुर के पास मनोहरपुरा और बड़ी सादड़ी के पास पारसोला नामक स्थानों पर 1836–94 ई. तक लोहा भी निकाला जाता रहा था।[34]

चांदी, सीसा और जस्ते की खानों में जावरा की खान (जावर माईन्स), दरीबा और पोटलाना प्रमुख रही थी। पोटलाना और दरीबा खान से 18वीं शताब्दी के शुरूआत तक सीसा उत्पादन होता था। जिसका वार्षिक उत्पादन मूल्य 80,000/– रू. के लगभग रहा था।[35] जावर की खान 1812–13 ई. के अकाल तक चालू थी। किन्तु मराठा, पिण्डारी अतिक्रमणों के कारण इसका उत्पादन शनै–शनै बंद हो गया। 1766 ई. के विवरण से ज्ञात होता है कि तत्काल इस खान द्वारा लगभग 2 लाख रू. वार्षिक का माल निकाला जाता था।[36] राणा शंभू सिंह के काल में अंग्रेज भूवैज्ञानिक प्रो. बुसल के निरीक्षण में इस खान की सफाई का कार्य किया गया था, किन्तु खुले बाजारों में इसके उत्पादन का अधिक लाभ नहीं देखते हुए मेवाड़ सरकार ने इसमें पूंजी लगाना व्यर्थ समझा। अतः यह कार्य बन्द कर दिया गया।[37]

पत्थर की खानों में चित्तौड़, घोसुण्डा, निम्बाहेड़ा, चांसदा, सैंती, ढीकली आदि स्थानों से मकान की छत की पट्टियाँ निकाली जाती थी। इन पत्थरों में काशिया खान और चित्तौड़ी पत्थर अच्छे माने जाते रहे हैं। ऋषभदेव (कालाजी) के आस–पास हरे पत्थरों की खानों तथा राजनगर के पास संगमरमर की खानों से उत्पादित माल का प्रयोग भी इमारतें बनवाने

में किया जाता था। मध्यकालीन इमारतों में जगविलास और खेरवाड़ा का गिरजाघर बनवाने में इन्हीं पत्थरों का उपयोग किया गया है।

देबारी तथा ढीकली से अन्न साफ करने की औखलियाँ, अनाज पिसने की घट्टियाँ (चक्की), मिर्च पीसने के सिलबट्टे के पत्थर प्राप्त होते थे। केवड़ा की नाल, राजनगर आदि स्थानों पर चूने के पत्थर की खानें विद्यमान थी। इसके पास ही चूने पकाने की भट्टियाँ[38] बनी हुई थी। जिनको वर्तमान समय में भी देखा जा सकता है।

खान–खनिज का मेवाड़ राज्य के औद्योगिक जीवन मकान निर्माण, जनजीवन में आभूषणों के प्रचलन आदि में देखा जा सकता था।[39] यह उद्योग मीणा एवं कालबेलियों के जीवन निर्वाह का मुख्य साधन था। मेवाड़ में उद्योग पतन का कारण ब्रिटिश सरकार का मेवाड़ को आर्थिक सहायता नहीं देना था, मेवाड़ सरकार का अत्यधिक विकास में रूचि रखना तथा खनिज–खपत के लिए आवश्यक स्त्रोतों का अभाव होना था इसलिए मेवाड़ प्रदेश खान–खनिज की दृष्टि से सम्पन्न होते हुए भी खनिज उद्योग में पिछड़ा रहा था।

1.5 मेवाड़ की राजधानियाँ एवं प्रशासनिक केन्द्र –

मेवाड़ क्षेत्र की परिवर्तित सीमाओं के अनुरूप क्षेत्र की राजधानियाँ भी समयानुसार बदलती रही थी। इतिहास प्रसिद्ध दुर्ग चित्तौड़ के उत्तर में डेढ़ मील दूर स्थित 'नगरी' नामक स्थान शिविजनपद की राजधानी था। जिसे मज्जिझिमिका के नाम से जाना जाता था।[40] बाप्पा रावल द्वारा शासन अधिकृत करने के समय से 13वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशक तक एकलिंगजी, देलवाड़ा, नागदाह, चीरवा और अघाटपुर (अथवा आहड़) मेवाड़ राज्य की राजधानी और प्रशासनिक केन्द्र रहे थे।[41] 14वीं शताब्दी से 15वीं

शताब्दी तक राजधानी के केन्द्र चित्तौड़गढ़ एवं कुम्भलगढ़ थे। किन्तु 16वीं सदी के मध्य में मुगल शासक अकबर द्वारा चित्तौड़ अधिकृत किए जाने के उपरान्त तत्कालीन राणा उदयसिंह ने पिछोली नामक गांव को अपनी राजधानी बनाया था। 17वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में उदयपुर नगर के नाम से प्रसिद्ध होने लगा था।[42] राणा प्रताप (1572–1597 ई.) तथा उसके पुत्र राणा अमरसिंह प्रथम (1597–1620 ई.) ने मेवाड़ मुगल संघर्ष काल में गोगुन्दा एवं चावण्ड नामक स्थानों पर संघर्षकालीन राजधानियाँ स्थापित की। किन्तु राणा कर्ण सिंह (1620–1628 ई.) के पश्चात् से मेवाड़ राज्य के संयुक्त राजस्थान में विलय होने तक[43] उदयपुर नगर ही प्रदेश की स्थाई राजधानी रहा। वर्तमान समय में उदयपुर नगर उदयपुर संभाग का प्रमुख मुख्यालय है।

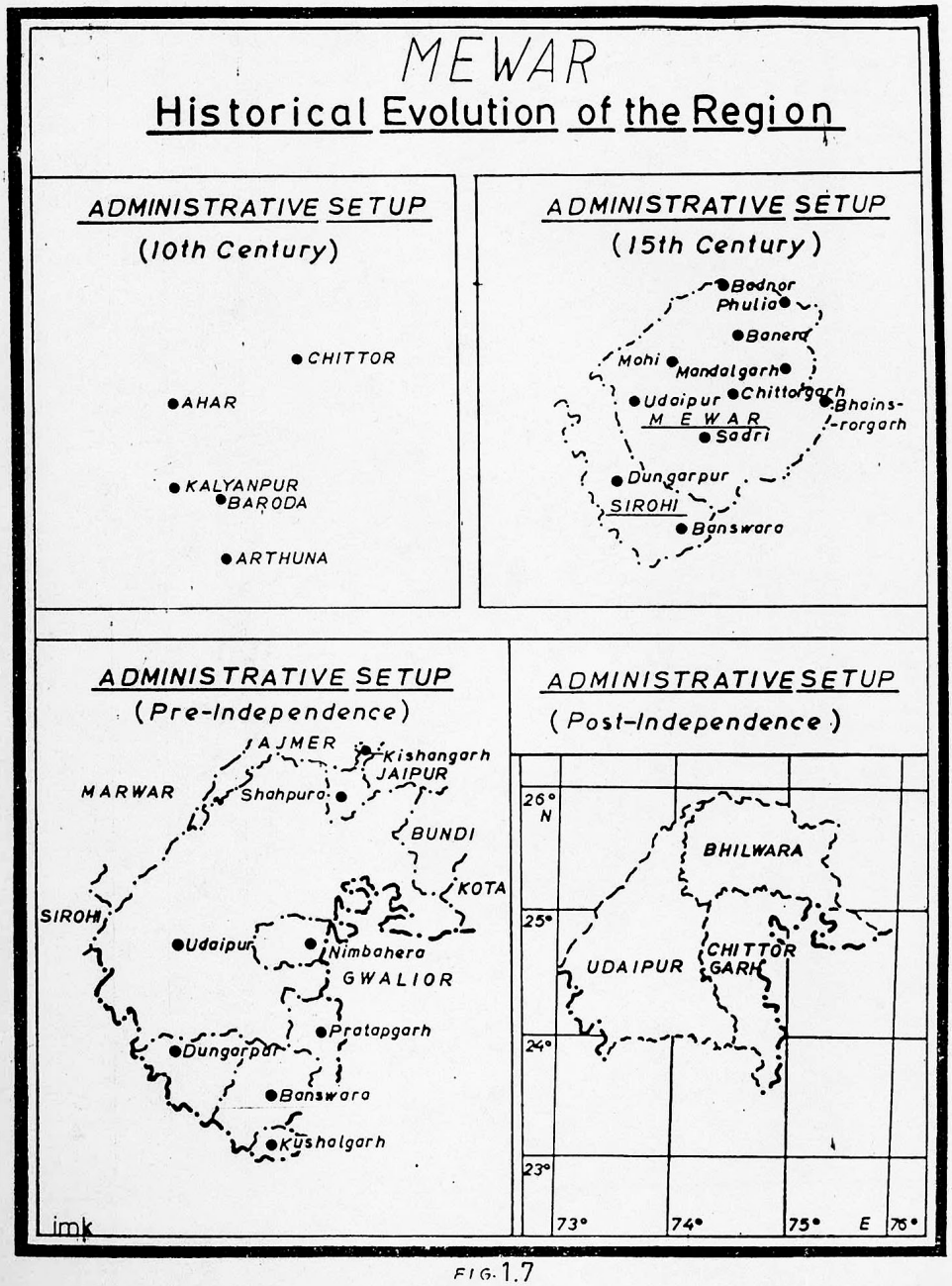

FIG. 1.7

विभिन्न प्रकार की भौगोलिकता लिए हुए मेवाड़ 16 जनपदों में विभाजित था अपने क्षेत्र की विशेषता से सम्पन्न यह जनपद निम्न अनुसार है :–

1) भीतरी गिर्वा – उदयपुर नगर परिषद् क्षेत्र करीबन 5 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र।

2) बाहरी गिर्वा – उदयपुर नगर से लगा करीबन 10–10 कि.मी. क्षेत्र गिर्वा तहसील।

3) भौमट – नगर के पश्चिम स्थित भू–भाग, पहाड़ी क्षेत्र झाड़ोल एवं गोगुन्दा तहसील।

4) झालावाड़ – झाड़ोल से आगे गुजरात से लगा क्षेत्र।

5) सैरा – कुम्भलगढ़ क्षेत्र।

6) नला – नाथद्वारा क्षेत्र।

7) सियाल पट्टी – राजसमंद रेलमगरा मैदानी क्षेत्र।

8) खैराड़ – माण्डलगढ़ भीलवाड़ा क्षेत्र।

9) उपरमाल – उत्तर–पूर्व चित्तौड़गढ़ तक का क्षेत्र।

10) मेवल – भीण्डर कानोड़ क्षेत्र।

11) छप्पनिया – सलुम्बर तहसील क्षेत्र।

12) वोराट – चारभुजा देसूरी क्षेत्र।

13) मगरा – दक्षिण में डूंगरपुर की सीमा से लगाकर पश्चिम में सिरोही की सीमा तक सारा प्रदेश पहाड़ी होने से 'मगरा' क्षेत्र कहलाता है जहाँ बहुधा भील आदि जनजातियों की बस्ती है।

14) कांठल – चित्तौड़गढ़ क्षेत्र।

15) वागड़ – दक्षिण–पश्चिम क्षेत्र खेरवाड़ा, आसपुर, डूंगरपुर क्षेत्र।

16) सिलोटी – देवगढ़ मदारिया पठारी क्षेत्र।

1.6 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि –

बापा रावल के मेवाड़ में आगमन के पहले भी यह धरा इतिहास में प्रसिद्ध रही है। इसका एक नाम मेदपाट रहा है। मेदनी अर्थात् पृथ्वी का पाट घर। प्राचीन काल में ग्रीक दिमित्रस के एक सेनानायक अपोला डोट्स ने आकर मध्यमिका नगरी पर घेरा ड़ाला जो कि मथुरा साकेत और पाटलीपुत्र की तरह महत्वपूर्ण थी। यहीं से वैष्णव धर्म में मन्दिर जैसे स्थापत्य का विकास हुआ और आंचलिक जनपदीय पंचमार्क सिक्कों की परम्परा देखने में आई। शिवियों के बाद मालव कुल व साल्व श्रेणियों के जनपद यहाँ फले–फुले।

पुरा महत्व के स्थलों में बागोर, ताम्र पाषाण स्थल आहाड़, कृषि उत्पादन का भण्डार कर्ता गिलुण्ड, लोह उत्पादक क्षेत्र ईसवाल व नठारा की पाल, कुम्हार शिल्पियों का गाँव बालाथल हैं। मेवाड़ का प्राचीन नगर मध्यमिका (नगरी) पुराने समय से ही विख्यात रहा हैं। जहाँ शिवि जनपद विद्यमान था। राजा शिवी ने यहीं कबूतर के बराबर अपना मांस काट कर बाज को खिलाया। यहाँ से भगवत धर्म, पान्चरात्र संप्रदाय का प्रचार–प्रसार हुआ। गंगोद्भव कुण्ड संभवतः शिवियों ने ही बनवाया था, बाद में गुहिल वंश मेवाड़ में आया।

मेवाड़ में जैन धर्म, बौद्ध धर्म, शैव व शाक्त संप्रदाय व सूर्य उपासक भी उस काल से प्रसिद्ध रहे। यहाँ कपड़े की कताई, बुनाई व छपाई प्रसिद्ध थी, रेशम विनीमय का केन्द्र भी मेवाड़ रहा। मध्यमिका बौद्ध धर्म के मध्यम निकाय का पर्याय भी हो सकता है।

पान्चरात्र मत में संकर्षण वासुदेव आदि चतुर्व्यूह के अंकन और पूजन की परंपरा का पल्लवन यहीं से प्रारम्भ हुआ। भगवान कृष्ण आबू पर्वत से

द्वारिका की ओर प्रस्थान करते हुए मध्य मार्ग में नगरी में ही बिराजे थे। मध्यमिका शिवि जनपद की राजधानी भी रही। शिवी राजा उदारता, करूणा और ईश्वर भक्ति के कारण उत्तम राजा था। मेवाड़ का पुराना नाम शिवि जनपद ही है। मेवाड़ में मध्य पूर्व काल में पाशुपत संप्रदाय का विकास हो चुका था। एकलिंग जी में लकुलीश मन्दिर 971 ई. में बना। पाशुपत धर्म के मन्दिर शौभागपुरा, आहाड़, कल्याणपुर, मेनाल, बिजोलिया, नान्देशमा एवं चित्तौड़गढ़ में बने हुए है। जावर, दरीबा और आगूचा में खानों के साथ देवी मन्दिर भी बने हुए हैं। इन स्थानों को गुप्त रखा गया था। नागदा में कुण्डेश्वर में सप्त मातृकाओं की मूर्तियाँ भी मिली है। चेचक से मुक्ति के लिए मेवाड़ में बहुत सारे शीतला माता के मन्दिर पुराने समय से है। मेवाड़ में उँटाला (वल्लभनगर) व कमोल गाँव एवं सागवाड़ा में शीतला माता के प्राचीनतम स्थानक बने हुए हैं।

1.7 सौर संप्रदाय –

चित्तौड़गढ़ के मौर्य शासक सूर्य पूजक थे, चित्तौड़ में सूर्य मंदिर भी बना हुआ है। रणकपुर में प्राचीन सूर्य मन्दिर बना हुआ है। ईसा पूर्व में नगरी एक औद्योगिक केन्द्र के रूप में था। मन्दसौर (श्रीमद्दश) के वस्त्र निर्माता नगरी चले आये। यहाँ बुनकर लोग कपड़ा बुनते थे। हर परिवार में कातने की परम्परा थी। घर–घर में रेटियें थे। यहाँ सालवी समाज भी बसा हुआ था। मेवाड़ लाट व दशपुर में बसे लोग रेशम का व्यापार भी करते थे। संभवतः चीन का रेशम भारत में आकर नगरी से रोम तक जाता था। नगरी की बुनाई, रंगाई एवं छपाई का सिलसिला कभी कमजोर नहीं हुआ। मेवाड़ में पूर्व काल में शिल्पी, मूर्तिकार, चित्रकार भी निवास करते थे। नगरी के वस्त्र पेशावर एवं तक्षशिला तक विख्यात थे।

मेवाड़ की सीमाऐं उपरमाल से लेकर आबू पर्वत तक व वागड़ से लेकर मेरवाड़ा तक विस्तृत थी। यह प्राकृतिक संपदा का धनी राज्य रहा। यह क्षेत्र पारियात्र और अरावली पर्वत माला के गोद में बसा हुआ है जहाँ विपुल खनिज भण्डार, उपजाऊ खेती व नदियों का जाल आज भी बिछा हुआ है। पहाड़ियों से प्राप्त होने वाले धातुओं में स्वर्ण, चाँदी, हरिताल, कसीस, सीसा, लोहा, हिंगलु, गंधक, अभ्रक, जस्ता प्रचुर मात्रा में विद्यमान था व आज भी खनन कार्य चल रहा है।

शुंगकाल में आहाड़ में यज्ञ पुष्करिणी बनी, जो आजकल गंगोद्भव कुण्ड के नाम से जाना जाता है। मालवों ने नान्दसा में यज्ञ किया और मालव सोम राजा प्रसिद्ध हुआ। गुहिलों का आगमन इस क्षेत्र में हर्ष के बाद हुआ। मेवाड़ में ही ध्रुव जी महाराज ने तपस्या की एवं नृसिंह भगवान का अवतार भी यहीं मेवाड़ में हुआ। बाल्मिकी आश्रम भी सीतामाता अभयारण में स्थित है जहाँ लव, कुश पले। रावण ने आवरगढ़ में शिव की उपासना की, पास ही बदराणा में हरि–हर अर्थात् शिव एवं विष्णु की संयुक्त मूर्ति मनोहर है। नागदा में जन्मेजय ने नाग यज्ञ किया, श्रृंगी ऋषि का आश्रम भी कुम्भलगढ़ के पास परसुराम जी में है। सीसारमा ग्राम (सीताराम ग्राम) बैद्यनाथ महादेव मंदिर सीतामाता द्वारा स्थापित है।

1.8 युग–युगीन मेवाड़ धरा –

चित्तौड़ के मौर्य शासक सूर्य पूजक थे।[44] यहाँ चित्तौड़ में सूर्य मन्दिर भी है। उनके पहले पाण्डवों की शरण स्थली भी मेवाड़ बना। बाँसवाड़ा व चित्तौड़ में पाण्डव रहे थे। रणकपुर में आज भी सूर्य मन्दिर स्थापित है। मेवाड़ के महाराणा सूर्यवंशी होने से उदयपुर में भी सूर्य मन्दिर स्थापित है। पुरा महत्व के स्थल मेवाड़ में धूलकोट, आहड़ में एक संग्रहालय भी

स्थापित हो चुका है। भक्तिमति मीराँ बाई व प्रताप के कारण मेवाड़ शक्ति एवं भक्ति की भूमि के नाम से जगत प्रसिद्ध है। पन्नाधाय का अपने पुत्र चन्दन का बलिदान विश्व में एक अनूठा उदाहरण है। चित्तौड़ के तीन साके जिनमें 55 हजार क्षत्राणियों ने धर्म रक्षार्थ जौहर स्नान कर आत्माहुति दी, मेवाड़ को विश्व प्रसिद्ध बनाया है। प्रतापी सम्राट कुंभा, जो वास्तव में भारत सम्राट कहलाये जाने चाहिए, का विचित्र युद्ध प्रेम, साहित्य प्रेम एवं संगीत प्रेम अनोखा था।

यहाँ संत मावजी, संत गवरी बाई, अष्टछाप के कवि, बावजी गुमान सिंह जी, चतुर सिंह जी एवं भुरी बाई ने इस धरा को पवित्र किया। मेवाड़ में भारतेन्दु हरीश चन्द्र, स्वामी दयानन्द सरस्वती, गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर, जयशंकर प्रसाद, अज्ञेय, करपात्री जी का आगमन हुआ व इस भूमि को नमन किया। स्वतन्त्रता संग्राम में भी यह क्षेत्र पीछे नहीं रहा – विजयसिंह पथिक, माणिक्यलाल वर्मा, गौरीशंकर उपाध्याय, मोहनलाल सुखाड़िया ने सतत संघर्ष किया। यहाँ के इतिहासकार – गौरीशंकर हीरालाल ओझा, नाथुदान महियारिया, केशर सिंह बारहठ, साहित्यकारों में लक्ष्मी कुमारी चुण्डावत, रामसिंह सोलंकी, डॉ. मोतीलाल मेनारिया, डॉ. प्रकाश आतुर, पं. विश्वेश्वर शर्मा, डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश', नन्द चतुर्वेदी ने भी प्रसिद्धी प्राप्त की। यहाँ कई पद्म विभुषण प्राप्त व्यक्तियों के कारण यह मेवाड़ प्रसिद्ध रहा। यहाँ के संगीतकार, नृत्यकारों ने इस क्षेत्र का नाम रोशन किया, यहाँ का निवासी सीधा–साधा, भला आदमी रहा और त्याग, बलिदान में सदैव ही अग्रणी रहा। इतिहास प्रसिद्ध हाड़ी रानी, गोरा–बादल, जयमल–पत्ता, कल्ला राठौड़ आदि ने अपनी बलि देकर इसका गौरव बढ़ाया।

1.9 मेवाड़ का राजवंश –

मेवाड़ का राजवंश गुहिल/सिसोदिया कहलाता है। सीसोदा की राणा शाखा के बाद महाराणा के नजदीकी सरदार राणावत कहलाये। चुण्डावतों के मेवाड़ में सबसे अधिक ठिकाने है और हो भी क्यों नहीं, चुण्डा तो मेवाड़ का भीष्म पितामह है। वह तो रघुकुल वंश में दूसरा भरत है। सारंगदेवोत चुण्डा के भाई की शाखा, वीरमदेवोत एवं शक्तावत प्रताप के भाइयों की शाखा एवं पूरावत प्रताप के पुत्र पूरा जी के नाम की शाखा है; और भी अनेक शाखाऐं है। चन्द्रावत, भाखरोत एवं कीतावत आदि।[45]

रघुवंश सिरमौर मेवाड़ का गुहिल वंश न केवल मेवाड़ में ही वरन् सारे भारत वर्ष में छाया रहा। विश्व में एक मात्र हिन्दु राष्ट्र नेपाल का वंश मेवाड़ से ही गया। महाराणा रतनसिंह का छोटा भाई कुम्भकर्ण मेवाड़ से कुमाऊ होता हुआ पाल्या में राज्य स्थापित कर नेपाल का राजा बना और शाह कहलाया। पृथ्वी नारायण शाह ने नेपाल जीता। इसी प्रकार मुगलों से टक्कर लेने वाला हिन्दुपत पादशाह शिवाजी का जग प्रसिद्ध वंश भी मेवाड़ से ही गया एवं सीसोद वंश ही है। राणा लक्ष्मण सिंह के पुत्र अजय सिंह ने अपने दोनों पुत्रों, सज्जन सिंह और क्षेम सिंह को मुंजा नाम के बालेचा का सिर काट कर नहीं ला पाने के कारण मेवाड़ छोड़ने को कहा। वे मेवाड़ छोड़कर दक्षिण की ओर चल दिये। इन्हीं के वंशज राणा भैरव सिंह (भौंसला) हुए जिन्होंने मुधोल पर अधिकार किया, इन्हीं भौंसले के वंश में उग्रसेन हुए जिनके दो पुत्र कर्णसिंह एवं शुभकर्ण हुए, कर्ण के वंशज घोरपड़े कहलाये एवं शुभकर्ण के वंशज में शिवाजी हुए। इस प्रकार महाराष्ट्र में मुधोल (भौंसले) रायबाग बैन के (घोरपड़े) शुभकर्ण के वंश में कोल्हापुर में शिवाजी तथा सावन्त वाड़ी में सोम सामन्त कहलाये। ऐसे ही

नागपुर एवं बराट में तथा मद्रास प्रांत में तंजौर एवं विजीयागर में शिवाजी के भाई बेका जी एवं सया जी ने राज्य स्थापित किए।

मेवाड़ के गुहिल वंश ने मध्य प्रदेश में बड़वानी, अली राजपुर, आवासगढ़ एवं रामपुरा में राज्य स्थापित किए। गुजरात सौराष्ट्र (बल्लभी), भावनगर, पालीताणा, लाठी एवं राजपीपला में गुहिल वंश का राज था। मारवाड़ में खेड़, वीजापुर, नाणा, बैड़ा एवं झालामण्ड ठिकाने सिसोदियों के हैं। अजमेर में सावर पिपलाज तथा मध्य प्रदेश में अनेक शक्तावतों व चुण्डावतों के ठिकाने हैं।

मेवाड़ का गहलोत वंश न केवल राजस्थान में ही नहीं वरन् सारे हिन्दुस्तान व उसके बाहर भी फैला हुआ है। इस वंश की शाखाऐं उदयपुर, प्रतापगढ़, डूंगरपुर, बाँसवाड़ा, शाहपुरा, भावनगर, लाठी, राजपीपला, बड़वानी, धर्मपुर, नेपाल, अली राजपुर, विजयनगर आदि स्थानों पर फैली हुई है। इनके अनेक नाम इतिहास में प्रसिद्ध है। गहलोत, चुण्डावत, सांगावत, सारंगदेवोत, शक्तावत, चन्द्रावत, राणावत, भाणावत, भौंसले, मधोल, मांगलिया, लुणावत, पीपाड़ा, केलपुरा (केलवा), भटेवरा, गोहिल, गौरखा, खुसा, थापा, रूद्रोत, भाखरोत, बाछल, दोवड़, तोड़ा, रंगिया, गौधड़ा, बगरोचा, गटचा, जोरा, ओजाइड़ा, गौतमा, मंगरोपा आदि अनेक शाखा प्रशाखाऐं हैं।

मेवाड़ के सूर्यवंशी महाराणा का गौत्र वैजपायन है, वैद युजर्वेद, शाखा माध्यन्दिनी, इष्टदेव एकलिंग नाथ, कुलदेवी बायणमाता, ऋषि हारित, झण्डा पंचरंगा, राजधानी अयोध्या, शाखाऐं रावल एवं राणा, गुरू वशिष्ठ; उप वेद धनुर्वेद, सूत्र कात्यायन शिखा दाहिनी, पद दाहिनी, वृक्ष वटवृक्ष, निशान रणजोत; नदी सरयू, नंगाड़ा वैरीशाल, निकास श्री वस्ती,

आदि पुरूष – विष्णु; बाजा – रण कांकण, सिंहासन बापा रावल का, डेग भुंजाई, घोड़ा चेटक, ढ़ोल बारू, कटार मुगलाई, गढ़ चित्तौड़गढ़, वाक्य – जो दृढ़ राखे धर्म ने, तेही राखे करतार, राज्य चिन्ह – एक तरफ क्षत्रिय, दूसरी तरफ भीलू राणा, बीच में चित्तौड़गढ़, विभूतियाँ – क्षत्रिय कुल कमल दिवाकर, हिन्दुआ सूरज, हिन्दुपत, राजगुरू, अन्नम, शिश वस्त्र – पाग, चारणी माता, आँवरी माता, पूजा – खेजड़ी पूजन एवं खड़ग पूजन, नृत्य – गूमर, सवारी गणगौर की, वाद्य यन्त्र – बांक्यो, तोरण पर बोर की ड़ाली; द्वितीय मातेश्वरी – नागणेच्या माता, ओख – अष्टमी की पूजा, वर्जित वस्त्र – अधरंग नहीं पहनते हैं, गर्व – दिल्ली दरबार में नहीं जाना, धाय माँ – गुजरी, प्रधाना – महाजन का, वर्गीकरण – 16 उमराव, 32 सरदार, गोल के सरदार, 17वाँ उमराव – मुसलमान।

मेवाड़ को वीर भूमि बनाने का श्रेय केवल क्षत्रिय जाति को ही नहीं, और जाति के लोगों ने भी अनुठे उदाहरण पेश किये हैं। सर्वप्रथम हारित ऋषि तथा वह ब्राह्मण परिवार जिसने गुहिल एवं बापा का पालन पोषण किया। शक्ति सिंह एवं प्रताप के बीच युद्ध को कटार खा कर बचाने वाला ब्राह्मण परिवार, यहाँ का कुल गुरू एकलिंग जी के गुसाई जी, कथा भट्ट, ज्योतिषी परिवार, पुरोहित, राज्य वैद्य, चारों धामों के गुसाई महाराज खड़ग स्थापना में बैठने वाले सवीनाखेड़ा के गुसाई और मॉडल के नाथ पंथी साधु। मेवाड़ में ब्राह्मणों की वहीं इज्जत थी जो राजा राम के समय में गुरू वशिष्ठ जी की थी। गुजरों में पन्ना धाय, चारणों में बरबड़ी जी, महाजनों में चील मेहता, आशा शाह देवपुरा, भामाशाह एवं उनका भाई, मेवाड़ में प्रधाना अधिकतर महाजनों के हाथों में ही रहा और यही व्यवस्था छोटे रूप में सभी ठिकानों में भी कायम रही।

इसी प्रकार और जातियों के प्रसिद्ध घराने भी कालजयी हो गये। उनमें प्रसिद्ध हैं भामाशाह व उनके भाई ताराचन्द का घराना, सिंघवी दयाल दास का घराना, पंचोली बिहारी दास का घराना, बड़वा अमर चन्द का घराना, मेहता अगर चन्द का घराना, मेहता राम सिंह का घराना, सेठ जोरावर मल बापना का घराना, पुरोहित राम जी का घराना, कोठारी केसरी सिंह का घराना, कविराज श्यामल दास का घराना, सहीवाले अर्जुन सिंह का घराना, मेहता भोपाल सिंह का घराना आदि अनेक घराने, मेवाड़ के महाराणाओं की पृथक–पृथक समय में सेवा करते रहे, तभी विश्व में 1400 वर्षों तक मेवाड़ पर महाराणाओं का एक छत्र राज्य कायम रहा।

1.10 भारत में गुहिलोत वंश का विस्तार[46] –

1) **नेपाल का गोरखा वंश** – बापा रावल के वंशज, हमीरगढ़ से राणा हमीर के तीन भाई निकले एक ने कोपाचिट परगने में करचूनिया राज्य बनाया, दूसरा नेपाल गया और गौरखपल्ली पर अधिकार कर बूखल को राजधानी बनाया व तीसरा बंगाल में गया नेपाल की वंशावली पूर्व में दी जा चुकी है। गोरखा की खुसा एवं थापा शाखाऐं हैं। सुमेरसिंह चित्तौड़ के पुत्र कुंभकर्ण कुमायूँ में रहे, इन्हीं के वंशज पृथ्वी नारायण शाह ने वि.सं. 1828 में नेपाल क्षेत्र पर अधिकार कर काठमाण्डू को अपनी राजधानी बनाई।

2) **हिमाचल प्रदेश में** – जमराल, बलवान, बजियाल, रसियाल एवं बालछ क्षेत्र में।

3) **गुजरात में** – सौराष्ट्र, भावनगर, पालीताणा, लाठी, राज पीपला, वला, धरमपुर, राणा कर्णसिंह के पुत्र राहप के वंशज रामशाह ने

नया परगना बना रामनगर बसाया। उसके वंशज रामदेव व धरमदेव हुए उन्होंने धरमपुर बसाया।

4) **मध्य प्रदेश में** – धनुक गुहिलोत का 20वां वंशधर मालसिंह हुआ। उसके वंशज बडवानी के शासक हुए। अलीराजपुरा, आवासगढ़ एवं रामपुर में सीसोदा के राणा के वंशज भीमसिंह के पुत्र चन्द्रसिंह के वंशज चन्द्रावत कहलाते हैं।

5) **बिहार में** – देवगढ़ से गुहिलोत बिहार, गया पहुँच गए वहाँ मडियार राज्य स्थापित कर मडियार कहलाने लगे।

6) **महाराष्ट्र में** – मुधोल – राणा लक्ष्मण सिंह के 8वें पुत्र अजयसिंह के दो पुत्र सज्जनसिंह व क्षेमसिंह मेवाड़ छोड़कर चले गये। इनके पुत्र दिलीपसिंह को 10 गाँव ब्रह्मनी में जफरावा/दसनगंगू ने दिये। इनके सिद्धजीव व भैरवसिंह हुए एवं भौंसले कहलाए। इनके वंश में शुभकर्ण के छत्रपति शिवाजी हुए व कर्णसिंह के पुत्र भीमसिंह को सुल्तान ने ''राजा घोरपड़े बहादुर'' की उपाधि प्रदान की, इनके वंशज मालोजी को विजयपुर के निकट 30 गाँव कर्नाटक में मिले। कोल्हापुर – ताराबाई अपने पुत्र शंभा व शिवा को लेकर कोल्हापुर चली गई व शिवाजी द्वितीय कोल्हापुर का शासक बना।

7) **सावंतवाड़ी** – भौंसले फोड़ सावंत के पुत्र खेम सावंत ने दक्षिण में स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया। यहाँ के शासक सर देसाई कहलाते हैं।

8) **नागपुर** – शिवाजी के परदादा के भाई परसोजी के पुत्र सुधोजी निजामशाही में नौकर थे, इनके पुत्र कानोजी ने गौड़ों पर अधिकार

किया और नागपुर के पास अपनी राजधानी बनाई। **रायबाग** – भीमसिंह के वंशज है तथा बरार में राघो जी के वंशज हैं।

9) **तमिलनाडु में** – तंजोर में भौंसलों का राज्य था। शिवाजी के भाई बेकाजी ने इसे अधिकार में लिया उनके वंशज बादशाह जी, शरफजी, तुकोजी, येकोजी व सयाजी हुए। विजयनगर में भी शिवाजी के भाई बेकाजी के वंशज विजय राम राज का राज्य रहा।

1.11 मेवाड़ के गुहिल/सिसोदिया वंशज के अन्य राज्य –

1) **डूंगरपुर** – मेवाड़ के रावल सामंतसिंह के कितू चौहान ने राज्य छीना व इनके पुत्र जयंतसिंह ने बागड़ पर अधिकार किया। इनकी 7वीं पीढ़ी में भूचण्ड हुए उनके पुत्र डूंगरसिंह ने डूंगरपुर बसाया।

2) **बाँसवाड़ा** – आहड़िया गुहिलोतों की दूसरी रियासत बाँसवाड़ा हुई। डूंगरपुर महरावल के दो पुत्र पृथ्वीराज व जगमाल थे। वि.सं. 1577 में पृथ्वीराज को डूंगरपुर व जगमाल को बाँसवाड़ा दिया।

3) **प्रतापगढ़** – राणा मोकल के पुत्र खेमकर्ण को राणा कुंभा ने आनाकानी की तो उन्होंने बड़ी सादड़ी पर अधिकार किया। इनके पुत्र सूर्यमल व रायमल हुए जिनकी आपस में नहीं बनी। गुजरात के सुल्तान बहादुर शाह ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया। सूर्यमल पुत्र बाघसिंह पाण्डल पोल पर युद्ध में काम आये व इस घटना के बाद प्रतापगढ़ के महारावल देवलिय दीवान कहलाये, आगे चलकर प्रतापसिंह ने प्रतापगढ़ बसाया।

4) **शाहपुरा राज्य** – मेवाड़ महाराणा अमरसिंह प्रथम के पुत्र पूरणमल को खैराड़ की जागीर मिली। उसके तीन पुत्र सुजानसिंह, भावसिंह

व वीरमदेव हुए। भावसिंह को नालेरा, वीरमदेव शाहजहा की सेवा में चले गये, महाराणा जगतसिंह प्रथम से नाराज होकर बड़ा भाई सुजानसिंह भी शाहजहा के पास चले गये। शाहजहा ने 1688 में फूलिये का परगना दिया जहाँ इन्होंने शाहजहा के नाम से शाहपुरा बसाया।

सुदुर पूर्व – इतिहासकारों ने बड़ौदा नरेश के समक्ष एक रिसर्च पेपर प्रस्तुत किया जिसमें जापान का सम्राट भी रघुवंश का बताया गया है। कुछ मैत्रेय वंशी जावा, सुमात्रा, बोरनिया, मलेसिया, इण्डोनेसिया, मलयद्वीप में जा बसे और वहाँ अपना राज्य वंश चलाया। भगवान बुद्ध, महावीर एवं 24 तीर्थंकर क्षत्रिय वंश के ही थे।

कर्नल जेम्स टॉड के अनुसार मेवाड़ राजवंश[47] निम्न नामों से जाना जाता है –

1) गुहिलोत, 2) असिल (बापा के सन्तान असील बापावत का सौराष्ट्र में आलीसगढ़ है), 3) मांगलिया (खुमाण के पुत्र से), 4) भटनेरा (भर्तभट के वंश से), 5) अहड़िया (आहिड़ राजधानी से), 6) चन्द्रावत (भीमसिंह के पुत्र चन्द्र से), 7) सीसोदिया (माहप, राहप के सिसोदे से), 8) पीपाड़ा, 9) अजबरिया, 10) कुडेचा, 11) धोराणा, 12) भीमला, 13) हुल, 14) गोधा, 15) सोहाड़िया, 16) कोठ्करा, 17) आसरेचा, 18) नादोड़या, 19) ओड़लिया, 20) पालरा, 21) कुचेरा, 22) बुसा, 23) केलवा, 24) मंगरोपा, 25) दुवासा, 26) मुधरायता, 27) आसायच, 28) डाहलिया, 29) मोटसिरा, 30) गोदारा, 31) मोर, 32) टीवाणा, 33) माहिल, 34) तिबड़किया, 35) बूढ़ीबला, 36) बूंटिया, 37) गोतमा, 38) आवा, 39) खेरूज्या, 40) करथ, 41) आलू, 42) जोरा, 43) ओवाइड़ा, 44) धुढ्या, 45) बोवा, 46) पाहा

उदल, 47) भारज्या, 48) परथीराज गेलोत, 49) आसकरण गेलोत, 50) ताहड़ गेलोत, 51) भड़ेचा, 52) नाज्या, 53) ओजाकर, 54) गटका, 55) गोहल – रावल बापा के पाँच पुत्रों की सन्तान। गोहलवाड़ा इस शाखा का है, भावनगर लाठी व पालीताणा इनके नगर है लाठिया गोहिल, उनी गोहिल, गोचर गोहिल, 56) मूंदोत, 57) दौवड़, 58) बील्याजक, 59) तोड़ा, 60) दुदेसिया, 61) सादवा, 62) रंगिया, 63) पानसिया, 64) बाणगोधा, 65) गोधड़ा, 66) केत गोयल, 67) बगरोया, 68) कूंपा, 69) धोरणिया, 70) नादोत, 71) सोब, 72) बोढ़ा, 73) कोढ़ा, 74) करा, 75) धालरिया, 76) दो संधिया (सन्दर्भ वीर विनोद से)

पाद टिप्पणियाँ –

1) आधुनिक जोधपुर संभाग

2) गोगुन्दा नामक स्थान से 25 किलोमीटर उत्तर में स्थित ये चोटी समुद्र तल से 4315 फीट ऊँची है।

3) जंगल के सुखे वृक्षों व घास को जला कर खाद बनाना तथा इसी में बीज छिटक कर वर्षा में उगने देना, को वासरा (या वत्सर) खेती कहा जाता रहा है, उदयपुर इतिहास, भाग 2, पृ. 9, गहलोत – राजस्थान इतिहास, पृ. 135

4) दृष्टव्य – खान एवं खनिज अनुच्छेद।

5) उदयपुर के आस–पास वाला क्षेत्र मगरा, वाकल नदी के पास वाला भोमट और गोमती नदी के पूर्वी भाग में मेवल तथा गोमती से माही नदी के मध्य का क्षेत्र छप्पन कहलाता रहा है।

6) आधुनिक कोटा सम्भाग की पश्चिमी सीमा।

7) माल मैदान तथा ऊपर पहाड़ी भाग।

8) कैप्टन सी. ई. यटे, गजेटियर ऑफ मेवाड़, भाग 3, पृ. 44

9) आधुनिक डूंगरपुर जिला

10) मेवाड़ रेजिडेन्सी, भाग 2, पृ. 8, उदयपुर इतिहास, भाग 2, पृ. 4–5

11) Let. Conl. Pintey A.F. (Regident of Mewar 1900–1906 A.D.), History of Mewar, Appendix K, Page XXXV

12) Let. Conl. Pintey A.F. (Regident of Mewar 1900–1906 A.D.), History of Mewar, Appendix K, Page XXXVI

13) याटे, मेवाड़ भाग 3, पृ. 18

14) सन् 1884 ई. में राज्य में प्रथम सिंचाई नहर राजसमन्द से निकाली गई। एडमिनिस्ट्रेटीव रिपोर्ट ऑफ मेवाड़ स्टेट, सन् 1884–85, 1887–88, 1890–91, गहलोत, राजस्थान इतिहास, पृ. 133

15) मेवाड़ प्रदेश में सर्वाधिक ठण्डक जनवरी माह (59–61 4 न्यून तापमान) में, गर्मी मई माह (89–89 6 अधिक तापमान) में तथा अधिक वर्षा जुलाई–अगस्त माह (10–85–7) रहती है – उपरोक्त, मेवाड़ रेजिडेन्सी, पृ. 11

16) एनाल्स, भाग 1, पृ. 437–497

17) डॉ. गौरीशंकर हीराचन्द औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग 1, पृ. 1

18) उपरोक्त, पृ. 1, जगदीश सिंह गहलोत, राजपुताने का इतिहास, पृ. 130, डॉ. चन्द्रशेखर पुरोहित, संस्कृत साहित्य का मेवाड़ को योगदान (अ.प्र.शो.), पृ. 5

19) मेवाड़ रेजिडेन्सी तथा एजेन्सी रिकॉर्ड में इसे उदयपुर राज्य कहा जाता था।

20) डॉ. गोपीनाथ शर्मा, मेवाड़–मुगल सम्बन्ध (हिन्दी), पृ. 1

21) इस विवरण के आधार हेतु ग्रंथ दृष्टव्य – अ) कर्नल टॉड – एनाल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान, भाग 1, ब) ब्रुक्स –

हिस्ट्री ऑफ मेवाड़, स) कविराजा श्यामलदास – वीर विनोद, भाग 1–4, द) पं. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा – उदयपुर राज्य का इतिहास, य) डॉ. के.एस. गुप्ता – मेवाड़ एवं मराठा रिलेशन्स, र) डॉ. आर. पी. शास्त्री – झाला जालिम सिंह

22) माधव सिंह, राणा जगतसिंह द्वितीय का दोहिता तथा सवाई जयसिंह का द्वितीय पुत्र था। राणा संग्राम सिंह ने रामपुरा का परगना अपने भाणेज के रोटी खर्च हेतु जागीर में दिया था, पृ. 980, 1241

23) एनाल्स भाग 1, पृ. 505, वरदा वर्ण 18, अंक 2, पृ. 1–11

24) डॉ. मथुरा लाल शर्मा, कोटा राज्य का इतिहास, भाग 2, पृ. 505

25) मेजर ई. डी. ....., मेवाड़ रेजिडेन्सी, भाग 2, पृ. 5, गहलोत, राजस्थान इतिहास, पृ. 130

26) वी. वि., पृ. 100–101, औझा, उदयपुर इतिहास, भाग 1, पृ. 2

27) एस. एस. श्रीवास्तव, उपरोक्त

28) राणा जवानसिंह का एजेन्ट टू गवर्नर जनरल – फॉरेन – पॉलिटिकल कन्सलटेशन – 2 मई, 9 मई 1828, भाग 1–2

29) रिपोर्ट ऑफ दी फेमिन इन नेटिव स्टेट्स ऑफ राजपूताना, 1899–1900 ई., पृ. 9

30) रिपोर्ट ऑफ दी पॉलिटिकल एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ राजपूताना फॉर, 1868–1869 ई., पृ. 15, मेवाड़ एजेन्सी रिपोर्ट, 1869, पृ. 49–50, वी. वी. पृ. 2083–2084

31) एल. पी. माथुर – रिपन, पृ. 136

32) मेवाड़ रेजिडेन्सी, उपरोक्त, सेन्सेज ऑफ इण्डिया, 1961, खण्ड 14, राजस्थान भाग 6 (वी.सी.डी.) धावड़ा का तना डेंगचा व घोड़ी बनाने के काम में लिया जाता रहा है। जो कि मकान की छवाई के काम आता है।

33) वी. वी., पृ. 179, मेवाड़ रेजीडेन्सी, पृ. 53

34) वी. वी., उपरोक्त

35) मेवाड़ रेजिडेन्सी, पृ. 53, श्यामलदास में इसकी आय 2 लाख रूपया वार्षिक लिखी है। (वी. वी., पृ. 178) जो कि मूल में राज्य के खालसा क्षेत्राधीन खानों की वार्षिक आय रही थी।

36) मेवाड़ रेजिडेन्सी, उपरोक्त

37) यटे लिखते हैं कि राणा की अरूचि के कारण कार्य स्थगित कर दिया था। यटे – मेवाड़, पृ. 12, किन्तु इसका मूल कारण उत्पादन की मात्रा का अधिक लाभ नहीं होना था। (वी. वी., पृ. 179) इसकी खुदाई में 15,000/– रूपया मेवाड़ सरकार ने खर्च किया था। (मेवाड़ रेजिडेन्सी, पृ. 53)

38) धातु सफाई करने का कार्य 'धरिया' तथा मिट्टी की ..... किया जाता था।

39) दृष्टव्य आवास–निवास, रहन–सहन, प्रकरण।

40) डॉ. प्रभुदयाल अग्निहोत्री, पतांजली कालीन भारत, पृ. 97–98

41) रावल जैत्रसिंह (1213–1250 ई.) के समय में मेवाड़ की राजधानी नागदृह (अथवा नागदा) थी, परन्तु सुल्तान इल्तुतमीश के आक्रमण

के कारण यह नष्ट हो गई थी। अतः रावल द्वारा अघाटपुर में नवीन राजधानी का निर्माण किया गया था। उसके पूर्व रावल तेजसिंह (1250–1272 ई.) के काल में चित्तौड़ के सामरिक महत्व को देखते हुए राजधानी को परिवर्तित कर चित्तौड़ ले जाया गया था।

42) सुल्तान अल्लाउद्दीन के चित्तौड़ आक्रमण 1302–1303 ई. के समय मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ ही थी। राणा कुम्भा 1433–1468 ई. द्वारा कुम्भलगढ़, राणा सांगा 1509–1528 ई. द्वारा चित्तौड़ व राणा उदयसिंह 1540–1572 ई. में उदयपुर को राज्य की राजधानी बनाया था।

43) 18 अप्रेल, 1948 ई. को राणा भूपालसिंह द्वारा मेवाड़ राज्य का विलय संयुक्त राजस्थान में होना स्वीकार किया था।

44) राठौड़, डॉ. औंकार सिंह; मेवाड़ की अनूठी संस्कृति, संत गोपालदास निर्वाणी, पृ. 16–19

45) उपरोक्त, वही, पृ. 39–53

46) उपरोक्त, वही

47) उपरोक्त, वही

अध्याय द्वितीय

मेवाड़ का मुस्लिम आक्रमणों के विरुद्ध प्रतिरोध (8वीं से 17वीं शताब्दी) (सनातन धर्म और संस्कृति के संरक्षण के सन्दर्भ में)

अध्याय द्वितीय – मेवाड़ का मुस्लिम आक्रमणों के विरूद्ध प्रतिरोध (8वीं से 17वीं शताब्दी) (सनातन धर्म और संस्कृति के संरक्षण के सन्दर्भ में)

2.0 विदेशी यात्रियों एवं यूरोपीय लेखकों के वृत्तान्तों में प्रतिबिम्बित मेवाड़

2.1 भारत में राष्ट्रीयता की अवधारणा

2.2 भारत के राजवंशों की ऐतिहासिक परम्पराओं के प्रमाणित आधार एवं उनके प्रमाणित दस्तावेज

2.3 स्वाधीनता के लिए विदेषी आक्रमणों का प्रतिरोध

पाद टिप्पणियाँ

अध्याय : द्वितीय

मेवाड़ का मुस्लिम आक्रमणों के विरूद्ध प्रतिरोध (8वीं से 17वीं शताब्दी)

(सनातन धर्म और संस्कृति के संरक्षण के सन्दर्भ में)

मेवाड़ राज वंश का गौरव प्राचीनकाल से वर्तमान समय तक प्रकाशमान रहा है। क्योंकि यह घराना हिन्दुस्तान के सब राजाओं में शिरोमणि और बड़ा माना जाता रहा है। हिन्दुस्तान के लोगों में क्या छोटा और क्या बड़ा ? जिसको पूछिये, यही जवाब देगा कि, उदयपुर के महाराणा "हिन्दुवा सूरज" है। कदाचित मेरी यह मान्यता अतिश्योक्ति पूर्ण न हो इसलिये सर्वप्रथम अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थों, विदेशी यात्रियों, लेखकों और पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर इसका इस लेख में उल्लेख किया जा रहा है जो प्रामाणिक इतिहास लेखन की दृष्टि से आवश्यक है। इस लेख में मेवाड़ के राजवंश का गौरव समझने के पहले इस वंश के आदिपुरूष अयोध्या के इक्ष्वाकु कुलीन सूर्यवंशी रामचन्द्र के वंशधर के इतिहास की जानकारी आवश्यक है। इसी दृष्टि से इस लेख में अन्य देशों व धर्मों के लोगों द्वारा लिखित उन सफरनामों और तवारीखों के उद्धरणों को उद्धृत करता हूँ जिनमें मेवाड़ के राजाओं के विषय में निष्पक्ष रूप से लिखा है। उस में चीनी यात्री हुएनसांग जो सन् 629 ईस्वी (हि. 8 = स. 686 वि.) में हिन्दुस्तान की यात्रा पर आया था, ने अपनी पुस्तक की दूसरी जिल्द के पृष्ठ 266–67 पर वल्लभी नगर जो उदयपुर के राजाओं के पूर्वजों की राजधानी मानी जाती है, के विषय में लिखता है कि – यह प्रदेश घेरे में 6000 ली. (दूरी एक परिमाप) है।[1]

महाभारत के हरिवंश तथा कालीदास के रघुवंश और श्रीमद्भागवत के नवम् स्कन्ध की पीढ़ियों में कुछ–कुछ अन्तर है, परन्तु भागवत के अनुसार इस वंश की वंशावली जो प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रन्थों एवं मेवाड़ और अन्य स्थानों से उपलब्ध प्रशस्तियों में मिलती है जो हिन्दुस्तान के अधिक हिस्सों में प्रचलित हैं। उनमें से सूर्यवंशी अयोध्या के वंशधर, शासकों और मेवाड़ के इतिहास में उपलब्ध है।

महाराणा राजसिंह के समय प्रसिद्ध लेखक रणछोड़ भट्ट द्वारा लिखित एवं उत्कीर्ण राजसमन्द की झील पर स्थापित विश्वविख्यात राज–प्रशस्ति के प्रथम सर्ग के श्लोक संख्या 28–29 एवं द्वितीय सर्ग के श्लोक संख्या 31–38 में मेवाड़ राजवंश के शासकों की जो सूची मिलती है यह भागवत पुराण के स्कन्ध 9 पर आधारित है। इसमें स्पष्ट उल्लेख हुआ है कि मेवाड़ का राजवंश अयोध्या के अन्तिम शासक सुमित्र के पश्चात् कालीन शासकों से सम्बन्धित है। जिसका उल्लेख राज–प्रशस्ति में इस प्रकार उत्कीर्ण है।

सुमित्रस्तु सुमित्रात इक्ष्वांको रन्वयो भवत्।।

उक्ता भागवते स्कंधे नवमे ते मयोदिता।। – श्लोक 31

द्वाविंशत्यगशतक मेषां संख्या कृतावदे।।

प्रसिद्धा त्सूर्यवंशस्था द्वजनाभो भवत्ततः।। – श्लोक 32

तस्मात्कनकसैनोस्य नहसीनोंगरत्यतः।।

.....भूपः सिंहरथस्त्वैतै अयोध्या वासिनौनृपाः।। – श्लोक 35

हिन्दुस्तान के जितने सूर्यवंशी राजपूत हैं, वे सब अपना मूल पुरूष सुमित्र को मानते हैं। इसके सम्बन्ध में कविराजा श्यामलदास का विचार है

कि, अयोध्या में सूर्यवंशियों का राज्य सुमित्र तक रहा होगा अथवा राजा सुमित्र के पुत्रों ने वेदमत (वैदिकधर्म) छोड़कर बौद्धधर्म स्वीकार कर लिया होगा इसलिये ब्राह्मणों ने उनके नाम सूर्यवंश की वंशावली से निकाल दिये होंगे। यह नहीं कि, वंश ही नष्ट हो गया हो। क्योंकि सूर्यवंश के बड़े राजा रामचन्द्र के पुत्रों के वंश में उदयपुर के राजवंश का होना बहुत ठीक मालूम होता है।

2.0 विदेशी यात्रियों एवं यूरोपीय लेखकों के वृत्तान्तों में प्रतिबिम्बित मेवाड़ –

सुलेमान सन् 851 ई. में और दूसरा अबूजैदुलहसन सन् 867 ई. में हिन्दुस्तान की यात्रा पर आया था। इन दोनों को अरबी पुस्तकों का रेनाडाट ने अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया है।

हिन्दुस्तान और चीन के लोग मानते हैं कि विश्व में चार बादशाह है। उन में अरब का बादशाह प्रथम, चीन का दूसरा, यूनान का तीसरा और चौथा वल्लभी (बलहारा) माना जाता है जो मुर्मियल उजुन अर्थात् उन लोगों का राजा, जिनके कान बिंधे हुए है।

हिन्दुस्तान में यह बलहारा (वल्लभी का) बहुत ही प्रसिद्ध राजा है। यद्यपि अन्य राजा अपने अपने राज्य में स्वाधीन है, तो भी उनको बड़ा मानते हैं। जब वह उनके पास दूत भेजता है तो, वे उसको बड़ा और प्रतिष्ठित मान कर बड़ी इज्जत के साथ उसका आदर सम्मान करते हैं। वह अरब लोगों की तरह बड़ा दानवीर है। उसके पास अनेक घोड़े, हाथी और बहुत सा खजाना है। उसके सिक्के चलते हैं, जो तातारी द्रम कहलाते हैं। उन सिक्कों का वजन अरबी द्रम से आधा द्रम अधिक होता है। वे इस राज्य के ठप्पे से बनते हैं जिसमें राजा के राज्याभिषेक का

सम्वत् (सन् जुलूस) लिखा है। वे अपना सन् अरब लोगों की तरह मुहम्मद के समय से नहीं गिनते। बल्कि अपने राजाओं के समय से गिनते हैं। इन राजाओं में से कई एक तो दीर्घायु है और किसी किसी ने पचास वर्ष से अधिक समय तक राज्य किया है।[2]

"बलहारा इस खानदान के सभी राजाओं का विरूद्ध है, न कि किसी व्यक्ति विशेष का नाम। इस राजा का आधिपत्य क्षेत्र काम 6000 ली. मील है।

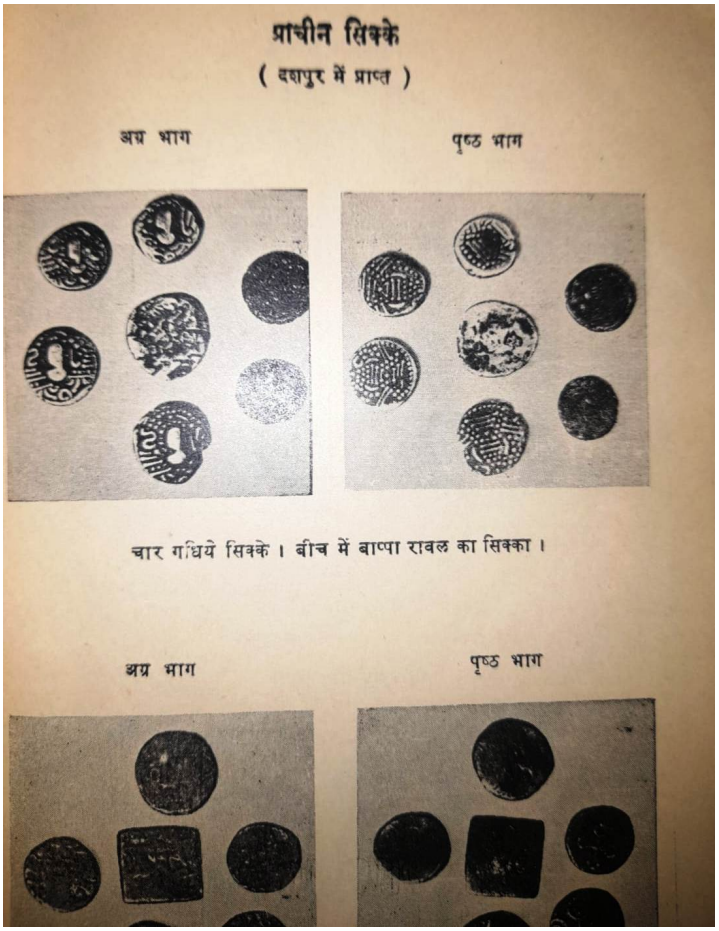

बलहारा से "वल्लभीवाला तात्पर्य है। इन यात्रियों के हिन्दुस्तान में आने के समय चित्तौड़ पर महारावल खुमाण राज्य करते थे जिनको लोग बलहारा अर्थात् "बल्लभी वाला" नाम से पुकारते होगें। क्योंकि वल्लभी राज्य का पतन होने के बाद मेवाड़ का राज्य स्थापित हुआ। यह सर्वमान्य

प्रथा है कि एक जगह से दूसरी जगह जाकर बसने वाले लोग उसके पूर्व निवास स्थान के नाम से पुकारे जाते थे। जैसे हिन्दुस्तान के पठान बादशाह अफगान और तुर्किस्तान के मुगल तुर्क कहलाते थे।

अल्बेरूनी की पुस्तक तहकीक–ए–हिन्द में 10वीं सदी के भारत के राजवंशों में लाहौर के एक हिन्दू राजवंश का उल्लेख हुआ है। जो काबुल एवं लाहौर पर शासन करता था। उस वक्त सामंते नामक एक ब्राह्मण इन दोनों राज्यों (काबुल व लाहौर) पर राज्य करता था। उसी के उत्तराधिकारियों में कई राजपूत राजाओं के नाम मिलते हैं। इन नामों में पंजाब का राजा जयपाल का भी नाम है। जयपाल के पुत्र अनंगपाल के चलाये सिक्कों पर (रूपयों) सामंत का भी नाम मिलता है। (जर्नल ऑफ रॉयल ऐशियाहटिक सोसायटी, खण्ड IX)

मेवाड़ के राजा खुमाण का नाम रोम के सिजरमहान की भांति विख्यात रहा है। मेवाड़ के राजा खुमाण रावल के राजत्वकाल के 100 वर्ष पहले याने 976 ई. सन् पंजाब में जयपाल हुआ। जिसने सुल्तान महमूद गजनी के विरूद्ध राजाओं का संघ बना कर मुस्लिम आक्रमणों का प्रतिरोध किया था। स्यालकोट लाहौर के हिन्दू राजवंश को अल्बेरूनी ने लाहौर के साथ पश्चिमी भारत के प्रसिद्ध राजवंशों का वर्णन किया है। टॉड ने इसी आधार पर किया कि भारत में कन्नौज के राठौड़, चोटिल के बल्ल, मेवाड़ के गुहिल, जैसलमेर के भाटी व लाहौर के बुस की सूची, बाप्पा रावल से शक्ति कुमार तक के चौदह राजाओं की वंशावली का वर्णन मिलता है। मेवाड़ राजमहल में उपलब्ध भट्ट ग्रन्थ एवं मेवाड़ राजवंश की वंशावली के साथ आहड़ से मिले शक्तिकुमार के शिलालेख से मिलान करें तो निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह राजवंश अयोध्या के इक्ष्वाकु कुल के सूर्यवंशी भगवान रामचन्द्र के ही वंशज है।[3]

टॉड ने अपने ग्रन्थ टॉडनामा में मेवाड़ के राजवंश पर भट्ट ग्रन्थ, चित्तौड़ से मिले मानमौर्य की मान सरोवर की प्रशस्ति तथा आहड़ से मिले राजा शक्ति कुमार की प्रशस्ति के अलावा जैन साहित्य, पुराणों व देशी विदेशी ऐतिहासिक स्त्रोतों के आधार पर मेवाड़ के इस प्राचीन प्रतिष्ठित राजवंश पर अनुसंधान इसके गौरव को उजागर किया। टॉड ने लिखा है कि मौर्यवंशी मानमौर्य जो 8वीं सदी में चित्तौड़ का शासक था, उसका सम्बन्ध भारत के चक्रवर्ती सम्राटों से था, उससे बाप्पा रावल ने राज्य हस्तगत किया। मौर्यवंशी चित्तौड़ नरेश उज्जैन (अवन्ति) से अयोध्या (साकेत) व पाटलीपुत्र तक अपना प्रभाव रखते थे। युनानी वृत्तान्तों में भी इसका उल्लेख है।

सन् 1615 ई. में सर टामसरो ने अपने सफरनामे के 19वें पृष्ठ पर चित्तौड़ का वर्णन इस तरह किया है –

"यह शहर राणा के राज्य क्षेत्र में है, जिसको इस बादशाह ने थोड़े दिन पहले अपने अधीन किया है, बल्कि कुछ रूपया पैसा लेकर अपनी अधीनता स्वीकार करवायी थी। बादशाह अकबर ने इस शहर पर अधिकार किया था, जो इस बादशाह का पिता था। राणा उस पोरस के वंश में से है, जिस बहादुर हिन्दुस्तानी राजा को सिकन्दर ने विजित किया था।"

इस तरह टॉमसरो के पादरी एडवर्ड ने अपने सफरनामे के पृष्ठ 77–78 पर चित्तौड़ का विवरण निम्नलिखित रूप से लिखा है –

"चित्तौड़ एक बहुत प्राचीन राज्य का प्रमुख नगर एक ऊंचे पहाड़ पर स्थित है। इसकी शहरपनाह (चार दीवारी) का घेरा कम से कम 10 मील में होगा। आज तक यहां पर 200 से अधिक मंदिर और पत्थरों के बने बहुत ही अच्छे एक लाख मकानों के खण्डर दिखाई देते हैं। अकबर

बादशाह ने इसको राणा से जीत ही लिया था, जो राणा प्राचीन हिन्दुस्तानी रईस है।"

जान एल्बर्ट डी मेंडलस्लो जर्मन की फ्रांसीसी भाषा में लिखी पुस्तक के अंग्रेजी के अनुवाद से ही प्रकट होता है जैसा कि, हेरिस के सफरनामा की पहली जिल्द के पृष्ठ 758 पर लिखा है कि अहमदाबाद शहर से कुछ दूरी पर मरवा के बड़े पहाड़ दिखाई देते हैं, जो आगरा की तरफ लम्बाई में 210 मील से अधिक फैले हुए है और 300 मील से अधिक औयो की तरफ। जहां विकट चट्टानों के बीच चित्तौड़ में शासक राणा का निवास स्थान था। जिसको मुगल और पाटन (गुजरात) के बादशाह की सम्मिलित सेनायें भी कठिनाई से जीत सकी।[4]

बर्नियर के सफरनामा की पहली जिल्द के पृष्ठ 232–233 पर इस प्रकार लिखा है –

भारत में खिराज न देने वाले एक सौ से अधिक राजा है, जो बहुत शक्तिशाली है और सम्पूर्ण साम्राज्य में फैले हुए है। जिनमें कोई आगरा, दिल्ली के पास और कोई दूर है। इन राजाओं में 15 या 16 शासक तो धनाढ्य और बहुत शक्तिशाली है। विशेषरूप से मेवाड़ के राणा, जो पूर्व में राजाओं का शंहशाह समझा जाता था और पोरस के खानदान में माना जाता था।

मेजर जनरल कनिंघम ने अपनी रिपोर्ट के चौथे खण्ड के पृष्ठ 95–96 पर लिखा है कि, "पिछले (प्राचीन) अथवा बीच के (मध्यकालीन) हिन्दू जमाने के बारे में अनुमान है कि, गुहिल या गुहिलोत नामक मेवाड़ का राजवंश किसी समय में आगरा पर राज्य करता था। सन् 1867 ई. में दो हजार से भी अधिक छोटे–छोटे चांदी के सिक्के आगरा में हुई खुदाई

में निकले थे। उन सभी पर प्राचीन संस्कृत अक्षरों में लिखा लेख स्पष्ट रूप से ''श्री गुहिल'' या ''गुहिल श्री'' पढ़ने में आया। ये सिक्के सम्भवतः श्री गोहादित्य का गुहिल के होंगे, जो मेवाड़ के गुहिलोत राजवंश की नींव डालने वाला था। लेकिन गुहिल का शासनकाल तो सन् 750 ई. में था और वह लिपि उस समय से पहले की मालूम होती है। कदाचित् ये सिक्के बाद के गोहा या ग्रहादित्य के हों, जो इसी खानदान के राजा शिलादित्य का पुत्र और गुहिलोत या सीसोदिया राजवंश का प्रथम राजा था। यह खानदान बलहारा, वल्लभी अथवा सौराष्ट्र के खानदान से निकला था, जो उस देश के पतन के पश्चात् वहाँ से निकल गये, परन्तु उस राजा का ठीक से समय मालूम नहीं। अनुमान है कि, छठी सदी ईसवी के लगभग रहा होगा। सौराष्ट्र के राजाओं का राज्य किसी समय में इतना बड़ा था, जिससे निस्संदेह उसका आगरे तक पहुँच जाना सम्भव है।

लुई रासेलेट ने अपने मध्य हिन्दुस्तान के यात्रा विवरण के पृष्ठ 200 पर लिखा है कि, चित्तौड़ की प्रसिद्ध मोर्चाबन्द बस्ती, जो एक अकेले पहाड़ की चोटी पर बसी हुई है, मेवाड़ की पुरानी राजधानी थी। यह सदियों तक मुसलमानों के आक्रमणों के विरूद्ध स्वाधीनता व स्वाभिमान की रक्षार्थ बचाव की अन्तिम सुदृढ़ जगह थी।[5]

एचिसन की अहदनामों की किताब जिल्द तीसरी के पृष्ठ 3 पर लिखा है कि ''उदयपुर का राजवंश हिन्दुस्तान के राजपूत रईसों में सर्वाधिक गौरवशाली और उच्च श्रेणी का है। यहाँ के राजा को हिन्दू लोग अयोध्या के प्राचीनकाल के राजा राम का प्रतिनिधि समझते हैं। जिनके वंश में से मेवाड़ में राजा कनकसेन ने लगभग सन् 144 ई. में इस राजवंश की नींव डाली थी। डूंगरपुर, सिरोही और प्रतापगढ़ के राज्य भी यहीं से निकले हैं। मराठा लोगों की सत्ता की नींव डालने वाला शिवाजी और

महाराष्ट्र में सतारा का भोंसला राजवंश उदयपुर के घराने से ही निकले थे। हिन्दुस्तान में किसी राज्य ने यहाँ से बढ़ कर अधिक वीरता के साथ मुसलमानों का सामना नहीं किया। इस घराने का अभिमान है कि, उन्होंने कभी किसी मुसलमान बादशाह को लड़की नहीं दी। कई वर्ष तक उन राजपूतों के साथ शादी व्यवहार छोड़ दिया, जिन्होंने बादशाहों को लड़की दी थीं। डॉक्टर हंटर ने भी अपने गजेटियर में एचिसन के अनुसार ही लिखा है।''

हेरिस के अनुसार ''राजा राणा, जिसको तैमूरलंग ने परास्त किया, वह सब इतिहासवेत्ताओं के अनुसार महाराजा पोरस के खानदान से था।'' हिन्दुस्तान के एक राजा का वर्णन सुन कर, जो बुद्धिमानी और वीरता के लिए प्रसिद्ध था और पोरस के खानदान में पैदा होने के कारण प्रसिद्ध था और जिसका प्रदेश बादशाह ने शीघ्र ही विजित करने का विचार किया। विशेष रूप से इस कारण कि, यह प्रदेश उसके मौरूसी (पैतृक) राज्य और नये विजित किये हुए प्रदेश के बीच में था। इस राजा की ''राणा'' पदवी थी, जो विरूद्ध उसके खानदान के सभी राजाओं को हिन्दुस्तान के प्राचीन विधान (परम्परा) के अनुसार दिया जाता था। वह राजा पौरस के राजवंश के योग्य था। यदि उसकी अच्छी मदद करने वाला कोई दूसरा राजा भी होता तो, वह अपने प्रदेश की आजादी फिर से प्राप्त कर लेता। फिर भी उसने विशेष प्रयत्न किये, जो इस प्रदेश के इतिहास में हमेशा याद रहेंगे, एक शक्तिशाली हिन्दुस्तानी सरदार के रूप में लिखा है।

मिल कृत हिन्दुस्तान के इतिहास की, सातवीं जिल्द के पृष्ठ 57 पर इस प्रकार लिखा है कि ''उदयपुर के राणा अपनी उत्पत्ति राम के पुत्र लव से बतलाते हैं, इसलिये वे सूर्यवंशी समझे जाते हैं और राजपूतों में गुहिलोत वंश की सीसोदिया शाखा में हैं। सब राजपूत राजाओं में बड़े

माने जाते हैं तथा दूसरे राजा लोग गद्दी पर बैठने के समय उनके हाथ से तिलक स्वीकार करते हैं। इसका अर्थ यह है कि, उनकी गद्दीनशीनी राणा को स्वीकार है।''

इलियट की तवारीख, की प्रथम जिल्द के पृष्ठ 354–360 पर बलहारा सौराष्ट्र और वल्लभी के नाम से इस वंश का वर्णन कई इतिहास लेखकों का हवाला देकर लिखा है।[6]

थार्नटन ने अपने गजेटियर के पृष्ठ 723 पर लिखा है कि, ''उदयपुर का राजवंश राजपूतों में अत्यन्त ही प्रसिद्ध है। दिल्ली के शाही खानदान के साथ वहाँ के राजाओं ने कभी रिश्तेदारी नहीं की।''

रेनाल्ड ने लिखा है कि, ''उदयपुर के राणा हमेशा राजपूत राज्यों के सरदार समझें गये हैं। जो लोग अन्य किसी तरह से उनको बड़ा नहीं मानते, वे भी पुरानी परम्परा के अनुसार उनकी इज्जत करते हैं। इससे प्रमाणित होता है कि, राणा के पूर्वजों के हाथ में पहले, पूरे अधिकार रहे थे और सम्भवतः सारा राजपूताना उनके अधीन एक ही राज्य था।''

विलियम राबर्टसन की तवारीखें हिन्दुस्तान के पृष्ठ 302 में लिखा है कि, ''चित्तौड़ के राजा जो हिन्दू राजाओं में सबसे प्राचीन समझे जाते हैं और राजपूत जातियों में सबसे श्रेष्ठ हैं, अपनी उत्पत्ति पोरस के खानदान से बतलाते हैं। अर्म भी रार्बटसन के अनुसार ही लिखता है।''

मार्शमेन की तवारीख, की पहली जिल्द के पृष्ठ 23 पर लिखा है कि ''उदयपुर का खानदान राम के बड़े पुत्र लव से पैदा हुआ है इसीलिये हिन्दुस्तान के हिन्दू राजाओं में बड़ा माना जाता है। पूर्व में यह राजवंश सूरत के प्रदेश में गया और उसने खम्भात की खाड़ी में वल्लभीपुर को अपनी राजधानी बनाया।''

माल्कम की तवारीख सैण्ट्रल इण्डिया (मेमाअर्स ऑफ सैण्ट्रल इण्डिया) की पहली जिल्द के पृष्ठ 27–28 पर मालवा के बादशाह महमूद खिलजी के वर्णन में लिखा है कि – ''उसको चित्तौड़ के राणा कुम्भा ने कैद कर लिया और फिर मेहरबानी, दया करके छोड़ दिया और उसका प्रदेश वापस दे दिया। उस समय के वर्णन में सभी इतिहास ग्रन्थ लिखते हैं कि, कुछ राजपूत राजाओं ने, जिनमें विशेष रूप से चित्तौड़ के राणाओं ने अपने आसपास के मुसलमानों से बड़ी कठोर लड़ाइयाँ कर उन पर विजयें प्राप्त कीं।'' इसी इतिहास के 36वें पृष्ठ पर पाद टिप्पणी लिखी है कि, ''उदयपुर के राणा जो राजपूतों में सबसे ऊंचे राजवंश के हैं, हमेशा यह गर्व करते हैं कि, उन्होंने मुगल बादशाहों के साथ कभी विवाह सम्बन्ध स्थापित नहीं किया।''

मुसलमानों मुवर्रिखों (इतिहासवेत्ताओं) ने लिखा है कि, मालवा के बादशाहों की कठिनाइयों, उनकी धोखाधड़ी और अपनी घरेलू फूट के कारण से उत्पन्न हुई। जिसका मुख्य आधार चित्तौड़ के राणा सांगा की बहादुरी और योग्यता थी। वह अपने समय में राजपूतों का सरगिरोह (प्रमुख सेनापति) माना जाता था। बादशाह बाबर ने ''तुजुक–इ–बाबरी'' में लिखा है कि, ''इस प्रसिद्ध हिन्दू राजा ने शाह महमूद के ऊपर कई बार विजय प्राप्त की। उससे बहुत से सूबे छीन लिये – जैसे रामगढ़, सारंगपुर और चंदेरी।''

ग्रांट डफने मराठों का इतिहास, की प्रथम जिल्द के पृष्ठ 19–20 लिखा है कि, ''शालिवाहन ने आमेर के राजा का प्रदेश ले लिया, यह राजा सूर्यवंशी राजपूत शासक सिसोदिया राजवंश का था। उसका मूल पुरूष कौशल देश से, जिसको आजकाल अयोध्या (अवध) कहते हैं, निकल कर नर्मदा की तरफ आया और अपना राज्य स्थापित किया, जो शालिवाहन की

विजय के समय तक सोलह सौ अस्सी वर्ष तक बना रहा था। शालिवाहन ने केवल एक स्त्री को छोड़कर, उस वंश के सभी लोगों को कत्ल कर दिया। यह स्त्री अपने कम उम्र के पुत्र के साथ सतपुड़ा के पहाड़ों में जाकर छुप गई। वह लड़का चित्तौड़ के राणाओं के राजवंश की नींव डालने वाला हुआ।''

चित्तौड़ के राणाओं से ही उदयपुर के राणा निकले, जिनका राजवंश हिन्दुस्तान में सबसे पुराना माना जाता है। ऐसा भी वर्णन है कि, मराठा जाति की नींव डालने वाला व्यक्ति इसी उदयपुर के राजवंश से पैदा हुआ था।

एलफिंस्टन कृत हिन्दुस्तान के इतिहास, पृष्ठ 431 पर इस प्रकार लिखा है – ''राजपूत राजा हमीरसिंह, जिसने अलाउद्दीन खिलजी के समय में चित्तौड़ को वापस ले लिया था (1316 ई.)।'' इसी किताब के पृष्ठ 480 पर लिखा है कि, उदयपुर के राणा का राजवंश और जाति, जो पहले गुहिलोत और बाद में सीसोदिया कहलाये, राम से निकले हैं इसलिए वे मौलिक रूप से अयोध्या से सम्बद्ध है। बाद में वे गुजरात में स्थापित हुए, जहाँ से ईडर गये तथा अन्त में टॉड की राय के अनुसार आठवीं सदी ईसवी के शुरू में चित्तौड़ पर स्थापित हुए।[7] सन् 1303 ई. तक, जबकि चित्तौड़ पर अलाउद्दीन के अधिकार और कुछ समय बाद राणा हमीर द्वारा पुनः अधिकार कर लेने तक, उनका (राणाओं का) नाम इतिहास में प्रसिद्ध नहीं हुआ। हमीर, जिसने कि यह कार्य किया था, के बाद कई योग्य शासक हुए और उनके माध्यम से मेवाड़ देश राजपूतों में उस गौरव तक पहुँचा, जिससे सांगा (संग्राम सिंह) बाबर के विरूद्ध युद्ध में उन सभी राजपूतों को ले जाने में सफल हुआ।

1604-05 में सम्राट अकबर द्वारा जारी
राम-सीता की स्वर्ण एवं रजत मुद्राएं

टॉड नामा राजस्थान की पहली जिल्द के पृष्ठ 211 पर इस तरह से लिखा है – मेवाड़ के शासक (महाराजा) राजा कहलाते हैं और सूर्यवंशी अथवा सूर्यवंश की बड़ी शाखा है। ''रघुवंशी'' इनका दूसरा वंशानुगत विरूद्ध है। यह पदवी राम के बाप–दादाओं में से किसी के नाम पर बनी है। सूर्यवंशी राजवंश की प्रत्येक शाखा राम से निकली है। सूर्यवंशी वंश की शाखाओं का वंशवृक्ष लिखने वाले इसको लंका को जीतने वाले से प्रारम्भ होना लिखते है। अधिकांशतः तथ्यों के वादों के कारण विवाद है, लेकिन हिन्दुओं की सभी जातियां जो इस बात पर एक मत हैं कि, मेवाड़ के महाराणा वास्तव में राम की राजगद्दी के उत्तराधिकारी हैं और उनकी ''हिन्दुवा सूरज'' कहते हैं। 36 राजसी (राज करने वाली) जातियों में से सभी उनको प्रथम समझते हैं और उनके कुलीन होने में कभी सन्देह उत्पन्न नहीं हुआ है।

जार्ज टॉमस ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ 196 पर लिखा है कि, ''उदयपुर का राजा वैसी ही स्थिति में है, जैसा कि दिल्ली का बादशाह।''

इसके अतिरिक्त उक्त लेखक ने अपनी पुस्तक में महाराणा के खानदान का बड़प्पन (गौरव) और भी कई स्थानों पर प्रकट किया है।

बादशाह बाबर ने अपनी पुस्तक ''तुजुक–इ–बाबरी'' (हस्तलिखित) के पृष्ठ 243 पर लिखता है कि, ''राणा सांगा की शक्ति इस देश हिन्दुस्तान में इस दरजे की थी कि, अधिकांश राजा और रईस उसके वर्चस्व को मानते थे और उसका अधिकार क्षेत्र दस करोड़ की आमदनी का था। जिसमें हिन्दुस्तान के कायदे के अनुसार एक लाख सैनिकों की गुंजाइश हो सकती है।''

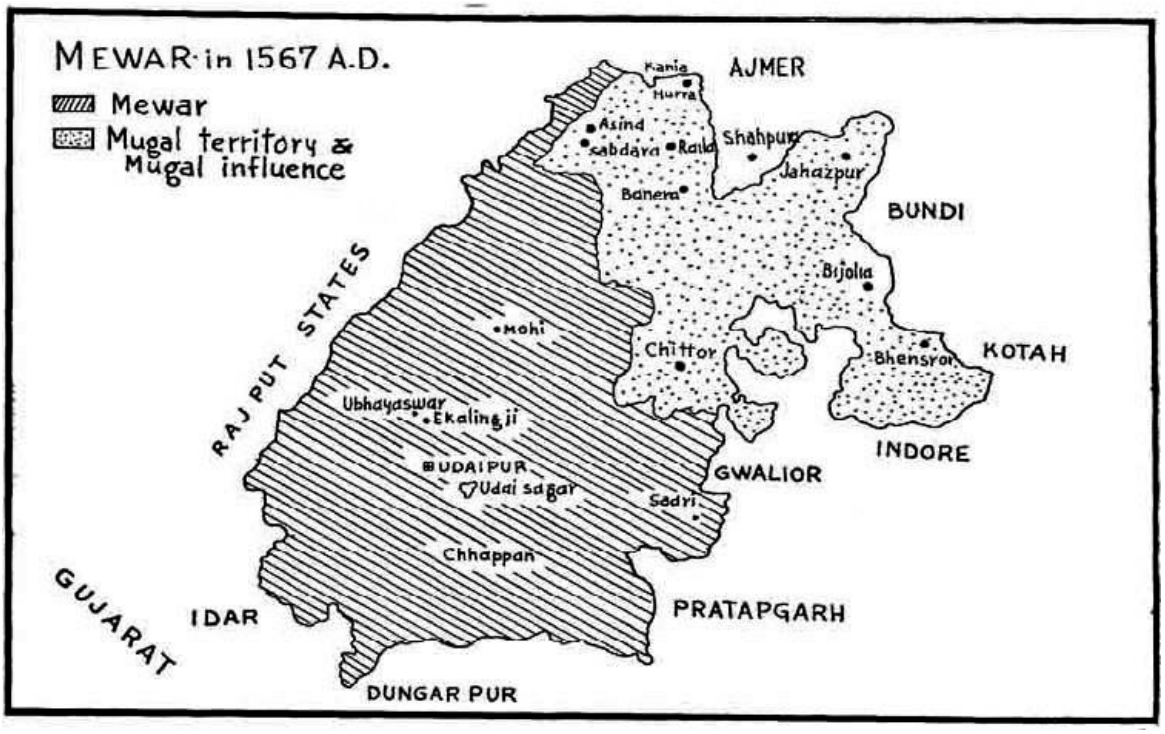

इसी तरह प्रकाशित पुस्तक अकबर नामा की दूसरी जिल्द के पृष्ठ 380 पर लिखा है कि, ''बादशाही जुलूस के बाद अधिकांश ऐसे राजाओं ने भी जो कभी दूसरे बादशाहों के अधीन नहीं रहे थे, अब अधीनता स्वीकार कर ली। लेकिन राणा उदयसिंह ने, जो इस प्रदेश में अपने प्राचीन गौरव का ध्यान रखने वाला था और अपने पूर्वजों के अनुरूप विकट पहाड़ों और

सुदृढ़ किलों के कारण गर्वीला था, बहादुरी से बादशाह की अधीनता स्वीकार नहीं की, इसलिये बादशाह को चित्तौड़ का दुर्ग लेना पड़ा।''[8]

इसी तरह तबकात–इ–अकबरी के पृष्ठ 282 पर लिखा है कि ''हिन्दुस्तान के अधिकांश राजाओं आदि ने बादशाह की अधीनता स्वीकार कर ली थी, लेकिन पहाड़ का राजा राणा उदयसिंह सुदृढ़ दुर्गों और सशक्त सेना के कारण गर्व करता हुआ उपद्रव करता था।'' इसी पुस्तक के पृष्ठ 336 पर पुनः लिखा है कि, ''राणा कीका जो हिन्दुस्तान के राजाओं का सरदफ्तर (प्रमुख) है, चित्तौड़ विजित होने के बाद पहाड़ों में गोगुंदा नामक एक शहर बसा कर जिसमें कि उसने श्रेष्ठ भवनों और बागों को तैयार कराया था, अपनी जिन्दगी सर्कशी (उपद्रवों) के साथ व्यतीत करता था।''

मुन्तखब–उत्–तवारीख के पृष्ठ 213–14 में मौलवी अब्दुल कादिर बदायूनी लिखता है कि, हल्दीघाटी की लड़ाई में राणा का रामप्रसाद हाथी बादशाह की सेना वालों के हाथ लगा। उसको मैं आंबेर के रास्ते से आगरा को ले जाने लगा, लेकिन मार्ग के लोग राणा की लड़ाई और मानसिंह की विजय का हाल सुनकर विश्वास नहीं करते थे।

तवारीख फरिश्ता के पृष्ठ 54 पर मुहम्मद कासिम लिखता है कि, राजा वीर विक्रमादित्य के समय के बाद के राजाओं में से बादशाह जहांगीर के इस समय तक ऐसा कोई भी राजा नहीं रहा, जिसका नाम लिया जा सके। निश्चित् रूप से एक राजपूत शासक राणा है, जिसके राजवंश में मुसलमानों के समय के पहले से ही राज्य चला आ रहा है।

2.1 भारत में राष्ट्रीयता की अवधारणा –

भारत में वैदिक काल में ''राष्ट्र'' की अवधारणा श्रुति साहित्य में (वेद, संहिताऐं, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषदों का समावेश परम्परा, नियम, उपनियम है) स्व–शासन प्रणाली के नियमों, संहिताओं व परम्पराओं से प्रतिपादित अर्थ से है। ऋग्वेद का ब्राह्मण ग्रंथ ऐतरेय है, जिसमें 8 प्रकार के राज्यों का वर्णन मिलता है। इनमें साम्राज्य, भौज्य, स्वराज्य, वैराज्य, पारमेष्ठिय राज्य, महाराज्य, आधिपत्यमय साम्राज्य, सामन्तपर्यायी। इनके अतिरिक्त जनराज्य, गणराज्य, राज्य इनका भी वर्णन वेदों में है।[9]

वैदिक कालीन भारत में ''आर्यविधान (Aryan Constitution)'' के अनुसार रावण का साम्राज्य बुरे से बुरा था, परन्तु राजा रामचन्द्र ने रावण के कुशासन को समाप्त कर लंका का साम्राज्य उसके भाई विभिषण को सौंप दिया। राम ने रावण को परास्त कर उसका साम्राज्य आर्यावर्त्त में नहीं मिलाया और न ही लंका को लूटा वरन् वहां के शासन में जनोपयोगी मूल्य आधारित शासन व्यवस्था के लिए लंका की राष्ट्रीयता स्वीकार करते हुए, विभिषण को बराबर सहयोग दिया। मध्ययुगीन भारत में राज्य की अवधारणा एवं आधुनिक युग में यूरोपीय औपनिवेशिक काल में इस्लामिक Code अथवा Eurepeon Code के अनुरूप होने से भारतीय जनता ने विदेशी राज्य अथवा पाश्चात्य राष्ट्रवाद की अवधारणा को कभी भी स्वीकार नहीं किया। इसी कारण भारतीय शासकों ने अपने स्वराष्ट्र, स्वदेश व स्वराज्य की स्थापना हेतु निरन्तर संघर्ष किया। इस दृष्टि से मेवाड़ के महाराणा प्रताप ने भारतीय राष्ट्रवाद के सनातन मूल्यों की स्थापना के लिए अपने पूर्वजों की नीति का अनुसरण किया। अकबर का राष्ट्रवाद, मुस्लिम राष्ट्रवाद था, तो प्रताप का राष्ट्रवाद सदियों से चला आ रहा वैदिक विधि अनुरूप भारतीय राष्ट्रवाद था। प्रस्तुत लेख महाराणा प्रताप के द्वारा

स्वराष्ट्रीयता के उच्चादर्शों से प्रेरित मुगल साम्राज्य के विरूद्ध किए गए स्वाधीनता संघर्ष को प्रतिबिम्बित किया गया है।

2.2 भारत के राजवंशों की ऐतिहासिक परम्पराओं के प्रमाणित आधार एवं उनके प्रमाणित दस्तावेज –

ब्रिटिश–भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल ने सन् 1879 में राजपूताने के उस वक्त एजेन्ट दूदी गवर्नर जनरल रहे श्री जी. एच. ट्रेवर सी. एस. को आदेशित कर सभी राजपूत राज्यों के शासकों से उनके वंश व राज्यों के कतिपय दस्तावेजों को संग्रहित कराया। जिन्हें के. सी. सर एलफ्रेड लॉयल ने 1879 में गजेटियर ऑफ राजपूताने में योगदान दिया उसे सन् 1908 में श्री जी. एच. ट्रेवर के इस संग्रहित राजपूताने के राजवंशों के दस्तावेजों के आधार पर श्री सी. एस. बेले ने जो कि उस वक्त बीकानेर राज्य का रेजीडेन्ट था। उसके द्वारा ''दी रूलिंग प्रिंसेज चीफ्स एण्ड लीडिंग परसर्नस इन राजपूताना एण्ड अजमेर'' नामक एक पुस्तक प्रकाशित हई थी।

उक्त पुस्तक में सन् 1908 तक के राजपूताने के राज्यों के राजवंशों, उप–शाखाओं तथा उनके अधिकृत राज्यों का विवरण प्रकाशित किया गया था। जिसकी सूची निम्न तालिका में प्रस्तुत है –

राजवंश	उप–शाखाऐं	राज्य अधिकृत
राठौड़ वंश	–	जोधपुर (मारवाड़), बीकानेर, किशनगढ़
गुहिल सिसोदिया	सिसोदिया	उदयपुर (मेवाड़), डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़, शाहपुरा

चौहान वंश	1) हाड़ा चौहान 2) देवड़ा चौहान	बुंदी एवं कोटा राज्य सिरोही
जाडौन (जादौन) वंश	भाटी	करौली जैसलमेर
कच्छावा वंश	नरूक्का	जयपुर राज्य अलवर राज्य
झाला वंश	झाला	झालावाड़

उत्तर भारत पर मुस्लिम आक्रमणों के दो सदियों पूर्व याने कि अरब आक्रमणों (8वीं सदी) से पहले भारत में राजपूताना उक्त भूभाग (सन् 1908 तक की स्थिति पर बेले की रिपोर्ट) पर तीन शक्तिशाली जातिय राज्यों (Tribal Dynasties) का प्रभुत्व था। प्रथम कन्नौज के राष्ट्रकूटों (राठौड़) का कन्नौज को राजनैतिक केन्द्र बनाकर पश्चिमी भारत में यमुना नदी से सिन्ध तक शासन था। अलमरूड़ी लिखता है कि कन्नौज के शासक सिन्ध–हिन्द के अधिपति थे। कुछ भी हो इन विदेशी लेखकों व भूगोलवेत्ताओं के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि राजपूताना का विस्तृत भाग गुर्जर प्रतिहारों (मण्डोर)/कन्नौज के राष्ट्रकूटों/मारवाड़ के राठौड़ वंश के आधिपत्य में था। दूसरा राजवंश जिसने राजपूताना के दक्षिण व पश्चिमी भूभाग में अन्हिलवाड़ा को राजनैतिक केन्द्र बनाकर सोलंकी (चालुक्य वंशज) राजवंश का उत्तर पश्चिमी भारत पर प्रभुत्व था। तृतीय राजवंश में मुहम्मद गौरी के आक्रमणों के पूर्व अजमेर के चौहान वंश का आधिपत्य था।[10]

उत्तर भारत में अरावली एवं विशाल मरूक्षेत्र से सुरक्षित सिन्ध व हिन्द में मेवाड़ में गुहिल सिसोदिया राजवंश (उदयपुर मेवाड़) का 8वीं सदी से दीर्घकाल तक आधिपत्य रहा। इस प्रकार पश्चिमी भारत में राठौड़ों एवं सोढ़ा (भाटी राजवंश) वंशज राजपूत जाति का उत्तरी–पश्चिमी भू–भाग पर प्रभाव था। राजपूताना के पूर्वी क्षेत्र की तरफ जयपुर को केन्द्र बनाकर कच्छावा राजपूत जाति ने आधिपत्य जमा रखा था।

वस्तुतः राजपूताना के विस्तृत रेगिस्तान के कारण अरबों का सिन्ध आक्रमण असफल रहा। राजपूत शासकों ने मुस्लिम आक्रमणों का न केवल प्रतिरोध किया वरन् गुर्जर प्रतिहारों व मेवाड़ के गुहिल शासकों ने अरबों को परास्त किया। अखिल भारतीय राजपूत शासकों के संघ में कश्मीर, कन्नौज, मेवाड़, गुजरात व मालवा के राजपूत शासकों ने मुकाबला किया। इस प्रकार अरावली पर्वतमाला एवं विस्तृत रेगिस्तान के कारण राजपूताना में राजपूत राज्यों का अस्तित्व था।

2.3 स्वाधीनता के लिए विदेशी आक्रमणों का प्रतिरोध –

भारत पर प्रथम मुस्लिम आक्रमणों (सिन्ध पर अरब आक्रमण) के दौरान राजपूत राज्यों के इन विभिन्न जातीय वंशजों ने देश के प्रमुख नगरों को केन्द्र बनाकर प्रभुत्व बना रखा था। इस वक्त गंगा यमुना के दौआब–सिन्ध–उत्तर पश्चिमी राजपूताना, मालवा व गुजरात, उत्तर प्रदेश के प्रमुख नगरों लाहौर, दिल्ली, कन्नौज, अयोध्या व अजमेर जैसे प्रसिद्ध नगरों एवं विस्तृत भूभागों पर अधिकार था।

पंजाब पर आक्रमण करने के बाद महमूद गजनवी ने 1017 ई. में कन्नौज पर आक्रमण किया। वह मथुरा पहुँचा। कुछ वर्षों बाद महमूद गजनवी ने लाहौर व पंजाब को फिर आक्रमण कर घेरा। अतुल धन प्राप्त

कर उसने इसी लालच व इस्लाम के प्रचार के उद्देश्य से सन् 1024 ई. में उसने गुजरात के सोमनाथ पर आक्रमण किया। इसी दौरान उसने मथुरा से राजपूताना के केन्द्र स्थल अजमेर पर आक्रमण करने के बाद सोमनाथ मन्दिर पर आक्रमण किया, परन्तु राजपूताना के राजपूतों ने महमूद गजनवी के आक्रमणों का शक्ति से मुकाबला किया। इस समय गुजरात के अन्हिलवाड़ा के सोलंकी राज्य व आबू के परमारों (चन्द्रावती के शासकों) से भयभीत होकर सिन्ध के मार्ग से अपने क्षेत्र गजनी शहर की ओर लौटने को विवश हुआ। सन् 1170 में गुजरात के अन्हिलवाड़ा के सोलंकियों व अजमेर के चौहान राज्य में युद्ध हुआ। इस भयानक युद्ध में अन्ततः सोलंकी राजवंश को भारी क्षति हुई, इसी समय अजमेर के चौहानों व कन्नौज के राठौड़ राजवंश में परस्पर युद्ध हुआ। इन राजपूत राज्यों के इस परस्पर जातीय राज्यों के संघर्ष का लाभ उठाकर शहाबुद्दीन गौरी ने 1193 में तराईन के युद्धों में उत्तर भारत पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। जब तक सन् 1194 में चन्दावल में जयचन्द को गौरी ने समाप्त कर कन्नौज पर अधिकार नहीं किया तब तक राजपूत राज्यों ने मुस्लिम आक्रमणों का अपनी परम्परागत नीति पर चलते हुए प्रतिरोध किया।[11]

वीर शिरोमणि प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रताप का जन्म वि.सं. 1597 ज्येष्ठ सुदी 3, रविवार, दिनांक 9 मई सन् 1540 ई. को सूर्योदय से 7 घड़ी 13 पल के समय पर हुआ था। उनके परिजनों में पिता उदयसिंह, माता जेवन्ती बाई सोनगरा, बहन हरकुंवर बाई, भ्राता शक्तिसिंह, जगमाल, सगर, महेशदास इत्यादि। उनका पुत्र कुंवर अमरसिंह था। पिता उदयसिंह की मृत्यु 28 फरवरी 1572 में गोगुन्दा में हुई। उसी दिन प्रताप का राजतिलक गोगुन्दा में हुआ। वर्तमान में गोगुन्दा के महल के निकट एक चबुतरा एवं छतरी बनी हुई है। जहाँ प्रतिवर्ष प्रताप जयन्ती पर मेला

लगता है। 19 जनवरी 1597 को चावण्ड में प्रताप की मृत्यु हुई। जहाँ बण्डोली नामक स्थान पर उनका स्मारक बना हुआ है। प्रताप के जीवन और उनके कार्यक्षेत्रों से सम्बन्धित स्थलों में चित्तौड़, कुम्भलगढ़, हल्दीघाटी, उदयपुर, गोगुन्दा, सायरा, मचीन्द, रोहिड़ा, उबेश्वर, कमलनाथ – आवरगढ़, दिवेर, जावरमाला, बलिया, परसाद, चावण्ड हैं। जो देश–विदेश के पर्यटकों के लिए प्रेरणा स्थल है।

जब 1568 में भारत गौरव मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ पर मुगलों का आधिपत्य हो गया और वह भी हजारों राजपूत नर नारियों के रक्तपात जौहर के साथ ही असंख्य निर्दोषों ब्राह्मणों, वैश्यों समस्त वर्गों पर अत्याचार, शोषण, दमन को देखते हुए पिता उदयसिंह के मुगल विरोधी स्वदेश, स्वधर्म की रक्षार्थ महाराणा प्रताप उदयपुर गिरवा में स्थापित नवीन राजधानी से गोगुन्दा, कुम्भलगढ़ में रहते छापा मार रण प्रणाली से पिता की मृत्यु सन् 1572 तक लड़ता रहा। पिता की मृत्यु के संकट में उदयसिंह के चहेते पुत्र जगमाल के गद्दी पर बैठने, अन्य भाइयों द्वारा मेवाड़ राज्य का विभाजन में अकबर ने मेवाड़ राजघराने में फूट डालकर प्रताप को सिंहासन राज्यविहिन करने की कुटनीति अपनायी, परन्तु मेवाड़ के स्वामी भक्त सामन्तों ने गोगुन्दा में जगमाल को राजपद से हटाकर महाराणा प्रताप को सिंहासनासिन कर उसके साथ मेवाड़ की स्वाधीनता के लिए व सभी सामन्तों, सलाहकारों ने एकजूट होकर प्रताप की ''मेवाड़ धरा आजाद रहे'' यानि तलवार की शपथ, घोड़े की शपथ, वीर भूमि मातृभूमि चित्तौड़ की शपथ लेकर आगामी 25 वर्षों तक सीमित, आर्थिक व सैन्य संसाधनों के होते हुए भी महाराणा प्रताप के साथ आम जन–जन ने समर्पण के साथ सहयोग दिया। उदयपुर से चित्तौड़ के बीच ब्राह्मण, गुर्जर, जाट, भील इत्यादि सभी वर्ग के लोगों ने मेवाड़ की रक्षा में जो भूमिका

निभाई की वह प्रताप के महान त्याग, उज्जवल चरित्र, उच्चादर्शों के कारण ही सम्भव था। यह एक दीर्घकालीन जनयुद्ध था। जिसमें शस्त्रोपजीवी मालवीय, लौहार, गाडोलिया लुहार, सुथार, जाट जणवा, वैरागी, तेली, माली, सेवक, चारण, राव, भाट, भील जैसे सभी लोगों ने मेवाड़ के मैदानी व अरावली की पर्वतमाला में मुगलों के विरूद्ध देश की आजादी का संघर्ष किया था।

पाद टिप्पणियाँ –

1) महाराणा प्रताप स्मृति ग्रंथ डॉ. देवीलाल पालीवाल सम्पादित, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर, पृष्ठ 84–85

2) महाराणा प्रताप जे. एम. शेलेट

3) गौ.शं. हीरा चन्द ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, प्रथम भाग

4) टॉड राजस्थान, हिन्दी अनुवाद – केशव कुमार ठाकुर

5) कविराज श्यामलदास, वीर विनोद, प्रथम एवं द्वितीय खण्ड

6) टॉड राजस्थान, अंग्रेजी अनुवाद, ब्रुक्स

7) आईन–ए–अकबरी, भाग 3, हिन्दी अनुवाद, मृदुल

8) मेवाड़ रेजीडेन्सी, गजेटियर, 1909 के. डी. अर्सकिन

9) ब्रुक्स, हिस्ट्री ऑफ मेवाड़

10) मेवाड़ के महाराणा और शहंशाह अकबर, श्री राजेन्द्र शंकर भट्ट

11) ''दी रूलिंग प्रिंसेज चीफ्स एण्ड लीडिंग परसर्नस इन राजपूताना एण्ड अजमेर'' – सी. एस. बेले, सन् 1908

अध्याय तृतीय

मेवाड़ के जागीरदार एवं कतिपय ऐतिहासिक घरानों की पृष्ठभूमि

अध्याय तृतीय – मेवाड़ के जागीरदार एवं कतिपय ऐतिहासिक घरानों की पृष्ठभूमि

3.0 मेवाड़ के प्रमुख जागीरदार

3.1 भोमट के जागीरदार

3.2 मेवाड़ भील कोर की स्थापना (1841 ई.)

3.3 मेवाड़ राज्य – शासन के अन्तर्गत भोमट के ठिकानेदारों के न्यायिक अधिकार

3.4 राणा पूंजा (1572–1610 ई.)

3.5 मेवाड़ प्रशासन के विभिन्न कार्यालय (कारखाने)

3.6 मेवाड़ प्रशासन के सहयोगी – ब्राह्मण वर्ग

3.7 मेवाड़ प्रशासन के सहयोगी वैष्य/जैन वर्ग

3.8 मेवाड़ रियासत के प्रसिद्ध ऐतिहासिक घराने

पाद टिप्पणियाँ

अध्याय : तृतीय

मेवाड़ के जागीरदार एवं कतिपय ऐतिहासिक घरानों की पृष्ठभूमि

3.0 मेवाड़ के प्रमुख जागीरदार –

1) **बड़ी सादड़ी** – (हलवद काठियावाड़) यहाँ के झाला सरदार अज्जा महाराणा सांगा के संग खानवा के युद्ध में काम आये। इनके पुत्र सिंहा विक्रमादित्य के समय बहादुर शाह से युद्ध में चित्तौड़गढ़ पर हनुमान पोल में काम आये एवं आसा बनवीर उदयसिंह के समय युद्ध में काम आया। सुलतान भी उदयसिंह के संग युद्ध में सूरज पोल में काम आया। वीदा (झाला मन्ना) महाराणा प्रताप संग हल्दीघाटी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुआ एवं देदा रणकपुर के युद्ध में काम आया।

2) **देलवाड़ा** – (झाला) सज्जा महाराणा विक्रमादित्य के समय हनुमान पोल पर बहादुर शाह के साथ युद्ध में काम आया। जैत सिंह अकबर से युद्ध में चित्तौड़गढ़ में काम आया। मान सिंह महाराणा प्रताप संग हल्दीघाटी में वीरगति को प्राप्त हुए एवं कल्याण सिंह ने गोगुन्दा के शाही थाने पर रक्षा करते हुए वीरगति प्राप्त की।

3) **गोगुन्दा** – (झाला) यहाँ के झाला शत्रुशाल ने रावल्या गाँव, गोगुन्दा के शाही थाने की सुरक्षा करते हुए वीरगति प्राप्त की।

4) **बेदला** – (मेनपुरी, उ.प्र. के चौहान) चन्द्र भान चौहान महाराणा सांगा संग खानवे के युद्ध में काम आया। संग्राम सिंह चित्तौड़ की रक्षार्थ अकबर से युद्ध में काम आया। ईश्वर दास – चाचा अकबर से चित्तौड़ की रक्षा में वीरगति को प्राप्त हुआ।

5) **कोठारिया** – (राजौर के चौहान) माणिक चन्द चौहान महाराणा सांगा के बाबर के संग पानीपत युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए। साहिब खान चित्तौड़ रक्षार्थ अकबर के युद्ध में काम आया एवं विजय सिंह होल्कर के साथ युद्ध में काम आया।

6) **बीजोलियाँ** – (गजनेर/मारवाड़ के पँवार) अशोक पँवार, महाराणा सांगा के समय बाबर से युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए।

7) **सरदारगढ़** – (काठियावाड़ी डोड़िया) राव सिंह डोड़िया, महाराणा लाखा की माता को बचाने, काबों से युद्ध करता हुए वीरगति को प्राप्त हुआ। भाण सिंह एवं साण्डा, बहादुर शाह से चित्तौड़ रक्षार्थ काम आये एवं भीम सिंह डोड़िया महाराणा प्रताप संग हल्दीघाटी के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुआ।

8) **बदनोर** – (नागौर मारवाड़ से दूदा मेड़तिया राठौड़) रत्न सिंह राठौड़ महाराणा सांगा संग खानवा के युद्ध में काम आया। वीरम देव बाबर से एवं जय मल चित्तौड़ रक्षार्थ अकबर से युद्ध में काम आया। राम दास महाराणा प्रताप संग हल्दीघाटी युद्ध में एवं मुकन्द दास महाराणा अमर सिंह के समय रणकपुर के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए। जसवन्त सिंह माण्डल के युद्ध में काम आए।

9) **बड़ी रूपाहेली** – (जयमल के प्रपौत्र श्यामल सिंह के वंशज) कुबेर सिंह राठौड़ मरहठों से युद्ध में काम आए। गोपाल दास, सिंधिया के साथ युद्ध में अपने तीन भाइयों, चार काका एवं 140 साथियों सहित वीरगति को प्राप्त हुए।

10) **नीमड़ी** – (महेचा राठौड़) वीरवर कल्ला राठौड़ अकबर से चित्तौड़ की सुरक्षा करते वीरगति को प्राप्त हुआ एवं बाघ सिंह महाराणा

प्रताप संग हल्दीघाटी युद्ध में काम आए। चन्दन सिंह महाराणा अमर सिंह के समय युद्ध में काम आए तथा मोहन दास ऊँटाले के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए।

11) **झीलवाड़ा** – (गुजरात के सोलंकी) भैरव सिंह सोलंकी चित्तौड़ की रक्षार्थ भैरव पोल पर युद्ध में काम आए।

12) **तँवर** – (ग्वालियर के तँवर) रामशाह तँवर अपने तीन पुत्रों के साथ महाराणा प्रताप के संघ हल्दीघाटी के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए।

13) **सोनगरा** – (पाली के चौहान) मान सिंह सोनगरा महाराणा प्रताप संग हल्दीघाटी के युद्ध में एवं भाण सिंह सोनगरा कुम्भलगढ़ के युद्ध में काम आए।

14) **केलवा** – (गुड़ा नगर से, जैतमाल राठौड़) वीदा राठौड़, सेवन्त्री में राणा सांगा को जयमल से युद्ध में बचाते समय वीरगति को प्राप्त हुए। नेत सिंह महाराणा उदय सिंह के समय चित्तौड़ युद्ध में काम आए। शंकर दास महाराणा प्रताप संग हल्दीघाटी रणक्षेत्र में, अपने दो भाइयों एवं पुत्र सहित वीरगति को प्राप्त हुए। नरहर दास महाराणा अमर सिंह के साथ युद्ध में लड़ा एवं किशन दास भौमट के भौमियों से लड़ाई में हल्दु घाटी में काम आया, इन्हें केलवा मिला। वीर भाण महाराणा राज सिंह के समय माण्डलगढ़ के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए एवं आनन्द सिंह राठौड़, औरंगजेब से राजसमन्द की पाल पर तालाब एवं गौ रक्षार्थ वीरगति को प्राप्त हुआ, इन्हें आगरिया गाँव मिला।

मेवाड़ में बाहर से आये राजपूत वंश

झाला	चौहान	राठौड़	पँवार	डोड़िया	सोलंकी	भाटी	चावड़ा
बड़ी सादड़ी	बेदला	बदनौर	बिजौलिया	सरदारगढ़	रूपनगर	मोही	आर्ज्या
देलवाड़ा	कोठारिया	घाणेराव	बंबोरी		झीलवाड़ा	मुरोली	कलड़वास
गोगुन्दा	फलीचड़ा	श्रामपुरा	सियाणा		आकोला	वातीणो	वांस
ताणा	थामला	केलवा	कासेंडी		बंडोली	ऊँचा	
झाड़ोल	पिपली	बड़ीरूपाहेली			ढोरिया		
ओलादर		डाबला					
		नीमड़ी					
		आगरिया					
		लाधुड़ा					
		कणतोड़ा					
		जगपुरा					
		ईटाली					
		बामणिया					
		दाँतड़ा					
		रालवा					
		ढ़ोली					
		कटार					
		छोटीरूपाहेली					
		बरोल					

मेवाड़ का राज परिवार एवं कुटुम्ब की खापें एवं ठिकाने

राणावत	चुण्डावत	सांरगदेवोत	वीरमदेवोत	शक्तावत	पुरावत
बनेड़ा	सलूम्बर	कानोड़	हमीरगढ़	भीण्डर	मंगरोप
बागोर	आमेट	बाठरड़ा	खैराबाद	बान्सी	सिंगोली
करजाली	देवगढ़	लक्ष्मणपुरा	महुवा	बोहेड़ा	आठूण
शाहपुरा	बेगूं		सनवाड़	पीपल्या	गुरलां
शिवरती	चावण्ड		पहुँना	विजयपुर	गाडरमाला
कारोई	भदेसर		काकरवा	हींता	सूरावास
बावलास	मेजा		जयताणा	सेमारी	
नेतावल	कुराबड़		राणावतों –	रूद	
धनेरिया	करेड़ा		की सादड़ी	सियाड़	
भुणास	भैंसरोड़गढ़		वासनी	पानसल	
अमरगढ़	बैमाली			कूंथवास	
पीलाधर	बम्बोरा			बिनोता	
धरियावद	लूणदा				
बड़ल्यास	थाणा				
केर्या	भगवानपुरा				
आमलदा	लसाणी				
जामोली	साटोला				
परसाद	दौलतगढ़				
बाँसड़ा	जीलोला				
	ताल				
	ज्ञानगढ़				
	तलोली				
	भादू				
	संग्रामगढ़				
	बस्सी				
	आसींद				

3.1 भोमट के जागीरदार –

पानरवा का सोलंकी ठिकाना भूतपूर्व मेवाड़ राज्य के भोमट भूभाग में स्थित था। भोमट भू–भाग अरावली पर्वतमाला का सर्वाधिक बीहड़ और वनीय भाग है, जो सदियों से मैदानी भागों से अलग–थलग बना रहा। इस इलाके के मूल निवासी जनजाति समुदाय के लोग है, जो राजस्थान के अलावा मध्यप्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र के कुछ भागों में फैले हुए हैं। ये लोग सदियों से आत्मनिर्भर जीवन यापन करते रहे। उनकी सामाजिक व्यवस्था, धर्म एवं संस्कृति अपने प्राचीनतम रूप में बनी रही। राजनैतिक दृष्टि से भी लगभग ग्यारहवीं शताब्दी तक उनकी कबीलाई व्यवस्था निर्बाध रूप से चलती रही। किसी बाहरी राजनैतिक शक्ति ने उन पर अपना स्थाई अधिकार जमाने की कोशिश नहीं की। किन्तु भारत के उत्तरी पश्चिमी भाग से होने वाले विदेशी जातियों के अनवरत आक्रमणों के परिणामस्वरूप भारत के उत्तरी, मध्य एवं पश्चिमी भागों की शासक राजपूत जातियाँ शक्तिहीन एवं छिन्न–भिन्न होने लगी और उनकी शाखाऐं अपने मूल स्थानों से उखाड़े जाने के कारण अपने गुजारे के लिए नए स्थान ढूंढ़ने लगी। इसी प्रक्रिया के फलस्वरूप कतिपय राजपूतवंशी गिरोह भोमट के इस घने दुर्गम पहाड़ी भाग में घुस आये और धीरे–धीरे सम्पूर्ण इलाके को आपस में बांट लिया। आदिम सामाजिक एवं सैनिक व्यवस्था पर आधारित भील कबीलों को अधीन करने में उन्हें विशेष कठिनाई नहीं हुई। प्रारम्भ में यदुवंशियों ने दक्षिण की ओर से इस इलाके में प्रवेश किया और वाकल नदी के किनारे पर स्थित पानरवा वाले अत्यन्त दुर्गम वनीय पहाड़ी भाग पर अपना वर्चस्व स्थापित किया उसके बाद दो चौहान खींची एवं सोनगरा राजपूतवंशीय शाखाओं ने अलग–अलग समय में प्रवेश करके जवास एवं पहाड़ा तथा जूड़ा क्षेत्रों पर अपना अधिकार जमा लिया। उनके बाद सिरोही की ओर से सोलंकी राजपूतवंशियों ने इस इलाके में प्रवेश

करके यदुवंशियों से पानरवा इलाका छीन लिया और उत्तर में ओगणा तक एवं पश्चिम में उमरिया तक अपना विस्तार किया। ये घटनाऐं बारहवीं से चौदहवीं शताब्दियों के मध्य हुई। उसके बाद सिसोदियों की सारंगदेवोत शाखा ने मादड़ी एवं पंवारों ने पाटिया में अपना अधिकार जमाया। इन लोगों में अपनी भूमि अथवा क्षेत्र–विस्तार को लेकर आपस में लड़ाई नहीं हुई। ये राजपूतवंशी ठिकानेदार भी स्वतन्त्र राज्यों की भांति बने रहे। मेवाड़, मारवाड़, गुजरात आदि की ओर से भोमट पर प्रभुत्व स्थापित करने के प्रयास नहीं किए गए। अवश्य ही मेवाड़ के सिसोदियावंशी राजाओं के साथ उनके भावनात्मक सम्बन्ध रहे और लगभग समानता के आधार पर वे संकट काल में मेवाड़ के शासकों को सहयोग देते रहे, किन्तु अंग्रेज सरकार द्वारा अपना प्रभुत्व स्थापित करने से पहले वे मेवाड़ के महाराणा के अधीन जागीरदार नहीं रहे और वे स्वतन्त्र ठिकानेदार बने रहे।

भोमट में यादव, चौहान, सोलंकी और सिसोदिया राजपूतों का आधिपत्य –

भोमट के क्षेत्र में सबसे पहले यादव लोगों ने गुजरात की ओर से आकर बारहवीं शताब्दी में प्रवेश किया और उन्होंने गुजरात के ईडर इलाके से सटे हुए पानरवा भूभाग पर अधिकार कर लिया। उनके बाद चौहान राजपूत गिरोह भोमट में प्रविष्ट हुए। चौहान राजपूत दो अलग–अलग समूहों में आए। ये चौहान सांभर से निकल कर आये थे। एक समूह सांभर से निकल कर सीधा भोमट की ओर आया, वे सांभरिया चौहान कहलाये। दूसरा समूह सांभर से निकल कर पूर्व की ओर गया, जहाँ से लौटकर भोमट की ओर आया, वे पूरबिया चौहान कहलाए।[1] ये लोग प्रारम्भ में वागड़ में प्रविष्ठ हुए, उनमें से कुछ लोग भोमट में आए। कविराजा श्यामलदास ने उनको वागड़िया चौहान लिखा है।[2]

1262 ई. में जब मेवाड़ पर रावल तेजसिंह का शासक था, सांभर के राव लखमसी के वंशज गांगा और माना (माणक) दो चौहान भ्राताओं ने अपने सैनिकों के साथ वागड़ के देवसोमनाथ की ओर से भोमट के पूर्वी भाग में प्रवेश किया। वे स्वयं को खींची चौहान कहते हैं। उन्होंने भोमट के उस इलाके के भील सरगिरोह बांसिया जोगराज गमेती को मार कर 700 गांवों वाले खेड़ा (खरड़) भूभाग पर अपना अधिकार जमा लिया। दोनों भ्राताओं ने इस भूभाग को आपस में बांट लिया। गांगा ने पहाड़ा (पाड़ा) वाला भाग लिया और माना को जवास वाला भूभाग मिला। जवास खेरवाड़ा से छः मील दूर है। 1930 ई. में जवास ठिकाने में 78 गांव शामिल थे। ठिकाने की आमदनी 45,037 रूपये वार्षिक थी। ठिकाने की ओर से मेवाड़ दरबार को 2500 रूपये वार्षिक दसूंद के दिए जाते थे। जवास ठिकाने में मेवाड़ दरबार की चाकरी के तौर पर 43 हथियारबन्द सिपाही नौकर रखने पड़ते थे, जिनका उपयोग ठिकाने के पुलिस प्रबन्ध में किया जाता था। ठिकानेदार को मेवाड़ दरबार की ओर से अपने ठिकाने के भीतर प्रथम श्रेणी के दीवानी एवं फौजदारी अधिकार मिले हुए थे।[3]

पहाड़ा (पाड़ा) खेरवाड़े से 12 मील दूरी पर है। 1930 ई. में इस ठिकाने में 42 गाँव शामिल थे। ठिकाने की वार्षिक आय 15,238 रूपये थी। ठिकाने की ओर से मेवाड़ दरबार को 706 रूपये वार्षिक दसूंद के दिए जाते थे। ठिकाने में मेवाड़ दरबार की चाकरी के तौर पर 15 हथियारबन्द सिपाही नौकर रखे जाते थे। ठिकानेदार को मेवाड़ दरबार की ओर से अपने ठिकाने के भीतर मेवाड़ दरबार की ओर से द्वितीय श्रेणी के दीवानी एवं फौजदारी मिले हुए थे।[4]

चौहानों की दूसरी सोनगरा शाखा मारवाड़ की ओर से भोमट में प्रविष्ठ हुई। 1398 ई. में पत्ता चौहान की ओर से आकर जूड़ा के भील सरगिरोह

जुगजा गमेती को मार कर उसके गाँवों पर कब्जा कर लिया। जूड़ा से 13 मील दूरी पर है। 1930 ई. में इस ठिकाने से 176 गांव शामिल थे। ठिकाने की वार्षिक आय 43,103 रूपये थी और ठिकाने की ओर से 600 रूपये वार्षिक दसूंद मेवाड़ दरबार को दी जाती थी तथा 40 हथियारबन्द सिपाही नौकर रखे जाते थे। ठिकानेदार को अपने ठिकाने के भीतर प्रथम श्रेणी के दीवानी एवं फौजदारी अधिकार दरबार की ओर से मिले हुए थे।[5]

सोलंकी राजपूतों की शाखा सिरोही की ओर से भोमट में आई। 1478 ई. में अक्षयराज सोलंकी ने यादव राजपूत को मार कर पानरवा पर कब्जा किया। पानरवा कोटड़ा से 14 मील दूर पूर्व में वाकल नदी के तट पर बसा हुआ है। 1930 ई. में पानरवा में 101 गांव शामिल थे। पानरवे ठिकाने की वार्षिक आय 15,637 रूपये थी और उसको दसूंद के 500 रूपये वार्षिक मेवाड़ दरबार को देने पड़ते थे साथ ही पानरवा ठिकानेदार को 25 हथियारबंद सिपाही भी नौकर रखने पड़ते थे। इस ठिकाने को मेवाड़ दरबार की आरे से प्रथम श्रेणी के दीवानी एवं फौजदारी अधिकार मिले हुए थे।[6] पानरवा सोलंकी ठिकानेदारों का वर्तमान वंशधर राणा मनोहरसिंह है।

ओगणा का सोलंकी ठिकाना पानरवा ठिकाने से निकला। पानरवा में सोलंकी आधिपत्य के संस्थापक की चौथी पीढ़ी में हरपाल हुआ। हरपाल ने अपने दूसरे पुत्र नाहरू को ओगणा के निकट कई गांव पानरवा से थे। बाद में नाहरू ने उस समय ओगणा पर काबिज उदयराज ब्राह्मण से ओगणा छीन लिया था। ओगणा से 21 मील दूर उत्तर–पूर्व में स्थित है। ओगणा वाकल नदी के बायें किनारे पर बसा हुआ है। मेवाड़ दरबार ओर से ठिकाने में 46 गांव शामिल थे। ठिकाने की वार्षिक आय 10,750 रूपये थी और उसको 400 रूपये दसूंद मेवाड़ दरबार को देने पड़ते थे। ठिकानेदार को ठिकाने में 20 हथियारबंद सिपाही रखने पड़ते थे। ठिकानेदार को द्वितीय श्रेणी के दीवानी

एवं फौजदारी अधिकार मिले हुए थे।[7] ओगणा के सोलंकियों का वर्तमान वंशधर करणसिंह हैं।

भोमट में सोलंकियों के प्रवेश के लगभग पचास वर्ष बाद मेवाड़ के सारंगदेवोत सिसोदिया ठिकाने की एक शाखा ने मेवाड़ की ओर से भोमट के मादड़ी इलाके में आकर अपना अधिकार जमाया। 1546 ई. में ने मादड़ी पर कब्जा किया। मादड़ी खेरवाड़ा से उत्तर–पूर्व में 30 मील दूरी पर है। 1930 ई. में ठिकाने में शामिल थे। ठिकाने की वार्षिक आय 7375 रूपये थी और 500 रूपये वार्षिक दसूंद के मेवाड़ दरबार को दिए जाते थे। ठिकाने में 20 हथियारबंद सिपाही नौकर रखे जाते थे। ठिकानेदार को तृतीय श्रेणी के दीवानी एवं फौजदारी अधिकारी मिले हुए थे।[8]

भोमट ठिकानों द्वारा महाराणा की मातहती स्वीकार –

नवम्बर, 1830 ई. में ब्रिटिश सरकार की मेवाड़ एजेन्सी का कार्यालय उदयपुर से हटाकर नीमच स्थानांतरित किया गया। भोमट में फिर भी पूर्ण शांति कायम नहीं रही। पहाड़ी इलाके में मेवाड़ द्वारा नियुक्त सिंधी मुसलमान, के अत्याचारों के कारण भील हिंसात्मक कार्यवाही करने लगे। रूपल और मुंडोती के ठाकुरों के विरूद्ध शिकायतें प्राप्त हुई। मेवाड़ दरबार उनके विरूद्ध कार्यवाही करने में असफल रहा। उधर जूड़ा ठिकाने में कुछ हिंसात्मक घटनाऐं हुई।

3.2 मेवाड़ भील कोर की स्थापना (1841 ई.) –

इसी दौरान 30 जून, 1836 ई. को ले. कर्नल स्पीयर्स ने ब्रिटिश सरकार को सुझाव दिया कि भोमट से स्थायी शांति और सुप्रबन्ध के लिए भीलों की एक पल्टन बनाना आवश्यक है, जिसके व्यय में महाराणा से मदद ली जाए। स्पीयर्स ने अपने पत्र में यह राय भी दी कि ब्रिटिश सरकार को भी इस

पलटन को कायम करने में आर्थिक भार उठाना चाहिए, ''चूंकि यह वही पहाड़ी इलाका था, जिसके जंगलों में रहकर मेवाड़ के महाराणाओं ने मुगल बादशाह की शक्ति का सफलतापूर्वक सामना किया था।'' किन्तु ब्रिटिश सरकार इस बात पर अड़ी रही कि भील पलटन का सारा व्यय महाराणा ही वहन करें। महाराणा केवल इस बात पर राजी हुआ कि वह भोमट के ठिकानों से प्राप्त होने वाली दसूंद राशि तथा मेरवाड़ा एवं खेरवाड़ा की आय भील पल्टन के व्यय के लिए देगा। किन्तु वह राशि पर्याप्त नहीं थी।[9]

भोमट की वास्तविक (Defacto) शासक – ब्रिटिश सरकार –

उपरोक्त व्यवस्था के बाद कानूनन (Dejure) भोमट के ठिकानों का प्रबन्ध मेवाड़ दरबार के पास आ गया। केवल जूड़ा ठिकाने की देखरेख कोटड़ा छावनी के अंग्रेज अधिकारी असिस्टेंट पोलिटिकल सुपरिटेंडेंट के अधिकार में रही, किन्तु व्यावहारिक तौर पर (Defacto) भोमट पर प्रभुत्व मेवाड़ के लिए नियुक्त ब्रिटिश रेजिडेंट की मार्फत ब्रिटिश सरकार का बना रहा। मेवाड़ दरबार की ओर से इन ठिकानों में अपना प्रभाव अथवा वर्चस्व बढ़ाने के लिए कोई निश्चित प्रयास नहीं किए गए, उनका कारण मेवाड़ दरबार के शासन की कमजोरियाँ और दुर्व्यवहार तथा उसके अधिकारियों एवं कर्मचारियों की अक्षमता, घने जंगल और सुरक्षा व्यवस्था का अभाव भी कारण रहे। मेवाड़ दरबार में भोमट के इन ठिकानेदारों की क्या प्रतिष्ठा, पद एवं सम्मान रहे तथा दरबार में उनको किस श्रेणी में स्थान मिले, इन बातों को लेकर भी महाराणा और उनके बीच मतभेद चलते रहे। भोमिया सरदार मेवाड़ के जागीरदारों के मुकाबले 'भूम' में अपने स्वतन्त्र अधिकार के आधार पर प्रथम श्रेणी के जागीरदारों से भी ऊंचे स्थान एवं प्रतिष्ठा की मांग करते रहे। यह भी सही है कि अंग्रेज सरकार के हस्तक्षेप एवं सहयोग के कारण ही भोमट के इन ठिकानेदारों को मेवाड़ के महाराणा की अधीनता की स्थिति में लाया

जा सका था। शान्ति और व्यवस्था का कार्य सदैव अंग्रेज अधिकारियों के पास रहा। महाराणा का प्रशासन इस सीमा तक असफल रहा कि न केवल भोमट के भील क्षेत्र में अपितु मेवाड़ के शेष भील क्षेत्र मगरा में भी शांति कायम करने हेतु अंग्रेज सरकार को हस्तक्षेप करना पड़ा जिसमें मेवाड़ भील कोर का भी उपयोग किया गया।

3.3 मेवाड़ राज्य – शासन के अन्तर्गत भोमट के ठिकानेदारों के न्यायिक अधिकार –

नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत मेवाड़ दरबार द्वारा भोमट में प्रशासन व्यवस्था की दृष्टि से खेरवाड़ा में एक हाकिम नियुक्त किया गया। इस भांति भोमट में सीधा ब्रिटिश प्रशासन समाप्त हो गया, किन्तु मेवाड़ भील कोर कमांडिंग अफसर आगे भी ब्रिटिश सरकार का अधिकारी बना रहा। मेवाड़ दरबार द्वारा भोमट के विभिन्न ठिकाने को निम्नानुसार न्यायिक अधिकार प्रदान किए गए[10] –

ठिकाना	ठिकानेदार का नाम	ठिकानेदार की उपाधि	जाति	वार्षिक आय (रूपये)	दसूंद (वार्षिक रूपये)	हथियारबंद सिपाही*	न्यायिक अधिकार	
							दीवानी	फौजदारी
जवास	तख्तसिंह	रावत	चौहान राजपूत	45037	2500	43	5000	(1)
पहाड़ा	बदनसिंह	रावत	चौहान राजपूत	15238	706	15	3000	(2)
मादड़ी	दौलतसिंह	रावत	सारंगदेवोत राजपूत	7345	501	14	1000	(3)
थाना	रणजीतसिंह	ठाकुर	चौहान राजपूत	5396	225	–	1000	(3)
छानी	मनोहरसिंह	ठाकुर	चौहान राजपूत	5695	500	–	1000	(3)
जूड़ा	शिवसिंह	रावत	चौहान राजपूत	43103	600	40	5000	(1)
पानरवा	मोहब्बतसिंह	राणा	सोलंकी राजपूत	15637	500	25	3000	(2)
ओगणा	उदयसिंह	रावत	सोलंकी राजपूत	10750	400	20	3000	(2)
उमरिया	विजयसिंह	ठाकुर	सोलंकी राजपूत	10000	150	–	3000	(2)
पाटिया	भवानीसिंह	ठाकुर	पंवार राजपूत	3000	201	–	–	–

1) प्रथम श्रेणी के फौजदारी अधिकार, अधिकतम दो वर्ष की सजा और 500 रूपये तक का जुर्माना।

2) द्वितीय श्रेणी के फौजदारी अधिकार, अधिकतम एक वर्ष की सजा और 300 रूपये तक का जुर्माना।

3) तृतीय श्रेणी के फौजदारी अधिकार, अधिकतम छः महीनों की सजा और 100 रूपये तक का जुर्माना।

Biographical sketches of the Chiefs of Mewar by Col. C.K.M. Walter के अनुसार।

Chiefs and Leading Families पुस्तक के अनुसार जवास के लिए 23 सिपाही और मादड़ी के लिए 14 सिपाही निश्चित किये गये थे। (राज्य प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, उदयपुर, ग्रंथ सं. 2680)

Ruling Princes, Chiefs and Leading Personages in Rajputana by C.S. Bayley (P. 182) के अनुसार जूड़ा के लिए 50 सिपाही निश्चित किए गए थे।

3.4 राणा पूंजा (1572–1610 ई.) –

28 फरवरी, 1572 ई. को महाराणा उदयसिंह का देहावसान गोगूंदा में हुआ। उसका ज्येष्ठ पुत्र प्रतापसिंह मेवाड़ का महाराणा बना। उसके राज्यारोहण के समारोह में पानरवे का राणा अपने धुनर्धर भीलों के साथ शरीक हुआ। किन्तु वह राणा दूदा था अथवा राणा पूंजा ? इसमें कोई संदेह नहीं है कि दूदा एक या दो वर्ष से अधिक पानरवे का शासक नहीं रहा। अधिक संभव है कि दूदा की मृत्यु महाराणा उदयसिंह की मृत्यु से पहले हो गई और महाराणा प्रतापसिंह की गद्दीनशीनी के जश्न में पानरवा का राणा पूंजा शरीक हुआ।

वह 28 फरवरी, 1572 ई. के दिन महाराणा प्रतापसिंह के राज्यारोहण के समय कुम्भलगढ़ में अपने धुनर्धारी भील सैनिकों के साथ मौजूद था। महाराणा प्रतापसिंह के राज्यारोहण उत्सव में मेवाड़ के सभी बड़े–छोटे सरदार जो चित्तौड़ के जौहर से बचे थे, शामिल हुए। उनके अलावा ग्वालियर का राजा रामशाह (रामसिंह) और उनके तीन पुत्र जोधपुर का राव चन्द्रसेन राठौड़, प्रताप का मामा पाली का राव मानसिंह सोनगरा अपने भ्राताओं सहित, ईडर का राव नारायणदास राठौड़ और सम्भवतः पठान सरदार हकीम खाँ सूर आदि मौजूद थे।

इस अवसर पर महाराणा प्रताप और उसके सहयोगियों ने मेवाड़ की स्वतन्त्रता की रक्षा की योजना बनाई और मेवाड़ के पहाड़ों में मुगल सेनाओं से लड़ने की छापामार युद्ध प्रणाली की रूपरेखा तैयार की। इस रणनीति की मुख्य बातें थीं –

1) 300 मील की परिधि वाले मेवाड़ के पहाड़ी प्रदेश के भीतर प्रवेश करने वाले सभी मार्गों की नाकेबंदी करना और वहां पर शत्रु के प्रवेश करते समय पहाड़ों के पीछे से निकल कर उस पर अचानक आक्रमण करके उसके जन–धन को हानि पहुँचाना। पहाड़ों में आने पर शत्रु के साथ इसी प्रकार की छापा मार लड़ाई करना।

2) राज्य के कोषागार और शस्त्रागार की सुरक्षा का प्रबन्ध करना।

3) पहाड़ों में आवागमन और संचार व्यवस्था तथा तीव्रगामी सूचना की व्यवस्था करना।

4) राजपरिवार, सामंतों, अधिकारियों आदि की स्त्रियों एवं बच्चों की सुरक्षित स्थलों पर रक्षा करना।

इन सभी उपरोक्त कार्यों में भीलों की प्रधान भूमिका रही। पानरवा राणा पूंजा के नेतृत्व में पानरवा और ओगणा के सोलंकी ठिकानेदारों ने इन सब कार्यवाहियों में बढ़ चढ़कर भाग लिया। भोमट के अन्य राजपूत ठिकानों मादड़ी, जवास, जूड़ा, मेरपुर, पहाड़ा आदि के सरदारों ने भी अपने भील सैनिकों के साथ राणा प्रताप को सहयोग प्रदान किया। चूंकि इन सब ठिकानों की अधिकांश प्रजा भील थी और सिपाही भी भील थे अतएव इन ठिकानेदारों के भीलों के सरदार अथवा कहीं कहीं भील सरदार लिखा मिलता है। इससे यह भ्रम फैला कि ये भोमिया राजपूत ठिकानेदार भोमिया भील हैं।

राणा पूंजा का भील सैनिकों के साथ हल्दीघाटी की लड़ाई में भाग लेना –

1572 ई. से 1575 ई. तक महाराणा प्रताप मुगल बादशाह अकबर के साथ ''आश्वासन देने और बहाना बनाने'' की कूटनीति द्वारा लड़ाई को टालता रहा। इस काल के दौरान उसने पहाड़ों में रक्षात्मक युद्ध की पूरी तैयारी कर ली। आखिरकार 1576 ई. के जून माह में कछवाहा राजकुमार मानसिंह 5000 मुगल सेना लेकर मेवाड़ पर चढ़ आया। उस समय महाराणा प्रताप ने मानसिंह की सेना के साथ पहाड़ों से बाहर निकल कर लड़ने का निश्चय किया। चेटक घोड़े पर सवार महाराणा प्रताप ने अपनी 3000 अश्वारोही और पैदल सेना तथा हाथियों को लेकर 18 जून, 1576 ई. के दिन हल्दीघाटी के बाहर निकलकर खमणोर के मैदान में मुगल सेना पर आक्रमण किया और प्रारम्भ में अधिकांश मुगल सेना को छः कोस तक भगा दिया। भील सैनिक मैदानी लड़ाई के अभ्यस्त नहीं थे, अतएव राणा पूंजा के भील सैनिक मेवाड़ी सेना के चंदावल भाग में पहाड़ों पर ही रहे। राणा पूंजा प्रताप की सेना के चंदावल भाग पर नियुक्त था जहां उसके साथ पुरोहित गोपीनाथ, पुरोहित जगन्नाथ, बच्छावत जयमल, मेहता रत्नचन्द खेतावत, जगन्नाथ, चारण जैसा और केशव आदि भी सेना के पिछले भाग में थे, जो लड़ाई के मैदान में नहीं उतरे।[11] वीरविनोद में राणा पूंजा को मेरपुर का राणा पूंजा और भीलों का सरदार लिखा है। जिसका आशय यही है कि राणा पूंजा भील सैनिकों का नेता था। आगे वीरविनोद में उसको पानरवे के भीलों का सरदार लिखा है।[12] सम्भव है उस समय तक पानरवे के सोलंकी ठिकाने का प्रभाव मेरपुर तक रहा हो।

3.5 मेवाड़ प्रशासन के विभिन्न कार्यालय (कारखाने) –

1)	धर्म सभा	2)	खासा पाणेरा
3)	सेज की ओवरी	4)	लवाजमा का कारखाना
5)	महक्मा खास	6)	जलेबदार
7)	छड़ीदार	8)	खासा रसोड़ा
9)	हिसाब दफ्तर	10)	महसाणी का विभाग
11)	बन्दुक दार	12)	फरास खाना
13)	कपड़दार	14)	पाण्डे की ओवरी
15)	अंगोलिया की ओवरी	16)	तंबोलखाना
17)	पिलकखाना	18)	बरछीदार
19)	तख्त का कारखाना	20)	घड़ीयाल वाला
21)	कौठार	22)	चौकी के सरदार
23)	अर्दली के जवान	24)	नगीना वाड़ी
25)	जंगी फौज, पुलिस, गार्ड	26)	बैण्ड
27)	रिसाला के सवार	28)	हाउस होल्ड
29)	अतिथि गृह	30)	स्पेशल ट्रेन
31)	मोटर कार	32)	कपड़ द्वार
33)	रोकड़ रा भण्डार	34)	सिल्हखाना

35) देवस्थान की कचहरी 36) रावली दुकान

37) शिल्पसभा 38) जनानी डोड़ी

39) छापाखाना 40) पुस्तकालय

41) विक्टोरिया हॉल 42) टकसाल

43) शिशु हितकारिणी सभा 44) नाव का कारखाना

45) संगीत प्रकाश 46) दवाखाना

47) षट्दर्शन 48) गुणीजनखाना

49) महेन्द्र राज सभा 50) जोतदान/मशालची

51) मेवाड़ का सैन्य प्रबन्धन – मेहकमा फौज, सज्जन इन्फेन्ट्री, भुपाल इन्फेन्ट्री, मेवाड़ भील कौर, नौकरिया री फौज – भील

3.6 मेवाड़ प्रशासन के सहयोगी – ब्राह्मण वर्ग –

प्राचीन मेवाड़ के पुरोहित चौबीसा ब्राह्मण थे। राणा कर्णसिंह के कोढ़ निकलने पर एक पालीवाल ब्राह्मण द्वारा तांत्रिक प्रयोग कर कोढ़ हटाने पर राणा कर्णसिंह ने पुरोहित की पद्वी चौबीसों से लेकर बड़े पालीवाल ब्राह्मणों को प्रदान की एवं चौबीसों को ड्योढ़ी की सेवा प्रदान की। वर्तमान में चौबीसों की पुरोहिताई डूंगरपुर, बांसवाड़ा में है। मेवाड़ में छोटे पालीवाल, नागदा, मेनारिया, शाकद्वीपी, औदिच्य, श्रीमाली, भट्ट मेवाड़ा, गौड़, आदि गौड़, आमेटा, सनाढ्य, छपनिया चौबीसा, सुखवाल, त्रिवेदी, नन्दवाना, दाधीच, सारस्वत, नागर, दशोरा, कान्यकुब्ज, पारीक, गर्ग, पुष्टिकर, गौरवाल/उतर क्रिया करने वाले, गुर्जर गौड़, मोड़, भार्गव, आचार्य, तिवारी, पुजारी, चौबे, भारद्वाज, चर्तुवेदी एवं अनेक गौत्र के पंच

द्रविड़ ब्राह्मणों को बोलबाला रहा। पुष्करणा, त्यागी एवं कई अन्य ब्राह्मण मेवाड़ में बाहर से आकर रहे।

पूर्व में एवं वर्तमान में पंच द्रविड़ ब्राह्मण वर्ग के नीति–नियम में तीनों कालों की संध्या, तर्पण, हवन पंच बली, दान गो ग्रास आदि नियम पूर्वक करते। पुरोहित का मुख्य कार्य महाराणा को धर्म के अनुरूप सलाह देना एवं राज परिवार के मांगलिक कार्यों का निष्पादन करवाना, धार्मिक अनुष्ठानों का आयोजन करवाना, राज परिवार में कथा कीर्तन का आयोजन करवाना होता था। राज परिवार में मृतक परिजनों की उत्तर क्रिया का कार्य गोरवाल ब्राह्मण किया करते थे। कर्मकाण्ड संबंधी कार्य कर्मान्त्री जी करवाते एवं ज्योतिष का कार्य आमेटा, दशोरा ब्राह्मण किया करते थे। शेष ब्राह्मण भी इसमें सहयोग करते एवं इनका अनुकरण करते।

3.7 मेवाड़ प्रशासन के सहयोगी वैश्य/जैन वर्ग –

कोठारी, भण्डारी, मेहता, गिलुण्डिया, 13 पंथी, मंदर मार्गी, बोहरा, हिरन, सामर, बोलिया, खण्डेलवाल, हुमड़, हिंगड़, इन्टोदिया, मुंदड़ा, गलगोटिया, दिवालिया, दधेय्या, बड़ा साजन, छोटा साजन, कर्णावट, सियाल, पोखरना, मादरेचा, मालीवाल, माहेश्वरी, चित्तौड़ा, चौपड़ा, लवाणिया, जालोरा, मरचुनिया, पंचोली, डिडवानियाँ, लाखोटिया, मोगरा, मंत्री, बाबेल, सिंघवी, गुप्ता, बाफना, भाटिया, चपलोत, अग्रवाल, सांखला, बंसल, खमेसरा, भाणावत, जैन, गोयल, सिंघटवाड़िया, लोढ़ा, गर्ग, मारू, भंसाली, ओसवाल, चण्डालिया, सोनी, सेठ, मोदी, डूंगरवाल, पोरवाल, नरसिंहपुरा, नलवाया, मुर्डिया, चोर्डिया, नंदवाना, गाँधी नागदा।

3.8 मेवाड़ रियासत के प्रसिद्ध ऐतिहासिक घराने –

1) **भामाशाह** – ओसवाल/कावड़िया (महाजन) पिता भारमल भामाशाह ने महाराणा प्रताप को संकटकाल में चूलिया ग्राम में 24 लाख रूपये एवं 20 हजार अशर्फिया भेंट की एवं युद्ध में भाग लिया। प्रताप ने इन्हें मेवाड़ का प्रधान बनाया। इनकी कैफियत थी – भामो परधानो करे, रामो कीदो रद्द। प्रताप के पुत्र अमरसिंह ने भामाशाह के पुत्र जीवा शाह को प्रधान नियुक्त किया। अमर सिंह के पुत्र कर्णसिंह ने जीवा शाह के पुत्र अक्षय राज को प्रधान बनाया।

2) **ताराचन्द** – ओसवाल जैन को प्रताप ने गोड़वाड़ का हाकिम नियुक्त किया। इन्होंने धन भी दिया एवं हल्दीघाटी के युद्ध में सक्रिय रहे। महाराणा स्वरूप सिंह ने इनके वंशज जयचन्द, कुनणा, वीरचन्द कावड़िया महाजनों को तिलकायत घोषित किया।

3) **सिंघवी दयाल दास का घराना** – सरूपरिया गौत्र के ओसवाल महाजन थे। इन्होंने महाराणा राजसिंह को गुप्त पत्र देकर उनके मारने की साजिश को नाकाम किया। इन्होंने राजसमन्द की पाल पर आदिनाथ जैन मन्दिर का निर्माण कराया। इनके पूर्वज सीसोदिया क्षत्रिय थे।

4) **पंचोली बिहारी दास का घराना** – भटनागर जाति का पंचोली (कायस्थ) फर्खसियर के समय बिहारी दास मेवाड़ का कानुनी सलाहकार था एवं महाराणा अमर सिंह (द्वि.) के समय महाराणा का प्रधान भी रहा।

5) **बड़वा अमर चन्द का घराना** – सनाढ्य ब्राह्मण, महाराणा प्रताप सिंह (द्वि.) के समय मेवाड़ का मुसाहिब आला बना। अरि सिंह (द्वि.)

के समय सिन्धी सेना का वेतन चुकाया। मेवाड़ का प्रधान बनाया। इन्होंने उदयपुर शहर की रक्षा की थी बाद में इनको विष देकर मरवाया गया।

6) **मेहता अगर चन्द का घराना** – इनके पूर्वज देवड़ा क्षत्रिय थे। खतरगच्छ के जिनेश्वर सूरि ने इनको जैन धर्म की दीक्षा दी तबसे ये ओसवाल कहलाये। महाराणा अरि सिंह ने इनको मॉडल का किल्लेदार बनाया। महाराणा भीम सिंह के समय इन्हें प्रधान बनाया गया। बाद में इनके वंशज शेरसिंह, स्वरूप चन्द एवं पन्ना लाल भी प्रधान रहे।

7) **मेहता राम सिंह का घराना** – जाल मेहता, जालोर परगना के राव मालदेव चौहान का कामदार था, वह हमीर की शादी के समय दहेज में आया था। आगे इस वंश में मेहता राम सिंह हुआ; वह दो बार प्रधान रहा। इनके वंश में जीवन सिंह हुए वह भी हाकिम रहे। इनके पुत्रों में तेज सिंह, मोहन सिंह एवं इन्द्र सिंह काफी प्रसिद्ध हुए। यह वंश बदनाम भी बहुत रहा।

8) **जोरावल मल बापना का घराना** – पटवा गौत्र के ओसवाल जैन थे। इनका मेवाड़ में किराने का व्यवसाय था व संघवी कहलाते थे। इन्हीं के वंश में सिरेमल हुए। उसने बी.ए. एवं बी.एस.सी. की परीक्षा एक साथ पास की एवं विज्ञान में सर्वप्रथम रहा। ये पटियाला राज्य में सेक्रेटरी रहे एवं होल्कर के राज्य में इन्दौर के डिप्टी प्राईम मिनीस्टर भी रहे।

9) **पुरोहित राम का घराना** – यह कोठारिया ठिकाने के पुरोहित रहे। इन्हें मास्टर ऑफ सेरेमनी का पद दिया गया।

10) **कोठारी केसरी सिंह का घराना** – यह मूलतः क्षत्रिय थे फिर ओसवाल जैन हो गये, महाराणा स्वरूप सिंह के समय इनकी रॉवळी दुकान कायम हुई और ये इनके हाकिम नियुक्त हुए एवं बाद में प्रधान भी बनें।

11) **महा महोपाध्याय कविराजा श्यामल दास का घराना** – ये चारण सरदार थे एवं साँखलों के पोलपात थे। दधिवाड़ा के होने से दधिवाड़िया कहलाये। इन्होंने उदयपुर राज्य का इतिहास लिखा, ब्रिटिश हूकुमत ने इन्हें महा महोपाध्याय की उपाधी दी।

12) **सहीवाले अर्जुन सिंह का घराना** – कायस्थ (भटनागर) सहीवाले अर्जुन सिंह को महकमा खास, सचिव का कार्य सौंपा गया ये कई जिलों के हाकिम रहे, राजकीय आदेशों को सही (प्रमाणित) करने का कार्य करते थे।

13) **मेहता भोपाल सिंह का घराना** – ओसवाल जैन भोपाल सिंह, राशमी एवं माण्डलगढ़ जिलों के हाकिम रहे।

14) **बरबड़ी एवं बारू**

15) **चील मेहता**

16) **पन्ना धाय**

17) **वशिष्ठ गोत्री ब्राह्मण**

पाद टिप्पणियाँ –

1) Ruling Princes, Chiefs and Leading Personages in Rajputana by C. S. Bayley, P. 180-182.

भोमट का हाल, राज. प्राच्य–विद्या प्रतिष्ठान, उदयपुर, ग्रंथ सं. 2680

2) वीरविनोद, लेखक कविराजा श्यामलदास, भाग – 1, पृ. 195–196

3) I. Ruling Princes, Chiefs and Leading Personages in Rajputana by C. S. Bayley, P. 180-182.

II. भोमट का हाल, राज. प्राच्य–विद्या प्रतिष्ठान, उदयपुर, ग्रंथ सं. 2680

III. Census of Mewar by Yamuna Lal Dashora, P. 22.

IV. Mewar under Maharana Bhupal Singh by Sir Sukhdeo, P. 23.

4) वही।

5) वही।

6) वही।

7) वही।

8) वही।

9) वही।

10) Mewar under Maharana Bhupal Singh by Sir Sukhdeo, P. 22 1935 ई. में पानरवा ठिकानेदार, मोहब्बतसिंह के अधिकार भी बढ़ाकर प्रथम श्रेणी के कर दिए गए। (राज्य अभिलेखागार, जिला उदयपुर, पत्रावली, भोमट सं. 1, वि.सं. 2001)

11) वीरविनोद, लेखक कविराजा श्यामलदास, भाग 2, पृ. 151

12) वही, पृ. 153 कतिपय लोग जो इतिहास के ज्ञाता नहीं हैं, वे राणा पूंजा को इस आधार पर भील होना बताते हैं कि उसको भीलों का सरदार लिखा गया है। सोलंकी राजपूत राणा पूंजा को भील बताना सर्वथा अनैतिहासिक एवं अप्रामाणिक है।

अध्याय चतुर्थ

मेवाड़ का शासन प्रबन्धन

अध्याय चर्तुथ – मेवाड़ का शासन प्रबन्धन

4.0 मेवाड़ में जागीरदारी व्यवस्था : सर्वेक्षण

4.1 आलोच्यकालीन सामन्तशाही

4.2 मेवाड़ शासन प्रबन्ध में सामन्तों की भूमिका

4.3 सामन्तिक पद एवं स्थान

4.4 मान सम्मान

4.5 सामन्त विरूद्ध

4.6 मर्यादाऐं और कर्त्तव्य

4.7 नजराना

4.8 आर्थिक सहायता

4.9 जागीर वृत्ति

4.10 राज्य मंत्रणा

4.11 सैनिक कार्य

4.12 राज्य नियंत्रण

4.13 सामन्तों की स्वतन्त्रता

पाद टिप्पणियाँ

अध्याय : चतुर्थ

मेवाड़ का शासन प्रबन्धन

4.0 मेवाड़ में जागीरदारी व्यवस्था : सर्वेक्षण –

यद्यपि वर्तमान समाज के बदलते हुए परिवेशों में सामन्तवादी समाज का यह स्वरूप नहीं दिखाई पड़ता है, जो पिछले युग में दिखाई देता था, फिर भी इस समाज संगठन के अपने लक्षण समाजशास्त्रिय विशेषताऐं इस सन्दर्भ में कुछ तथ्य प्रस्तुत करती है।

मैक्स वेवर[1] में अभिवृत्तियों के तीन प्रमुख विद्यमानों (तार्किक – वैधानिक, परम्परागत तथा चमत्कृत) में सामन्तशाही संगठन की पृष्ठभूमि में परम्परागत तथा चमत्कृत व्यक्तियों को स्वीकार किया है। अनुवांशिक चरित्र में अलग मैक्स वेवर ने सामन्तशाही समाज को जागीर का प्रतिरूप माना है। मैक्स वेवर का विश्वास था कि सामन्तवादी अभिवृति के दो प्रधान स्वरूप हो सकते हैं – या तो जागीरी प्रवृत्ति अथवा राजकीय वृति। शेष समस्त स्वरूप अनुवांशिक लक्षण से सम्बन्धित है। मैक्स वेवर की यह सम्पूर्ण विवेचना अभिवृत्तियों एवं शक्तियों के विवेचन के सन्दर्भ की है। सामन्तशाही समाज के प्रतिरूप को प्रामाणिक दृष्टि से सम्भवतः जोसेफ आर. स्ट्रेयर एवं कोलबोर्न[2] में अधिक स्पष्ट करने की चेष्टा की है। लेखक वय के अनुसार सामन्तवाद शासन की वह व्यवस्था है जिसमें वास्तविक सम्बन्ध शासक और प्रजा अथवा राज्य और नागरिक का नहीं अपितु मालिक और मातहत का है। राजनैतिक कार्यों का किया जाना कुछ चुने हुए सिमित संख्या में व्यक्तियों के साथ व्यक्तिगत समझौते के साथ निषद्ध है। संपूर्ण विकसित सामन्तशाही समाज में जागीर एवं मातहती दोनों का

सम्पूर्ण विकास होता है। प्रामाणिक दृष्टि से दोनों ही विवेचन सामन्तवादी समाज का चित्रण एक ऐसे रूप में प्रस्तुत करते हैं जहाँ सम्पूर्ण राजनैतिक व्यवस्था एक हाथ में केन्द्रित हो, कुछ कार्यों में बिखर जाती है सम्बन्ध सदैव मालिक और मातहती के ही रहते हैं चाहे वह जागीरदारों और राणा के बीच हो अथवा राजा–जागीर–मातहतों के बीच।

यद्यपि राजस्थान का आधुनिकतम स्वरूप सामान्य रूप के अधिकाधिक राजनैतिक हिस्सेदारी के साथ बदल रहा है, पर आलोच्यकाल आज की व्यवस्था से बिलकुल भिन्न था। राजपुताना राज्यों में अधिकृत सम्बन्ध "संकीर्ण–परतंत्र राजनैतिक संस्कृति" (Parochial – subject political cutlure) का प्रतीक है। किसी भी राजनैतिक गतिविधि में भाग लेने के अधिकार मात्र राजनैतिक अधिकृति के वंशज उनके प्रतिनिधियों अथवा उन उच्च जातीय नगरीय समूहों के व्यक्तियों को था जिन्हें राज्य में धार्मिक अथवा प्रशासनिक कार्यों के लिए नियुक्त किया हो।

टॉड[3] की मान्यता थी कि राजस्थान का राजनैतिक संगठन निश्चित ही सामन्तशाही था। जिसमें सम्पूर्ण राजनैतिक शक्ति भूमिपतियों के एक वर्ग के हाथों निहित थी। सर एल्फ्रेड लयाल[4] का विचार था कि टॉड सम्भवतः 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पुराने समाजों के इतिहास लेखन की अवधारणात्मक विचारों से प्रभावित था। लायल का विचार था कि जागीरों और केन्द्रिय सत्ता का यह संगठन राजपूत जाति व उसके गोत्र संगठनों पर अधिक आश्रित थी। गोत्र का प्रमुख राजा एवं अन्य प्रमुख लोग राजा के अधिकार से शासक – यही स्वरूप था। अधिकार के सम्बन्ध में कोई भी झगड़ा गोत्र आधार पर निपटा लिया जाता था। जे. सदरलेंड जो एक ब्रिटिश प्रशासक था और इस क्षेत्र से परिचित था कि राजा की इच्छाओं पर शक्तिशाली परम्परागत सरदारों का निर्देशन एवं नियन्त्रण

था। इन सरदारों को राजा से अलग प्रकार के अधिकार थे। बहुत से राज्यीय आंतरिक संघर्ष इस बात का प्रमाण है।

उपर्युक्त सभी विवेचनाऐं राजस्थान में सामन्तवादी समाज में राजनैतिक सत्ता, अधिकार एवं सम्बन्धों की विशेष व्यवस्थाओं का सूचक है। प्रस्तुत अध्याय मेवाड़ राज्य की इन्हीं व्यवस्थाओं का विवेचन है। मेवाड़ राज्य की स्थापना (8वीं शताब्दी) काल से[5] राज्य की शक्ति पर राजपूत जाति के गुहिल शाखा और उनके रक्त बान्धव सिसोदिया शाखा के सदस्यों का अधिकार रहा था। यह अधिकारी राज्य में श्री जी कहलाते थे।[6]

राणा उनकी उपाधि थी एवं उनके आदेशों को श्रीमुख आदेश कहा जाता था। अधिकारी राज्य के दैवीक शक्ति का उपभोग करते हुए स्वयं को दीवान (राज्य का प्रधान) तथा अपने ईष्ट देव एकलिंगजी (शिव) को राज्य का अधिष्ठाता मानते थे।[7] इस प्रकार राज्य की शासन प्रणाली में धार्मिक राजनीति भी प्रभावशाली थी। समाज की राणा की आन (शपथ) सर्वोपरि तथा ईश्वर तुल्य मानी जाती थी। राज्य का कार्य व्यापार राणा के नाम पर चलता था। किन्तु इस व्यवस्था और प्रबन्ध को चलाने के लिए राणा द्वारा अपने सगौत्री, बान्धव, सम्बन्धी तथा कुल के लोगों से सहायता प्राप्त की जाती रही थी।[8] इसका मुख्य कारण था कि एक ही कुल एवं जाति के सदस्यों के फलस्वरूप वे अपने शासक राणा का नेतृत्व स्वीकार करने तथा शासकीय – नीतियों को प्रभावी बनाने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। कुलिय भावना से प्रेरित राजनितिक प्रशासकों का यह जातीवादी संगठन राज्य का प्रमुख सामन्त वर्ग था। इस वर्ग के लोक शासक प्रदत्त अथवा स्वधिकृत क्षेत्र में शान्ति व्यवस्था और प्रशासनिक प्रबन्ध बनाए रखने के साथ–साथ राणा की सैन्य सहायता प्रदान करने के नैतिक कर्तव्यों का

पालन करते थे। नैतिक कर्तव्यों की यह भावना सामुदायी राजनैतिक अधिकारों को राज–व्यवस्था के कारण जागृत रहती थी। इस व्यवस्था में शासक की राजपूत जाति में स्थिति ''बराबर में प्रथम'' के समान थी। शासक के प्रत्येक क्रियाकलाप में इन सामन्तों का परामर्श आवश्यक था क्योंकि राज्य में इनकी हिस्सेदारी मानी जाती थी।[9] इन सामन्तों के अतिरिक्त राज्य–समाज की धार्मिक सेवाओं को प्रतिपादन करने वाले सामन्त थे। जिनका कार्य राज्य की धर्माचरण व्यवस्थाओं को बनाए रखने में शासक को सहयोग देना था।

19वीं शताब्दी के पश्चात् मुगल सामन्त व्यवस्था की जागीरदारी प्रथा में मेवाड़ की सामन्तशाही को प्रभावित किया।[10] फलतः राणा अमर सिंह प्रथम ने भोमिया और गरासिया नामक जागीरदारी वर्गों का निर्माण किया था। भोम जागीर का जागीर क्षेत्र परिवर्तित नहीं किया जाता था एवं गरासिया जागीर का जागीर क्षेत्र प्रत्येक तीन वर्ष पश्चात् बदल दिया जाता था। प्रथम वर्ष की जागीर का पट्टा सैनिक सेवा करते रहने तक स्थाई तौर पर प्रदान किया जाता था। जबकि द्वितीय वर्ष का पट्टा सैनिक सेवा के बदले में जीविका हेतु दिया जाता था।

इसके पश्चात धर्मार्थ जागीर की परम्परा में कोई परिवर्तन नहीं किया गया था। इस व्यवस्था में समय के साथ साथ स्वेच्छारी सामन्तिक प्रवृत्ति के दोष उत्पन्न होने लगे थे। स्थाई जागीरदार एक ही स्थान के प्रशासन को चलाते रहने के फलतः अपनी शक्ति बढ़ा लेते थे और जब चाहे स्वामी शासक के प्रति विद्रोह कर सकते थे। इसके साथ ही जागीर हस्तांतरण ने राजस्व निर्धारण एवं संग्रहण उत्तरदायित्व के साथ–साथ राजस्व अनुपात पर प्रदान की जाने वाली सैनिक सेवाओं में वाद–विवाद

संशय उत्पन्न करना भी प्रारंभ कर दिया था। अतः 18वीं शती के प्रारम्भ में राणा अमर सिंह द्वितीय द्वारा जागीर संगठन को पुर्नगठित किया गया।

4.1 आलोच्यकालीन सामन्तशाही –

राणा अमर सिंह द्वितीय ने पूर्ववर्ती जागीर संगठन को सामाजिक – आर्थिक स्थिति के अनुसार नवीनीकरण किया। इस स्थिति में सामाजिक – राजनीतिक आर्थिक स्तरण स्थापित कर तीन प्रकार के सामन्त – स्तर बनाये गये। प्रथम स्तर में सामाजिक – राजनीतिक प्रतिष्ठा, पद और सम्मान के रूप में शुद्ध राजपूत सामन्त सम्मिलित किये गये। द्वितीय स्तर पर सामाजिक धार्मिक प्रतिष्ठा, पद और सम्मान के क्रम में महन्त, ब्राह्मण, चारण वादि अन्य जाति के सामन्त, तथा तृतीय स्तर पर शासक कृपापात्री एवं राज्य अधिकारी सम्मिलित किये गये थे। यह सभी स्तर पुनः विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत किये गये थे।

4.2 मेवाड़ शासन प्रबन्ध में सामन्तों की भूमिका –

प्रथम श्रेणी के जागीरदारों में पांच वर्ग में विद्यमान थी –

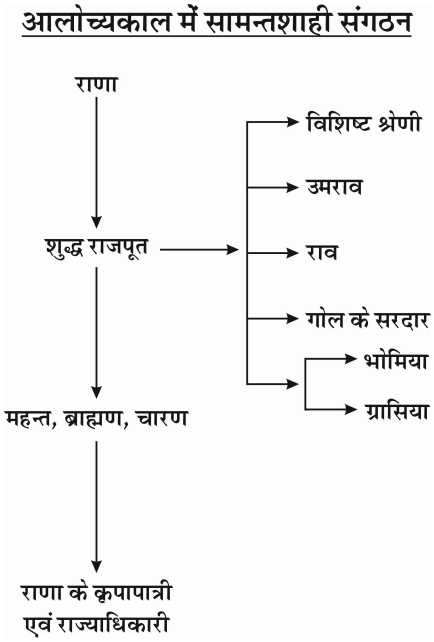

प्रथम श्रेणी के उमरावों की शक्तियाँ –

इस श्रेणी के सामन्त राजनीतिक – सामाजिक प्रतिष्ठा एवं आर्थिक स्थिति में राणा के पश्चात् स्थान रखते थे। मेवाड़ में महाराणा अमरसिंह द्वितीय के समय से महाराणा अरिसिंह के शासन काल तक बड़ीसादड़ी, देलवाड़ा और गोगुन्दा ठिकाने के तीन सरदार झाला बिजौलिया ठिकाने का एक सरदार पंवार, सरदारगढ़ ठिकाने का एक डोड़ीया सरदार, बेदला, कोठारिया और पारसोली ठिकाने के तीन चौहान सरदार, गोरवाड़ तथा बदनोर के दो राठौड़ सरदार थे। हम दस ठिकानों के ठिकानेदार सामन्त राणा वंशज नहीं थे। राणा वंशज सामन्तों में सात चूण्डावत, दो शक्तावत, क्रमशः सलूम्बर, देवगढ़, बेगूं, आमेट, भैंसरोडगढ़, कुराबड़, कान्होड़, भीण्डर एवं बासी के ठिकानेदार थे।[11]

18वीं शताब्दी के मध्य तक मराठा उपद्रव में गोड़वाड़ जागीर जोधपुर राज्य में चली गई थी। 19वीं शताब्दी में राणा जवान सिंह एवं राणा शम्भू सिंह द्वारा आसींद तथा मेजा नामक दो ठिकाने बना कर दो चूण्डावत सरदारों को प्रथम श्रेणी की जागीरदारी में सम्मिलित किया गया था। इस प्रकार आलोच्यकाल के अन्त तक इस श्रेणी में 9 चुण्डावत, 3 शक्तावत उमराव राणा के वंशज थे जबकि अन्य 9 वंशज बाह्य रहे थे। इस स्थिति के अनुसार चुण्डावत सामन्त सदैव शक्तिशाली रहे थे। इस प्रकार मेवाड़ शासन प्रबन्ध में राज्य का प्रधान का पद सलुम्बर ठिकाने के रावत के अधिकार में था और इसी लिए सलुम्बर ठिकाने को राज्य में विशेषाधिकार प्राप्त थे। इन अधिकारों में राज्य को भांजगढ़/मुख्य परामर्शदाता अर्थात् प्रधान की शक्तियाँ प्राप्त थी जो राज्य की रक्षा और युद्ध के समय हरावल प्रमुख (मुख्य सेनाधिपति), शरणा (अपराध संरक्षण) तथा उत्तराधिकार मनोनयन का मुख्य परामर्शदाता के अधिकारों के साथ

राज्यादेश की प्रथम स्वीकृती प्रदान करने का अधिकार सम्मिलित था।[12] चूण्डावतों में देवगढ़ वाले ठिकानेदार को भी शरणा का अधिकार प्राप्त था। शक्तावत सरदारों में 18वीं शताब्दी में राज्यादेशों पर सही (स्वीकृती) के अधिकार की मांग करते हुए राणा अमर सिंह द्वितीय पर राजनीतिक दबाव डाला था। परिणामतः राज्यादेश – स्वीकृति का अधिकार सलुम्बर के चुण्डावत सरदार तथा भीण्डर के शक्तावत सरदार में बांट दिया गया। राज्यादेश अंकित भाले का चिन्ह बनाने का अधिकार सलुम्बर को तथा उसके साथ अंकुश का चिन्ह बनाने के लिये भीण्डर को अधिकृत किया गया था।[13] सलुम्बर रावत की अपनी जागीर में जागीर का सिक्का चलाने की विशेष अनुमती परम्परा द्वारा मिली हुई थी। इन उमरावों को सोलाह के सरदार कहा जाता था यद्यपि इनकी संख्या सोलह से अधिक राणा की इच्छानुसार घटाई – बढ़ाई जा सकती थी किन्तु राणा अमर सिंह द्वितीय द्वारा निर्धारित दरबार में सोलह बैठक के अनुसार राज्य मंत्रणा और परामर्श हेतु सोलह उमरावों को ही आमन्त्रित किया जाता था।[14] यह आमन्त्रण प्रदान करना शासक की इच्छा पर निर्भर होता था।

इस श्रेणी के सामन्तों की राजनीतिक शक्ति राणा प्रताप सिंह द्वितीय के पश्चात् शासकीय दुर्बलता एवं मराठा अतिक्रमणों के फलस्वरूप दिनों दिन तक बढ़ती गई थी। राणा भीमसिंह के शासन काल तक चूण्डावत – शक्तावत सामन्तों के पारस्परिक संघर्षों में राज्य की आर्थिक व्यवस्था को गहरी चोट पहुँचाई थी। इन राजनीतिक परिस्थितियों के फलतः मेवाड़ राज्य द्वारा ईस्ट इण्डिया कम्पनी का राजनीतिक संरक्षण प्राप्त कर 1818 ई. की संधि करनी पड़ी थी।

राव –

इस श्रेणी के सामन्तों को सेना सहित राजधानी में उपस्थित रहना पड़ता था। फौजदार, कोटवाल तथा सेना के अधिकारी इस श्रेणी के सरदारों से ही नियुक्त किए जाते रहे थे।[15] राणा अमर सिंह द्वारा इनकी संख्या बत्तीस नियत की गई थी इसलिए उन्हें बत्तीसा सरदार कहा जाता था। यह जागीरें भी राणा की इच्छानुसार घटाई बढ़ाई जा सकती थी किन्तु अध्ययन काल में निम्बाहेड़ा की जागीर टोंक राज्य में लिये जाने के पश्चात् निम्न इकत्तीस जागीर 16वीं शती के अन्त तक विद्यमान रही थी – (1) हमीरगढ़, (2) चावण्ड, (3) भदेसर, (4) बोहेड़ा (5) मूगास, (6) पीपल्या, (7) बांसी, (8) ताणा, (9) रामपुरा, (10) खैराबाद, (11) महुवा, (12) लूगदा, (13) थाणा, (14) जरताणा (घनैया), (15) केलवा (16) बड़ी स्थाऐली, (17) भगवानपुरा, (18) नेतावल, (19) पीलाधर, (20) घंघोरी, (21) बाठरड़ा, (22) सरवाड़, (23) करेड़ा, (24) अमरगढ़, (25) लसाणी, (26) धरियावद, (27) फलीचड़ा, (28) संग्रामगढ़, (29) विजयपुर, (30) बस्सी तथा (31) रूपनगर।

इन जागीरों के सरदारों में शासक वंशज 9 राणावत + 5 चूण्डावत + 4 शक्तावत + 2 सांगावत तथा 1 कान्हावत का योग 21 रहा था। अन्य राजपूत वंशजों में 1 झाला + 2 चौहान + 4 राठौड़ + 1 पंवार और 2 चावड़ा सरदार बत्तीसा में सम्मिलित रहे थे, जिनका की योग 10 था। इस स्थिति के अनुसार राजनीतिक शक्ति के रूप में राणा वंशज बत्तीसा प्रमुख रहे थे। पुनः इसमें चूण्डावत शाखा का अधिक प्रावत्य स्थापित था।

गोल के सरदार –

यह सामन्तों की तृतीय श्रेणी राणा अमर सिंह द्वारा स्थाई सैनिक सेवा प्राप्त करने के लिये बनाई गई थी। यह सामन्त राणा के लिये सर्वाधिक लाभदायक रहे थे। सौलह अथवा बत्तीस सामन्तों के विद्रोह में राणा की सैन्य शक्ति इन पर निर्भर करती थी।[16] उनकी संख्या भी घटाई बढ़ाई जा सकती थी अथवा अच्छी सेवाओं के पुरस्कार स्वरूप उपरोक्त दोनों श्रेणियों में से किसी में भी प्रतिष्ठित किया जा सकता था। किन्तु इस प्रकार की श्रेणी स्थानान्तर के प्रमाण उपलब्ध नहीं होते हैं। इन जागीरदारों को ग्राम या ग्राम की खण्ड भूमी सेवार्थ प्रदान की जाती थी जिनका विस्तृत विवरण प्रस्तुत नहीं कर हम वंशगत स्थिति के अनुसार संख्यात्मक सरदारों को लेंगे।

इस श्रेणी में 50 सरदार चूण्डावत + 38 शक्तावत + 71 राणावत + 7 सांगावत + 13 कान्हावत + 3 लूंगावत + 16 पूरावत + 5 दुलावत + 1 मांजावत + 3 भाकरोत + 2 सोजावत + 2 दुर्गावत सरदार शासक वंशज रहे थे। इन सरदारों की कुल संख्या 211 रही थी। इसके अतिरिक्त 19 चौहान + 4 देवड़ा चौहान + 2 हाड़ा चौहान + 53 राठौड़ + 9 सोलंकी + 5 झाला + 4 पंवार + 1 पड़िलर + 1 यादव (जादव) + 10 भाटी (यादव) सरदार अन्य राजपूत वंशज थे जिनकी संख्या 108 रही थी। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मराठा अतिक्रमण कालीन सैनिक सेवाओं के फलस्वरूप 1 सिन्धी मुसलमान को भी गोल का सरदार बनाया गया था। इस प्रकार अध्ययन काल के अन्तिम समय तक गोल के सरदारों की कुल संख्या 320 थी।[17]

इन सरदारों में सर्वाधिक संख्यात्मक शक्ति धारक चूण्डावत तथा उसकी उपशाखा के सरदार तथा इसके पश्चात् राणा जगतसिंह द्वितीय के वंशज राणावत रहे थे। उपरोक्त सम्पूर्ण स्थिति स्पष्ट करती है कि आलोच्यकाल की प्रमुख सामन्तसत्ता चूण्डावतों के अधीन रही थी। इसी का परिणाम था कि चूण्डावत राज्य अधिकार के प्रमुख उपभोक्ता भी रहे थे।

भौमिया और ग्रासिया –

चौथी श्रेणी के यह जागीरदार सामन्त भी राज्य सैनिक सेवा के लिए बाधित रहते थे, किन्तु इनका अन्तर इनके अधिकारों से नापा जा सकता है। भोमिया सामन्तों में सीमान्त रक्षा करने तथा दुर्गम स्थानों पर राज्य व्यवस्था को बनाए रखने तथा शासक एवं राज्य हेतु अपना बलिदान करने वाले सरदार सम्मिलित थे। इन जागीरदारों में ओगना, पानरवा, जूड़ा, जवास, मादड़ी, पहाड़ा, थाना के प्रमुख ठिकाने थे। ग्रासिया जागीरदारों को रोटी–खर्च के लिए भूमि प्रदान की जाती थी। जो कि सेवा पूर्ण नहीं करने पर अधिग्रहित की जा सकती थी। इस प्रकार एक जागीर पैतृक अधिकारों से युक्त थी। तो दूसरी अस्थाई जमींदारी थी।[18] उपर्युक्त सामन्त मराठों के अतिक्रमण काल में राज्य सुरक्षा करने में प्रथम कार्यकारी रहे थे।

विशिष्ट श्रेणी –

इस श्रेणी को मेवाड़ की लोक भाषा में भाई–बाबा कहा जाता था। इन सामन्तों में भी दो उप श्रेणियाँ रही थी। प्रथम उपश्रेणी में बनेड़ा और शाहपुरा–फूलिया ठिकानों के ठिकानेदार सामन्त तथा द्वितीय उपश्रेणी में बागोर, करजाली, शिवरती, कारोई और बाबलास के ठिकानेदार थे।[19] बनेड़ा और शाहपुरा मुगल साम्राज्य के अन्तर्गत स्वतन्त्र राज्य रहे थे।

किन्तु साम्राज्य की शक्ति क्षिणावस्था के काल में यहाँ के राजा उदयपुर शासक के भाई–बाधन्व होने के कारण स्वेच्छापूर्वक मेवाड़ राज्य के संरक्षण में आ गए थे। मेवाड़ राज्य की ओर से दोनों ठिकानों के ठिकानेदारों की विशिष्ट सामन्त के रूप में स्वीकार कर प्रथम स्थान बनेड़ा को तथा द्वितीय स्थान शाहपुरा को दिया गया था।

इन ठिकाने के अतिरिक्त डूंगरपुर, बांसवाड़ा तथा देवलिया – प्रतापगढ़ राज्य भी मेवाड़ के सामन्त माने जाते रहे थे।[20] इन राज्यों की प्रतिवर्ष निश्चित खिराज एवं नामित उत्तराधिकारी का टीका–दस्तुर भेजना पड़ता था। किन्तु मराठा उपद्रव काल में यह राशि नियमित नहीं रही थी तथा शक्तिशाली राणाओं द्वारा यदा–कदा अपनी शक्ति द्वारा वसूल किया जाता रहा था। 1818 ई. में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इन राज्यों की स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार करते हुए इनसे चला मैत्री समझौता किया गया था। तब से यह मेवाड़ के बत्तीसी सामन्तों में स्वीकार किए जाने लगे थे।

द्वितीय एवं तृतीय स्तर के सामन्तों में राणा की मंत्रणा परिषद् में बैठने का अधिकार राणा की इच्छा पर निर्भर था। इन्हें केवल धार्मिक एवं व्यवस्थापन मामलों के लिए यदा–कदा आमन्त्रित किया जाता था इसलिए सामन्तशाही के सामाजिक – राजनैतिक स्वरूप में केवल प्रथम स्तर धारक सामन्तों का विशेष महत्व रहा था। जबकि सामाजिक – आर्थिक दृष्टि से तीनों ही प्रकार के स्तरों की भिन्न–भिन्न आर्थिक श्रेणियाँ विद्यमान थी। इन श्रेणियों का विवेचन भूमि–व्यवस्था के अन्तर्गत करेंगे। पद एवं जागीर के अनुरूप दरबारी सम्मानों में इनके प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय वर्ग विद्यमान रहे थे। इन वर्गों के अनुसार ही इनका सम्मान किया जाता था।

4.3 सामन्तिक पद एवं स्थान –

सामन्तों के पद शासकीय सम्बोधनों एवं पद व्यवहारों द्वारा प्रकट होते थे। शासक की 5 पीढ़ी दूरी तक के रक्त सम्बन्धित 'बाबा' कहे जाते थे।[21] एक–दो पीढ़ी दूरी वाले 'काका जी' तथा इसके पश्चात् 'ग्रासिया' कहलाते थे। शासक के कुंवरों को 'राज' कहा जाता था। इन सभी सम्बन्धियों की बैठक शासक – शासन के सामने होती थी। अपने सगे सम्बन्धियों के अतिरिक्त अन्य जाति के लोगों को भी 'काका जी' का पद प्रदान किया जाता था। इसी प्रकार परम्परागत पदों में चूण्डावत सरदारों को रावत, झाला सरदारों को राज राणा शक्तवतों को महाराज और चौहानों को राव कहा जाता था।[22] राणावत सरदारों में बागौर, करजाली और शिवरती के ठाकुर महाराज, बनेड़ा के राजा और शाहपुरा के राजाधिराज कहलाते थे।

सामन्त सरदारों की बैठक के स्थान शासक के दोनों और सीधी पंक्ति में बड़ी ओल तथा लोड़ी ओल (छोटी पंक्ति) में बंटे हुए रहते थे। बड़ी ओल में सरदारों की निश्चित क्रम में बैठक रहती थी।[23] इस बांयी पंक्ति की बैठक की नीचे कुंवरों की ओल होती थी। अतिथि सामन्तों का बैठक स्थान राणा के समक्ष नीचे रहता था। कुंवर और भाई – बान्धव सामन्तों के पीछे द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी के सामन्तों की बैठकें हुआ करती थी। गोल के सरदारों में शासक द्वारा स्वीकृत सरदार के अतिरिक्त अन्य खड़े रहते थे।

4.4 मान सम्मान –

सामन्त स्तरीकरण के अनुसार प्रत्येक वर्ग के लिए इज्ज़त अथवा मान – सम्मान भी वर्गीकृत था। प्रथम श्रेणी में उमरावों को जुहार, ताजीम,

बांह पसाव[24], सोना, मांझा[25], बीड़ा[26], साधारण सम्मान प्राप्त थे। राजपूत सामन्तों के अतिरिक्त वन्य द्वीज जाति के लोगों को भी राणा द्वारा प्रथम श्रेणी के सामन्त नहीं होते हुए भी प्रथम श्रेणी के सम्मान प्रदान किए जाते थे। इसके अतिरिक्त वंश विशेष एवं विशिष्ट श्रेणी के सम्मान महत्वपूर्ण राजनीतिक – आर्थिक सेवा अथवा राज्य कृपा स्वरूप राणाओं द्वारा समय–समय पर प्रदान किये जाते थे, उदाहरणार्थ – बड़ीसादड़ी के राजराणा को सवारी में इत्र और चंवर रखने का अधिकार तथा बनेड़ा राणा हम्मीरसिंह के काल में राणा भीमसिंह द्वारा अब्दूल रहीम बेग को बड़ी पोल तक नक्कारे की सवारी के साथ आने का सम्मान दिया गया था।

द्वितीय श्रेणी के सरदारों को भी जुहार, ताज़ीम, सोना अथवा चाँदी को पैरों में पहनने का मान, मांझा और बीड़ा के सम्मान और तृतीय श्रेणी को केवल बड़ी पोल में बैठक तथा पान के बीड़े की इज्जत दी जाती थी। विशिष्ट सैन्य सेवा प्रदर्शित करने वाले सामन्तों को अमर बलेणा घोड़ा एवं सोने की छड़ी और घोटा रखने का मान दिया जाता था।

इसी प्रकार राज्य के प्रधान को भी प्रथम श्रेणी के सम्मान स्वरूप साधारणतः सोने की दवात, पट्टा बही, सुनहरी पट्टे का फगा, मोतियों की बंठी, सिरपेच, मोती चोपड़ा, हाथी, स्वर्ण पालकी सहित अमर बलेगा, सोने चांदी की छड़ी, घोटे, पांवों में सोने के तोड़े, नाव में बैठने की छतरी के मोड़े, पीछे की बैठक आदि प्रदान किये जाते रहे थे।[27]

धर्मार्थ जागीर के जागीरदारों में प्रथम श्रेणी के पुजारी, महन्त आदि को राणा के सामने गद्दी पर बैठने का सम्मान दिया जाता था। राणा उनके सम्मुख दोवटी (एक प्रकार का आसन) पर बैठने के पूर्व डण्डोत (दण्डवत प्रणाम) करके भेंट देते थे। राणा की उपस्थिति में भी इस श्रेणी को चंवर

का सम्मान प्रदान किया हुआ था। द्वितीय श्रेणी के पुजारी को बैठने के लिए दरबार में 'वानात का आसन' मिलता था एवं राणा द्वारा उन्हें ताज़ीम दी जाती थी। तृतीय श्रेणी वाले राणा को आशीर्वाद देकर फर्श पर बैठते थे। इसी प्रकार राज्य अधीनस्थ उच्च सेवादारों व जागीरदारों में भी प्रथम श्रेणी वालों को पैरों में स्वर्णाभूषण, मांझा, छड़ी आदि, द्वितीय श्रेणी को केवल ताज़ीम और छड़ी तथा तृतीय श्रेणी को दरबार में बैठक तथा राणा के हाथ से पान के बीड़े का सम्मान दिया जाता था।

4.5 सामन्त विरूद्ध –

दरबार में प्रवेश करने से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति को ड्योढ़ीदार से स्वीकृति लेनी होती थी। ड्योढ़ीदार व्यक्ति की श्रेणी तथा उसकी पोशाक आदि की जाँच करने के पश्चात् प्रवेशी व्यक्ति की ओर से दरबार के दरोगा को उस व्यक्ति के प्रवेश के लिए निवेदन करता था। प्रवेश स्वीकृति के रूप में पान का बीड़ा दिया जाता था। दरबार में प्रवेश करते समय श्रेणी एवं पद के अनुसार चौबदार सलामती (जुहार) बोलता था, उदाहरणार्थ – 'महाराजा सलामत रावत/राणा/राव सिंह जी को मुजरो लीजो।' तत्पश्चात् सामन्तों के चारण उनके प्रशस्तियाँ बोलते थे। यह सामन्त विरूद्ध प्रत्येक वंश और पद के लिए अलग–अलग रहे थे।[28]

उदाहरणार्थ –

1) चुण्डावतों के – रावता पट रावत, दस सहस मेवाड़ रा मड़ सेमड़

2) शक्तावतों के – दूना दातार, चौगुना जुफ़ार, ...

3) झालों के – .....

4) चौहानों के – .....

5) राठौड़ों के – .....

6) पंवारों के – .....

7) भाटी और सोलंकियों के – .....

8) राणावतों व राणा बान्धवों के – .....

9) पंचोली, कायस्थ जो कि दीवान इत्यादि रहे थे या होते थे – वीर गद्दी रथपाल

10) मेहता, कोठारी तथा अन्य महाजन – वैश्य (जो कि मेवाड़ राज्य के उच्चाधिकारी होते थे) – .....

उपरोक्त विरूद्धों से उनके वंश प्रशस्ति नाम के साथ–साथ दरबार में जाते–जाते उसकी श्रेणी एवं पद की स्थिति शासक को स्पष्ट हो जाती थी। सामन्त द्वारा शासक के सम्मुख पहुँचने पर झुक–झुक कर खम्मा, खम्मागणी बोलने के बाद अपना स्थान ग्रहण करता था। विभिन्न जातियों द्वारा राणा को विभिन्न रूपों से सम्बोधित किया जाता था – राजपूत लोग उन्हें अन्नदाता कहते थे, ब्राह्मण गऊ प्रतिपालक, तो महाजन – वैश्य हुजूर कहते थे। इसी क्रम में राजकीय चारणों द्वारा राणा की वीरूदावली दो प्रकार की बोलते थे –

1) राणा की व्यस्तता के समय में दो पंक्ति का विरूद्ध – 'हिन्दूस्तान रा छत्र, हिन्दू वां रा सूरज महाराणा ..... के पुत्र महाराणा ..... अन्नदाता पृथ्वीनाथ रो छत्र कायम'

2) कलंकिया राय केदार, पापिया राय प्रयाग। हथियांरा राय वाराणसी, मधावन राय राजान गंगा।। सुरताण ग्रहण मोखण, सुरताण मान मर्दन।। सुरताण सरगाई साधार, सुरताण दल जैतवार।। हिन्दुवां रा दिनेस, एकलिंग रा अवतार, पृथ्वीनाथ रो छत्र कायम

प्रथम श्रेणी के सरदारों से वार्तालाप के समय राणा हाथ जोड़ कर बात करते थे, उसी प्रकार सरदार–सामन्त भी राणा से हाथ जोड़ कर बात करते थे। ताज़ीमी सामन्त की नजर (भेंट) राणा खड़े हो कर स्वयं लेते थे जबकि अन्य की नजरें दरबार का दरोगा राणा की स्वीकृति से लेता था। बनेड़ा एवं शाहपुरा के सामन्तों के दरबार में आने से पूर्व राणा इन्हें लेने के लिए क्रमशः चम्पाबाग तथा हजारेश्वर के मन्दिर तक जाता था। यहाँ आगन्तुक सामन्तों द्वारा राणा को एक स्वर्ण मुहर एवं पाँच रूपया 'नजर' किया जाता था। सामन्तों के साथ यदि कुंवर होते तो वह भी नजर करते थे, किन्तु राणा द्वारा उसमें अपनी ओर से दुगुना मिलाकर कुंवरों को लौटा दिया जाता था।[29] तत्पश्चात् बांहपसाव कर औपचारिकता का निर्वाह करते थे। दूसरे दिन सामन्त अपनी हवेलियों से अपने–अपने पद, श्रेणी तथा प्राप्त मान सम्मानों के अनुसार सवारी के साथ महल में जाते थे जहाँ उपरोक्त दरबारी प्रविष्टियों की औपचारिकता के बाद दरबार में प्रवेश कर अपना स्थान ग्रहण करते थे। दोनों सामन्त जब तक उदयपुर में रहते थे तब तक उनकी जागीर का घड़ी–घंटा बजाने का अधिकार उन्हें प्रदान किया हुआ था।[30]

4.6 मर्यादाऐं और कर्त्तव्य –

सामन्तों के मान–सम्मानों से उनकी सामाजिक, राजनीतिक प्रतिष्ठा और प्रभाव दिखाई देता था, किन्तु इसके साथ उन्हें कई राजनीतिक,

आर्थिक मर्यादाओं का निर्वाह करना पड़ता था। इन मर्यादाओं में शासक द्वारा प्रेषित निमंत्रण ले जाने वाले अधिकारियों एवं सेवकों का सामन्त द्वारा सत्कार करना तथा इन्हें विदाई पर ईनाम और सिरोपाव देना, सामन्त द्वारा शादी विवाह का राणा से परामर्श लेना, उनको घर पर अथिति करना, आवागमन पर उनके सम्पूर्ण खर्च का निर्वाह करना आदि सामान्य मर्यादाऐं रही थी। इनके अतिरिक्त अन्य सामाजिक मर्यादाओं में नजराना, नेक तथा नूँत की परम्परा का पालन करना मुख्य था।

4.7 नजराना –

यह परम्परा यहाँ राणा की शक्ति का प्रतीक रही थी। यहाँ सामन्तों की राजभक्ति का परिचय थी।[31] एक प्रकार से राणा और सामन्तों के सामाजिक – आर्थिक सम्बन्धों को बनाए रखने में यह प्रक्रिया तत्कालीन सामन्तशाही का मुख्य आधार रही थी। सामन्त की मृत्यु के पश्चात् नवीन उत्तराधिकार की पुष्टि हेतु नवीन सामन्तों द्वारा राणा को नजराना देना पड़ता था।[32] नजराना दो प्रकार से दिया जाता था – कैद नजराना तथा तलवार बंधाई नजराना। कैद–नजराना देने वाले सामन्त के उत्तराधिकारी की पुष्टि के पूर्व उसकी भोम (पैतृक) जागीर को छोड़ कर शेष जागीर पर राज्य का प्रत्यक्ष अधिकार हो जाता था। इस प्रथा को "जप्ती" कहा जाता था। शोक–निवृति के पश्चात् नवीन सामन्त, राणा के सम्मुख उपस्थित होकर अपनी जागीर की एक वर्ष की आय जिसे कि कैद के रूपये कहा जाता था राणा को भेंट करता था। तब राणा आम दरबार में अमर बेलेणा घोड़ा, सिरोपाव, दुशाला और अन्य बहुमुल्य दस्तुर प्रदान कर मान सम्मान के साथ उसे जागीर का अधिकार प्रदान कर सामन्त की कमर में एक तलवार बांधता था। इस प्रथा को खड़ग–बन्दी या तलवार–बन्दी कहते थे।[33] इस प्रक्रिया के पश्चात् जागीर से जप्ती समाप्त कर दी जाती थी।

बनेड़ा, शाहपुरा, सलूम्बर, देवगढ़, आमेट, गोगुन्दा तलवार–बंधाई नजराना और शेष कैद नजराना देते थे। बनेड़ा एवं सलूम्बर को इस परम्परा में विशेष छूट प्राप्त रही थी। बनेड़ा के सामन्त के लिये राणा द्वारा पूर्व में ही तलवार भेज दी जाती थी। तत्पश्चात् सामन्त राजधानी में पहुँच कर नजराना देता था। शाहपुरा के राणा की तलवार बंधाई एक स्वतन्त्र राज्य होने के कारण मुगल–सम्राट तथा बाद में ब्रिटिश–भारत सरकार द्वारा होती थी। अतः काछौला जागीर के सामन्त की पूर्ति के अनुसार यह इसका नजराना भेट देता था और कभी भी उपस्थित हो पगड़ी–बंधाई का निर्वाह कर लेता था। सलूम्बर रावत नजराने से मुक्त था। उसे लेने के लिये राणा अथवा राजकुमार को सलूम्बर जागीर में जाना पड़ता था वहां खड्ग–बन्दी का दस्तुर करने के पश्चात् उसे राजधानी में लेकर आता था।[34] नजरानों की राशि का प्रतिशत सभी सामन्तों पर 18वीं शती तक निश्चित नहीं था किन्तु 1854 ई. में शासक–सामन्त समझौते के पश्चात् एक वर्ष की आय के स्थान पर जागीर आय का तीन बटा चार भाग निश्चित कर दिया गया था। जिन सामन्तों से कैद नहीं ली जाती थी उनसे 80 रूपया प्रति हजार वार्षिक आय लिया जाना प्रारम्भ किया गया था।[35]

4.8 आर्थिक सहायता –

यह परम्परा भी सामन्त मर्यादाओं और अग्रज के प्रति सामाजिक – आर्थिक सम्बन्धों की द्योतक रही थी। इन सम्बन्धों में प्रजा द्वारा प्रदत्त वार्षिक सहायता[36] में स्वामीभक्ति की भावना निहित रहती थी। राणा के राज्यारोहण पर सामन्तों द्वारा उपहार–राणा अथवा उसके सम्बन्धियों के विवाह पर सामन्त और प्रजा की भेंट, जागीरदार की तलवार–बन्दी पर प्रजा द्वारा भेंट चढ़ाना, आदि सामाजिक कर्त्तव्य रहे थे। दुःख–सुख में

एक–दूसरे के जागीरदार बने रहने की सामुदायिक भावना के फलस्वरूप राणा द्वारा जागीरदार सामन्तों की जागीरदारों द्वारा राणा की, प्रजा द्वारा राणा एवं सामन्तों की तथा सामन्तों द्वारा प्रजा की पारस्परिक आर्थिक – सहायता करना सामन्तशाही जीवन है। सामाजिक–आर्थिक आदर्शों का स्वरूप निश्चित करता था, किन्तु मराठा अतिक्रमण काल में सामन्त – आदर्श का यह प्रतिदर्शन धुमिल होने लगा था। सामन्त और प्रजा के नैतिक कर्त्तव्यों पर आधिकारिक शोषण की भावना प्रारम्भ हो गई थी। परिणामतः यह आर्थिक सहायता शक्ति द्वारा अर्जित की जाने वाली लागत बन गई थी। 19वीं शताब्दी में विभिन्न लागतों का नियमन कर, राणा के राज्यारोहण, उसके व उसके उत्तराधिकारी के प्रथम विवाह पर प्रथम श्रेणी के सामन्तों से 500 रूपया तथा दो घोड़े तथा अन्य श्रेणी के सामन्तों से उनकी आय का 2 प्रतिशत लिया जाना प्रारम्भ किया गया था।[37] इसी प्रकार राणा की बहिन–बेटियों के विवाह पर प्रति रूपया आय पर 2 आना 2 पैसे तथा राणा की तीर्थ यात्रा पर सामन्तों की कुल आय का 8 प्रतिशत या प्रति रूपया 1 आना 1 पैसा नेग निश्चित किया गया था।

4.9 जागीर वृत्ति –

मेवाड़ राज्य में सेवा तथा वेतन के स्थान पर भूमि प्रदान करने का प्रचलन प्राचीन काल से चला आ रहा था। प्रासाद निर्माता, चित्रकार, चिकित्सक, दूत, अधिकारी, मंत्री एवं सामन्त सभी वेतन के स्थान पर भूमि प्राप्त करना सम्मान समझते थे। यह भूमि गृहिता सामन्त तथा अन्य सरदार की जागीर कहलाती थी। सामन्तों को राज्य की भूमि का जो भाग दिया जाता था उसके बदले में उनको देश रक्षार्थ शत्रुओं से युद्ध करना पड़ता था।[38] इसके साथ ही अपने क्षेत्र में शान्ति और व्यवस्थाऐं बनाए रखने के अतिरिक्त शासक के आमन्त्रण पर राजधानी में उपस्थित होकर

व्यक्तिगत सेवा करनी पड़ती थी। यदि सामन्त प्रदत्त जागीर के प्रति कर्त्तव्यों के पालन करने में असमर्थ हो जाते अथवा राज्य द्रोह द्वारा देश और स्वामीभक्ति के लौकिक आदर्श के विरोध में कार्य करने लग जाते तो राणा का अधिकार होता था कि उसके कर्त्तव्यच्युत सामन्तों से उनकी जागीरी छिनती। मराठा अतिक्रमण काल में इस व्यवस्था के अनियन्त्रण ने सामन्त – उपद्रवों को बढ़ावा दिया था। किन्तु कोई भी जागीरी छिनी नहीं गई थी। परिणामतः 19वीं शताब्दी के शान्तिकाल में ब्रिटिश संरक्षण के पश्चात् इस व्यवस्था का व्यवस्थापन यथावत किए जाने का प्रयत्न निरन्तर चलता रहा। सलुम्बर जागीरदार सामन्त के अतिरिक्त आलोच्यकाल के अंतिम समय तक सभी सामन्त राज्य नियन्त्रण और स्वामीभक्त हो गए थे।

4.10 राज्य मंत्रणा –

प्रत्येक सामन्त के लिए अपने स्वामी राणा को परामर्श देने अथवा लेने का कर्त्तव्य का पालन करना आवश्यक रहा था। राज्य में किसी भी प्रकार के गम्भीर, सामाजिक – राजनैतिक एवं आर्थिक विषयों पर राणा द्वारा सामन्तों को परामर्श के लिए बुलाया जाता था। इनके परामर्श के बगैर अथवा निर्णयों के विरूद्ध राणा को कोई भी कार्य – सम्पादन का अधिकार नहीं था। इसी प्रकार बगैर राणा की सहमती और राणा के सामन्त भी स्वतन्त्र नहीं थे। इस प्रकार पारस्परिक – मंत्रणा की व्यवस्था मेवाड़ सामन्तशाही की प्रमुख विशेषता रही थी। इस व्यवस्था का परिपालन सामन्त क्षेत्राधीन उप–सामन्तों एवं जागीर प्रथा के मध्य भी किया जाता था।[39] इसी व्यवस्था का परिणाम था कि कोई भी सामन्त राणा और अपने उप–सामन्तों के परामर्श और स्वीकृति के बगैर जागीर का हस्तान्तरण नहीं कर सकता था। धर्म के निमित्त कुछ बातों में यह व्यवस्था लागू नहीं होती थी। कोई भी सामन्त अपनी जागीर से धार्मिक अनुदान देने में तथा मूल

(पैतृक) अधिकार की भूमि से भाई–भांट का हिस्सा देने में परामर्श का उत्तरदायी नहीं था। इसका प्रतिफल शनैः शनैः यह हुआ कि सामाजिक जागीर में सामन्त शक्ति का प्रभाव पड़ने के साथ–साथ जागीर विकेन्द्रीकरण में राज्य और जागीर के छोटे–छोटे टुकड़े बनाना प्रारम्भ कर दिया और इसी कारण 19वीं शताब्दी के अन्त तक जागीरों में भी असंख्य भूम बन गई थी जिन्हें आर्थिक संकट के साथ बंधक रखा जाने लगा था।[40]

पुत्रहीन सामन्त के उत्तराधिकार के निर्णय का उल्लेख परिवार, विवाह एवं प्रथा के प्रकरण में किया गया है। इसके लिए सामाजिक, राजनैतिक पुष्टिकरण कराना आवश्यक होता था। गोद लिया गया पुत्र भी ओरस पुत्र के अधिकारों का उपभोग करता था। अल्प वयस्क सामन्त की जागीर का प्रबन्ध करना राणा का कर्त्तव्य रहता था। यद्यपि इसे सामन्त का संरक्षक उसकी माता को माना जाता था किन्तु माता के स्थान पर अन्य को संरक्षण प्रदान किए जाने का कर्नल टॉड का उल्लेख आलोच्यकाल में प्रमाणित नहीं होता है।

प्रत्येक सामन्त को वैवाहिक कार्यों के सम्बन्ध में राणा के साथ मंत्रणा करना आवश्यक था। यह परम्परा राणा के प्रति सामाजिक शिष्टता, सद्भावना का परिचय थी। यह परामर्श इसलिए भी आवश्यक था कि राणा का वंश शुद्धता की दृष्टि से सर्वोच्च था और वह अपने सामन्तों की रक्त दृढ़ता को महत्व देता था। अतः जातिगत वैवाहिक सम्बन्धों में रक्त शुद्धता का निर्णय राणा द्वारा किया जाता था। किन्तु 19वीं शताब्दी में इसका स्वरूप शासकीय नियन्त्रण में प्रतिस्थापित होने लग गया था। इस परामर्श पर राणा की स्वीकृति होने के पश्चात् सामन्त के सम्मान में मूल्यवान वस्तुऐं भेंट में दी जाती थी।

4.11 सैनिक कार्य –

18वीं शती के उत्तरार्द्ध में सामन्तों की सभी श्रेणियों की आर्थिक स्थिति क्रमानुसार – प्रथम श्रेणी के सामन्त को प्रदत्त जागीर की वार्षिक आय 50 हजार रू. से 1 लाख रू., द्वितीय श्रेणी के सामन्त को प्रदत्त जागीर की वार्षिक आय 5 हजार से 50 हजार रूपया तथा तृतीय श्रेणी के सामन्त को प्रदत्त जागीर की वार्षिक आय 5 हजार रूपया रही थी। इस जागीर वृत्ति के सेवार्थ प्रत्येक सामन्त को राणा की सेवा में 1 हजार रूपया वार्षिक आय पर कम से कम 2 व साधारणतः 3 सैनिक सवारों को रखना पड़ता था। 19वीं शताब्दी में सामन्तों की सैनिक आवश्यकताओं का महत्व नहीं रह गया था अतः आन्तरिक व्यवस्था बनाये रखने के लिए सामन्तों की सैनिक–सेवा आधी कर दी गई थी।[41] सैनिक सेवा का यह मापदण्ड 'रेख' के आधार पर आधारित रहा था। मेवाड़ राज्य में रेख का अभिप्रायः जागीर की वार्षिक आय पर राज्य निर्धारित सैन्य शुल्क रहा था। यह रेख प्रत्येक राणा द्वारा निर्धारित की जाती रही थी। भीमसिंह कालीन 'भीम सी रेख' के अभिलेखों से मराठा अतिक्रमण से उत्पन्न व्यवस्था का पता लगता है, जिसके अनुसार कहीं गांव की आय से रेख अधिक थी तो कहीं रेख से अधिक गांव की आय उल्लेखित की गई है।[42] इसी कारण 1850 ई. तक राणा और सामन्तों के मध्य सैन्य–सेवा एवं चाकरी का विवाद चलता रहा था। अन्ततः 1850 ई. में महाराणा स्वरूप सिंह ने सभी सामन्तों को, एकलिंग की पवित्र सौगन्ध की प्रार्थना करते हुए, अपने–अपने जागीर–गांवों की, वास्तविक आय को उल्लेखित करने के लिए कहा था। तब से प्रत्येक जागीर पट्टों में गांव, उपज (पैदावार), राशि, पिछले वर्ण की उपज राशि तथा उस पर प्रति रूपया 5 आना की छटूंद राशि तथा प्रति एक हजार रूपया आय पर दो सवार चार पैदल के स्थान पर एक सवार

और दो पैदल सैनिक सेवा का उल्लेख किया जाने लगा था। उन सैनिकों के साथ सामन्त के निर्देशानुसार तीन मास, छः मास, नौ मास तथा बारह मास की चाकरी के रूप में राणा के महलों में सेवा करनी पड़ती थी।[43]

सैनिक सेवा के रूप में राष्ट्र प्रेम एवं स्वामीभक्ति से ओत–प्रोत परम्परा का पतन ब्रिटिश संरक्षण काल में हो गया था। जो सामन्त 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक शासक के सहयोगी और अनुशासक थे, उत्तरार्द्ध छटूंद एवं खिराज नीति की आर्थिक व्यवस्थाओं के परिणामतः नौकर की स्थिति में प्रति स्थापित कर दिये गए थे। यही कारण था कि 19वीं शताब्दी के शान्तिकाल में सामन्तशाही जीवन विद्रोह से पूर्ण प्राचीन परम्पराओं को पुनः प्रचलित करना चाहता था। इस जीवन का नेतृत्व, आलोच्यकाल के अन्तिम समय तक, सलुम्बर के सामन्त करते रहे थे।

4.12 राज्य नियंत्रण –

सामन्तों की स्वेच्छाचारी प्रवृत्ति के दमन हेतु परम्परागत सामन्त नियंत्रण व्यवस्था आलोच्यकाल में विद्यमान रही थी। इस नियंत्रण में रोजाना, धौंस तथा दस्तक की प्रक्रियाऐं महत्वपूर्ण रही थी।

रोजाना –

सामन्तों के अपराधी होने पर, राणा की आज्ञा का अनादर करने पर अथवा दरबार में देर से उपस्थित होने पर राज्य द्वारा एक अधिकारी के अधीन अश्वरोही और पैदल सैनिकों का दल सामन्त के ठीकाने पर जाता था। वह अधिकारी राज्याज्ञा दिखला कर सामन्त से आर्थिक दण्ड के रूप में रसद मांगता था। यह रसद की मांग 'रोजाना' कहलाती थी।[44] सामन्त जब तक राज्याज्ञा का पालन नहीं करता तब तक आगन्तुक दल सामन्त के यहां से हटता नहीं था। इस प्रक्रिया को 'धारणा' कहा जाता था। राज्य

मांग की पूर्ति के पश्चात् धरणा कालीन दैनिक भत्ता एवं आने–जाने खर्च प्राप्त कर यह सैन्य दल राजधानी लौट जाता था।[45]

धौंस एवं दस्तक –

यह प्रक्रिया भी राज्य की आज्ञा के प्रति सामन्त द्वारा अवहेलना किए जाने पर क्रियान्वित होती थी। मूलतः इसका प्रचलन 19वीं शताब्दी की देन था। ब्रिटिश संरक्षण में आंग्ल–भारतीय सरकार में सामन्तों की शक्ति को देखने तथा राणा की शक्ति को निरंकुश बनाने के लिए, सामन्तों की छोटी से छोटी त्रुटि पर, बगैर सामन्त पंचायत निर्णय के, ठीकानों और जागीर पर सैन्य दल भेजना प्रारंभ किया था। यह सैन्यदल येन केन प्रकारेण राज्याज्ञा पालन कराने हेतु दबाव डालता था। यह दबाव धौंस कहलाता था। राज्याज्ञा की पूर्ति हेतु दबाव पर किए गए व्यय की क्षतिपूर्ति दस्तक कहलाती थी।

4.13 सामन्तों की स्वतन्त्रता –

सामन्त के क्षेत्र में राणा द्वारा हस्तक्षेप करना परम्परा विरूद्ध माना जाता था। इस प्रकार सामन्त को अपने क्षेत्र में व्यवस्था के व्यवस्थापन में स्वतन्त्रता रहती थी।[46] सामन्त क्षेत्राधीन व्यवस्था को बनाये रखने के लिए जागीर सामन्तीकरण प्रणाली कार्य करती थी। प्रत्येक सामन्त के अधीन जमीन अथवा गांव के सरदार, जागीर के कर्मचारी होते थे। यह संगठन जागीर के स्वामी – सामन्त को सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक रूप में जागीर व्यवस्था एवं राणा के प्रति उत्तरादायित्वों पर परामर्श देता था। यद्यपि राणा की मान–मर्यादाओं के प्रति इस अनुसामन्त संगठन में आदर रहता था किन्तु बगैर इसके परामर्श सामन्त कोई कार्य के लिए स्वतन्त्र

नहीं होता था। इस संगठन का स्वरूप राणा के सामन्त–संगठन की अनुकृति रहा था।

जागीर के सरदारों का संगठन –

सामन्तशाही में राणा व सामन्तों के पारस्परिक कर्त्तव्य तथा सहयोग सम्बन्धों का जितना महत्त्व था, उतना ही महत्त्व सामन्त और उनके सरदारों के कर्त्तव्यों और सम्बन्धों का रहा था। सरदार लोग सामन्तों के दरबार के विशिष्ट व्यक्ति लेते थे। इनके जीवन के कार्य सामन्तों के कार्यों के साथ जुड़े रहते थे। शिकार के लिए जाना, सामन्त दरबार में उपस्थित होना, युद्ध में स्वामी–सामन्तों की सहायता करना, जागीर राजस्व को व्यवस्थापन करना आदि कार्य मुख्य रहे थे। सरदार मुख्यतः सामन्त – दरबार से सम्बन्धित होते थे। अतः वहाँ उनकी उपस्थिति अनिवार्य होती थी। उपस्थिति नहीं होने के लिए सरदारों को नियमानुसार सामन्तों से अवकाश उपभोग की आज्ञा लेनी पड़ती थी। इस प्रकार यह प्रणाली राज्य में उपसामन्तिक व्यवस्था का कार्य करती थी। राज्य जागीर का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व इन सरदारों पर निर्भर रहता था।

सामन्त – स्वतन्त्रता को स्पष्ट करने वाले प्रतिकों में उसके निवास स्थानों में बने हुए शीशमहल, बाड़ीमहल, जिन मन्दिर, दरीशाला, दरबार भवन वैसे ही बने होते थे जैसे कि राणा के महलों में बने शीशमहल, दरीखाने। सामन्त भी अपने सरदारों के साथ दरबार लगाता और नजराने लेता था। जागीर के सरदारों की भी तीन श्रेणियों में भाई–बांट सरदार, मयादी सरदार तथा वंशानुगत सरदार होते थे। सामन्त इन्हें मान–सम्मान तथा पद–प्रतिष्ठा प्रदान करता था। वह अपने स्वामी सामन्त के प्रति स्वामी धर्म एवं सामुदायिक कर्त्तव्य का पालन करने को तत्पर रहते थे।[47]

उपरोक्त सामन्तशाही विवेचन स्पष्ट करता है कि राज्य की सामन्त व्यवस्था, राणा और उसके कुल के लोगों के मध्य सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक सम्बन्धों पर आधारित राज्य व्यवस्था को चलाने के लिए पारस्परिक साझेदारी थी। इन साझेदारी में पैतृक अधिकार, देशभक्ति, स्वामीधर्म तथा सामाजिक–आर्थिक कर्त्तव्य निहीत रहे थे। यह सामन्तवादी पद्धति समाज के सभी तत्वों पर छाई हुई थी। इसका स्वरूप आलोच्यकाल में विकेन्द्रीकृत रहा था, परिवार के मुखियाओं, जाति पंचायतों, ग्राम पंचायतों, जजमानी – जागीर व्यवस्थाओं आदि में प्रचलित परामर्श, नियमाचरण तथा इनके प्रति लोकादर, जाति शुद्धता, वंशानुगत पद स्थितियाँ एवं संयुक्त परिवार प्रणाली में सामाजिक, राजनीतिक प्रतिदर्शों पर राजपूत जाति की सामन्तिक प्रभावों का परिलक्षण यथा स्थान आलोच्य – निबन्ध में दिखाई देता है। इन्हीं आधारों पर कहा जा सकता है कि मेवाड़ की सामन्तशाही में 'हम' की भावना व्याप्त रही थी जबकि यूरोप की सामन्तशाही में मात्र 'मैं' प्रचलित रहा था। राज्य में सामन्तशाही सामाजिक धर्म पर आधारित रही थी। वहाँ यूरोप में सामाजिक स्वार्थ पर। दोनों पद्धतियों की व्यवहारिक तुलना परमात्मा शरण द्वारा करते हुए लिखा गया है कि यूरोप में लोक कानूनों का स्थान व्यक्तिगत कानूनों में, लोक कर्त्तव्य का स्थान व्यक्तिगत कर्त्तव्य ने तथा राजा की व्यवस्थापन शक्ति स्वेच्छाचारी सामन्तों द्वारा अधिग्रहित कर राजा को निर्बल बना दिया था परिणामतः यूरोप की सामन्तिक व्यवस्था शीघ्र नष्ट हो गई किन्तु राजपूत सामन्तशाही व्यवस्था में जागीरदार शक्तिशाली नहीं हुए थे।[48] यद्यपि मराठा अतिक्रमण काल में व्यवस्था उत्पन्न हुई थी फिर भी राणा के प्रति स्वामी धर्म तथा कुल–कर्त्तव्य का आदर्श निरन्तर बना रहा था।

यूरोप में भूमि का स्वामी शासक माना जाता था, किन्तु मेवाड़ के शासक भूमि का भाग लेने का अधिकारी रहा था। मूल में जमीन जोतने वाला भूमि स्वामी माना जाता था। अतः मेवाड़ की यह व्यवस्था आर्थिक नियंत्रण के स्थान पर आर्थिक सहयोग पर आधारित रही थी।

मेवाड़ में प्रशासनिक एवं न्यायी शक्तियाँ ग्राम्य पंचायतों द्वारा उपयोग की जाती थी। उनकी परम्पराओं और आदर्शों में राज्य के सामन्तों का हस्तक्षेप नहीं होता था जबकि यूरोप में यह शक्तियाँ केन्द्र में केन्द्रित रही थी। मूलतः मेवाड़ में सामन्तशाही लोक भय के कारण स्वेच्छाचारी नहीं बन पाई थी।

यूरोप में सैन्य सहायता मात्र सेवा थी जबकि मेवाड़ में यह कर्त्तव्य और बलिदान की भावना से प्रेरित थी। इसी प्रकार यूरोप की तानाशाह सामन्तशाही का पतन हो रहा था तब भी यहाँ सामन्त पद्धति जीवित रही इसके पृष्ठ में राज्य की सामन्तिक पद्धति, राजनीतिक आवश्यकता नहीं होकर सामाजिक और नैतिक प्रभाव शक्ति से प्रोत राष्ट्र सेवा के प्रति समर्पण था।

पाद टिप्पणियाँ –

1) मैक्स वेवर, द थ्यौरी ऑफीशियल एण्ड इकोनोमिक ऑर्गेनाईजेशन (1968), पृ. 373–381

2) जोसेफ आर. स्ट्रेयर एवं कोलबोर्न, फ्यूडलिज्म इन हिस्ट्री (1956), पृ. 27–30

3) एनाल्स, भाग 1, पृ. 133–150

4) सर एल्फ्रेड लायल एशियाटिक स्टडीज, रिलीजियन्स एण्ड सोशीयल (1882), पृ. 207–219

5) गोपाल व्यास – पूर्व मध्यकालीन मेवाड़, एम. ए. (इति.) परीक्षा हेतु प्रस्तुत शो. नि., पृ. 15

6) वी. वि. पृ. 76, 1225, सहीवाला, भाग 1, पृ. 7

7) उ. ई. भा. 1, पृ. 32, गोपीनाथ शर्मा – राज. इति. भाग 1, पृ. 502

8) एस. सी. दत्त – राजपूत पोलीटी (दी गार्जियन, अगस्त 22, 1931 से उद्धृत), वी. वि. पृ. 297, 305–9, उ. ई. भा. 1, पृ. 243, 259–70

9) गोपीनाथ शर्मा – राजस्थान का इतिहास, भाग 1, पृ. 476

10) यह कार्य राणा अमर सिंह प्रथम के शासनकाल (1597–1620 ई.) के पश्चात् सम्पन्न हुआ था, जी. एन. शर्मा, मेवाड़ एण्ड दी मुगल्स एम्परर्स, पृ. 122–123

11) एनाल्स, भा. 1, पृ. 568, वी. वि. पृ. 138–141 मेवाड़ राज्य प्रबन्ध, पृ. 12–13

12) ट्रीटीज एंगेजमेण्ट, खण्ड 3, पृ. 49–54, धारा 17, वी. वि., पृ. 1919, 2057–58, उ. ई. भा. 2, पृ. 736

13) सही वाला, भा. 1, पृ. 13–14, उ. ई. भा. पृ. 166

14) एनाल्स, भा. 1, पृ. 167, वी. वि. पृ. 138–141

15) के. आर. शास्त्री, इण्डीयन स्टेट्स, पृ. 19

16) एनाल्स, भा. 1, पृ. 117, गहलोत, रा. ई., भा. 1, पृ. 343, उ. ई. भा. 2, पृ. 942–973

17) एनाल्स, भा. 1, पृ. 167, मेवाड़ का राज्य प्रबन्ध, पृ. 13–14

18) गहलोत – रा. ई. भा. 1, पृ. 343–349

19) माधु लाल व्यास कलेक्शन – रजि. नं. 6 पृ. 52, जमनेश ओझा – मेवाड़ का इतिहास (अ. प्र.), पृ. 532

20) एनाल्स, भा. 1, पृ. 167–168, गहलोत – रा. ई. भा. 1, पृ. 323 नारायण श्यामराव चिताम्बरे बनेड़ा राज्य का इतिहास, पृ. 273

21) वि. वि. पृ. 730, उ. ई. भा. 2, पृ. 596, 684

22) वी. वि., पृ. 1537, सही वाला भा. 2, पृ. 26

23) क्रमानुसार पहला स्थान – बड़ी सादड़ी, दूसरा स्थान – बेदला, तीसरा स्थान – कोठारिया, चौथा स्थान – सलूम्बर, पांचवा स्थान – बिजौलियां, छठा स्थान – देवगढ़ आदि का रहा था, पुरोहित देवनाथ डायरी (अ. प्र.), वी. वि. पृ. 138–141

24) बांह पसाव का अर्थ छाती से लगाना या गले मिलने से है।

25) मांझा पगड़ी में लगाने का कीमती डोरा था। यह रूपहरी और सुनहरी दो प्रकार का होता था।

26) बीड़े से तात्पर्य पान से है जो राणा द्वारा स्वयं हाथ से दिया जाता था, इसमें भी प्रथम, द्वितीय क्रम रहता था, बनेड़ा राज्य का इतिहास, पृ. 152

27) कोठारी कलेक्शन, प्रधानगी मुरजाद के कागज़ात, कोठारी, पृ. 15

28) वी. वि. पृ. 141 एवं 142

29) एनाल्स भा. 1, पृ. 271 एवं 284, शोध पत्रिका (सित. 1959), पृ. 65–68

30) पुरोहित देवनाथ डायरी, बनेड़ा राज्य का इतिहास, पृ. 273–274

31) शाहपुरा राज्य की ख्यात, उपरोक्त, पृ. 40, बनेड़ा राज्य का इतिहास, उपरोक्त, पृ. 275

32) एनाल्स भाग 1 पृ. 184

33) उपरोक्त, इन्डीयन कल्चर खण्ड 13 भाग 2 पृ. 76

34) एनाल्स भाग 1 पृ. 185, देवनाथ पुरोहित डायरी ह.लि. बही कैद–नजराना– उपरोक्त बनेड़ा राज्य का इतिहास

35) वी. वि. पृ. 2001–2006, 2075, उ. ई. भा. 2, पृ. 793

36) ट्रीटीज, एंगेजमेण्ट, खण्ड 3, पृ. 30, नकल बही वि. सं. 1901 बस्ता 1 बनेड़ा राज्य का इतिहास, पृ. 159

37) एनाल्स भाग 1 पृ. 187–188, इण्डियन कल्चर, उपरोक्त पृ. 77

38) व. रि. जमा बहियां (19वीं शताब्दी), बस्ता 4, 9, 16, ट्रीटीज, एंगेजमण्ट, खण्ड 3, पृ. 32

39) एनाल्स भा. 1, पृ. 166

40) एनाल्स, भा. 1, पृ. 186, बनेड़ा राज्य का इतिहास, पृ. 157

41) एनाल्स, उपरोक्त, सरक्यूलर रजिस्टर स्टेट महकमाखास, भा. 1, पृ. 247, मेवाड़ राज्य प्रबन्ध, पृ. 63

42) पो. वं. 11 नवम्बर 1854 ई. नं. 813, ट्रीटीज, एंगेजमेन्ट खण्ड 3, पृ. 25–27

43) व. रि. जागीर पट्टा खतूणी बही वि. सं. 1876 (1819 ई.) श्रावण वदी 1, बस्ता 10, पो. वं. 11 नवम्बर 1854 नं. 813

44) ट्रीटीज एंगेजमेण्ट, खण्ड 3, पृ. 20, 28 व 30

45) एनाल्स भाग 1 पृ. 172, ट्रीटीज एंगेजमेण्ट, खण्ड 3, पृ. 45–47, उ. ई. भा. 2, पृ. 736

46) एनाल्स भाग 1 पृ. 172, उ. ई. भा. 2, पृ. 736

47) एनाल्स, भा. पृ. 182–183, 203–205, बनेड़ा राज्य का इतिहास, पृ. 106

48) एनाल्स, भा. 1, पृ. 199–200

अध्याय पंचम

मेवाड़ प्रशासन में प्रमुख ऐतिहासिक घरानों का योगदान

अध्याय पंचम – मेवाड़ प्रशासन में प्रमुख ऐतिहासिक घरानों का योगदान

5.0 भामाशाह–घराना : मेवाड़ प्रशासन में योगदान

5.1 बोलिया घराना

5.2 पाणेरी घराने की भूमिका

5.3 हल्दीघाटी युद्ध का अमर शहीद : कल्याण जी पानेरी

5.4 मेवाड़ का पुरोहित घराना : एक परिचय

पाद टिप्पणियाँ

परिशिष्ट – मेवाड़ महाराणा द्वारा प्रदत्त महत्वपूर्ण ताम्रपत्र

अध्याय : पंचम

मेवाड़ प्रशासन में प्रमुख ऐतिहासिक घरानों का योगदान

5.0 भामाशाह–घराना : मेवाड़ प्रशासन में योगदान –

भामाशाह 'कावड़िया' गोत्र का ओसवाल जैन वैश्य था। इसके पूर्वज दिल्ली के रहने वाले थे, वहां से चलकर ये कभी अलवर में आकर बस गये थे।[1] इनके पूर्वजों का विशेष वृत्तान्त नहीं मिलता। यह वंश मूल में तोमर वंशी राजपूत था जिसने बाद में जैन धर्म अंगीकार कर लिया था।[2]

भामाशाह के पिता का नाम भारमल्ल और माता का नाम कर्पूरदेवी था जो नादेचा गोत्र की थी। इनके दो पुत्र हुए – भामाशाह और ताराचन्द। भामाशाह बड़ा और ताराचन्द छोटा था।

'प्रधान' का पद प्राप्त होना –

हल्दीघाटी युद्ध में महाराणा प्रताप के अनेक विश्वसनीय वीर सरदार मारे जा चुके थे। जो बचे थे वे बहुत थोड़े थे। भामाशाह जैसे अतरग और योग्य व्यक्ति को पहचान कर व्यवस्था और सैनिक क्षमता की दृष्टि से उपयोगी मानकर महाराणा प्रताप ने भामाशाह को अपना 'प्रधान' बनाया तथा रामाशाह महासहाणी को इस पद से हटा दिया।

भामाशाह ने हल्दीघाटी युद्ध में अपनी सैनिक कुशलता का परिचय दिया था, परन्तु प्रधान के पद पर रहते हुए उसने अनेक बार अपनी प्रशासनिक, सैनिक और प्रबन्धक कुशलता को प्रदर्शित किया। यही नहीं वह अच्छा भवन–निर्माता भी सिद्ध हुआ।

हल्दीघाटी युद्ध 18 जून, 1576, ज्येष्ठ शुक्ल 2, सं. 1633 को लड़ा गया। इसके ठीक बाद भामाशाह को प्रधान बना दिया गया, क्योंकि भाद्रपद

सुदि 5, सं. 1633 (अगस्त, 1576) के सथाणा गांव के ताम्रपत्र में, जो कुम्भलगढ़ में महाराणा प्रताप के आदेश से दिया गया था, भामाशाह का उल्लेख है जिसने इसे जारी करवाया था। अतः स्पष्ट है कि अगस्त 1576 तक भामाशाह 'प्रधान' नियुक्त किया जा चुका था। वैसे भामाशाह को महाराणा प्रताप के राज्यारोहण के काल से ही कोषाधिकारी और आर्थिक प्रबन्ध की जिम्मेदारी सौंप दी गई थी।[3] जब भामाशाह को 'प्रधान' का पद सौंपा गया लगभग उसी समय उसके भाई ताराचन्द को गोड़वाड़ के विस्तृत भूभाग का स्वतन्त्र गवर्नर नियुक्त किया गया। भामशाह ने मुगलों के विरूद्ध दिवेर के युद्ध में महाराणा प्रताप की सैन्य शक्ति को सम्बल देते हुए स्वयं भी युद्ध भूमि में लड़ा। उल्लेखनीय है कि महाराणा प्रताप के शासन प्रबन्धन और मुगल सत्ता के विरूद्ध सभी युद्धों में त्याग और समर्पण कर स्वामीभक्ति का उच्च आदर्श स्थापित किया।

भामाशाह की एक पुत्री थी, जिसका नाम जगीशा बाई मिलता है। इसका विवाह बीकानेर के सुप्रसिद्ध बच्छावत परिवार के कर्मचन्द के साथ हुआ था। कर्मचन्द संग्राम का पुत्र था। इस वंश में प्रारम्भ से ही सब लोग बीकानेर राज्य के मंत्री रहे। राव बीका ने जांगल प्रदेश में बीकानेर की स्थापना की एवं अपने स्वतन्त्र राज्य की नींव डाली। वत्सराज उसका मंत्री रहा। वह बहुत प्रसिद्ध हुआ। वत्सराज के वंशज 'बच्छावत मेहता' कहलाए।

5.1 बोलिया घराना –

मेवाड़–मुगल संधि (सन् 1615 ई.) का सूत्रधार : प्रधानमंत्री शाह रंगोजी बोलिया –

भारत में मध्यकालीन मुस्लिम शासकों ने प्रारम्भ से ही युद्ध एवं सैन्य शक्ति और कूटनीति के बल से मेवाड़ को अपने अधीन करने का सतत

प्रयत्न किया परन्तु वे असफल ही रहे। उन्होंने कभी भी मुगलों की अधीनता स्वीकार नहीं की। यह महान् गौरव की बात थी, परन्तु लगभग चार युग के निरन्तर संघर्ष के उपरान्त विषम परिस्थितियों में महाराणा अमरसिंह प्रथम एवं बादशाह जहाँगीर के बीच सन् 1615 ईस्वी में सम्मानजनक संधि का श्रेय शाह रंगोजी बोलिया को है। बोलिया परिवार के इतिहास पुरूष प्रारम्भ से ही सैन्य एवं प्रशासनिक पदों पर रहे, जिसकी स्वामीभक्ति को देखते हुए रंगोजी बोलिया एवं उनके उत्तराधिकारियों को मेवाड़ में प्रशासनिक सेवाओं के एवज में भूमि, जागीर, सम्मान दिया जाता था। इसकी बोलिया वंश के हाल ही में प्राप्त अभिलेखों से पुष्टि होती है।

मेवाड़ – मुगल संधि (सन् 1615 ई.) –

दिनांक 5 फरवरी, 1615 की मुगल मेवाड़ सन्धि[4] का विस्तृत विवरण केवल तुजुके जहांगीरी[5] या जहांगीरनामें में मिलता है। मुंहता नैणसी की ख्यात जैसे ग्रन्थों में संकेत मात्र उपलब्ध हैं ''टॉड कृत राजस्थान, वीर विनोद'' अथवा परवर्ती ऐतिहासिक पुस्तकों के लिए ये ही आधार रहे हैं। स्थानीय स्त्रोतों का उपयोग अद्यावधि नहीं के बराबर ही हुआ है। हाल ही में मुझे मेवाड़ इतिहास में योगदान देने वाले संकटमोचक बोलिया घराने के अप्रकाशित अभिलेख प्राप्त हुए हैं, जिनसे यह प्रमाणित होता है कि महाराणा अमरसिंह प्रथम और जहांगीर के मध्य हुए इस समझौते का सूत्रधार शाह रंगोजी बोल्या ही थे। रंगोजी बोल्या के योगदान की जानकारी बोलिया परिवार के उपलब्ध अभिलेखों से होती है संधि की परिस्थितियों व शर्तों का विवरण दिया गया है।

शाह रंगोजी बोलिया : मुगल सम्राट जहाँगीर और महाराणा अमरसिंह प्रथम के मध्य हुई संधि[6] (5 फरवरी सन् 1615 ई.) के प्रमुख सूत्रधार –

वस्तुतः महाराणा प्रताप की मृत्यु के बाद जहाँ एक ओर मेवाड़ के महाराणा अमर सिंह प्रथम और उसके सरदार, सेना और जनता दीर्घकालीन मुगलों से संघर्ष कर रही थी तो दूसरी ओर अकबर की मृत्यु के उपरान्त जहाँगीर और उसकी सेना भी मेवाड़–मुगल संघर्ष से मुक्ति पाना चाहती थी ऐसी परिस्थितियों के दौरान निहाचन्द बोलिया के प्रपौत्र रंगोजी बोल्या जो मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह जी (प्रथम) की सेवा में आये। उल्लेखनीय है कि मुगल सम्राट जहाँगीर और राणा अमरसिंह के मध्य सन् 1615 ई. में सम्पन्न हुई, इस सम्मानजनक संधि के प्रमुख सूत्रधार श्री रंगोजी बोल्या ही थे। **रंगोजी की इस सेवा के बदले में महाराणा अमरसिंह ने उन्हें मेवाड़ राज्य के प्रधान का पद सौंपा। साथ ही हाथी पालकी और अक्षत व मोतियों से सम्मानित किया गया। उन्हें 4 गाँवों की जागीरी के पट्टे दिये गये। (1) भानपुरा, (2) काणोली, (3) मेवदा और (4) जामुणा जिनके पट्टे इस वंश वाले के पास वर्तमान में मौजूद है। रंगोजी ने उदयपुर में मोती चोहट्टा में घुमटी वाली छतरी अपनी हवेली के ऊपर बनाई। इस प्रकार की घुमटी वाली छतरी किसी हवेली पर बनाने का अधिकार महाराणा सा. की ओर से किसी विशेष व्यक्ति को ही दिया जाता था।** रंगोजी को यह सम्मान मिला। यह हवेली कालान्तर में करजाली ठिकाने के महाराज श्री सूरतसिंह जी को दे दी गई। हवेली में अब भी स्मृति सूचक एक शिलालेख स्थित कहा जाता है। रंगोजी पर्याप्त ख्याति प्राप्त व्यक्ति थे तथा साथ में धर्म प्रेमी व दानवीर भी थे। अपने जीवन में

उन्होंने एक–एक लाख प्रसाव के तीन दान किये। सं. 1719 में इन्होंने ''पुर'' में भगवान का भव्य मंदिर बनाया, मूर्ति की प्रतिष्ठा सं. 1799 में की गई और तीन दान भी किये। रंगोजी के भाई पंचाण थे। जिनके वंशज पंचावत कहलाते हैं। आपके 5 पुत्र हुए (1) चोरवा जी, (2) रेखाजी, (3) राजूजी, (4) श्यामजी और (5) पृथ्वीराज जी।

रंगोजी ने इन शर्तों को अपने स्वामी के सम्मान पर किसी भी प्रकार का आघात पहुँचाने वाला नहीं पाया। अतः दिल्ली से मेवाड़ महाराणा के सामने उसने बादशाह की उपर्युक्त शर्तें रखी। सभी सामन्तों ने अपनी विकट परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा इन शर्तें को स्वधर्म एवं राज्य पर किसी प्रकार से संकट लाने वाला न पाकर, उन्हें स्वीकार कर लिया और कुमार कर्णसिंह को बादशाही दरबार में दिल्ली भेजा। संधि की शर्तें निश्चित हो जाने पर मेवाड़ से शाही फौजें बाहर हटा दी गई।

मेवाड़–मुगल सन्धि[7] के बारे में मेवाड़ के इतिहास वीर विनोद, भाग–1 एवं पं. गौरीशंकर हीराचन्द औझा के द्वारा लिखित उदयपुर राज्य का इतिहास भाग–2 में तथा जहाँगीर ने अपनी आत्मकथा तुज्क–ए–जहाँगीरी में मेवाड़ के साथ सम्मानजनक सन्धि का उल्लेख किया है, परन्तु बोलिया परिवार के अभिलेखों में सन्धि की जिन शर्तों का उल्लेख हुआ है उनमें सन्धि का उद्देश्य व भावना में कोई अन्तर नहीं है, परन्तु शर्तों में अन्तर है। सम्भव है कि सन्धि के प्रारम्भ में दोनों पक्षों ने अपनी शर्तें विश्वस्त अधिकृत अधिकारियों के साथ लिख भेजी होगी और अंत में जहाँगीर द्वारा जारी फरमान में रंगोजी बोलिया और मेवाड़ के अन्य अधिकारियों की सलाह से संधि को अंतिम रूप दिया।

रंगोजी ने प्रधान (मंत्री) पद पर रहकर मेवाड़ के गांवों की सीमा का अंकन करवाया तथा जागीरदारों के गांवों की रेख भी निश्चित की।

रंगोजी बोलिया का नामोल्लेख हमें इन तीन ग्रंथों के अतिरिक्त अन्यत्र नहीं मिलता परन्तु रंगोजी के ही वंशज इस बोल्या परिवार के कई एक व्यक्तियों का हमें मेवाड़ और मेवाड़ के बाहर भी कोई महत्वपूर्ण उच्च पदों पर कार्य करने का उल्लेख मिलता है, जिनमें एकलिंगदास बोल्या का नाम प्रमुख है। प्रस्तुत सामग्री के आधार अंतिम दो ग्रंथ भी इसी परिवार की पैतृक सम्पत्ति रही है।[8]

5.2 पाणेरी घराने की भूमिका –

चीरवा गाँव का शिलालेख मेवाड़ में गुहिलवंशज 41वें शासक समरसिंह के राजत्वकाल में (वि.सं. 1330 से 1358 – ईस्वी सन् 1273 से 1301) वि.सं. 1330 की कार्तिक सुदी प्रतिपदा का है। इस शिलालेख में 51 श्लोक हैं एवं अन्तिम पंक्ति में संवत् गद्य में दिया गया है। इसमें गुहिलवंशी बाप्पा रावल में वंशज मथनसिंह, पद्मसिंह, जैत्रसिंह, तेजसिंह और समरसिंह के राज्यकाल की अमुक–अमुक घटनाओं का विवरण है। इसके साथ ही शिलालेख में उल्लेखित है कि जब मेवाड़ राज्य की राजधानी नागद्रह (नागदा) थी, तब वहां के राजा मथनसिंह ने वहां के ब्राह्मण जाति के ''उद्धरण'' को, जो दुष्टों को सबक सिखाने वाला तथा शिष्टों का रक्षण करने में कुशल था, को नागदा का तलारक्ष (कोतवाल – नगर रक्षक अधिकारी) बनाया। मथनसिंह के उत्तराधिकारी पद्मसिंह ने उद्धरण के आठ पुत्रों में से सबसे बड़े योगराज को नागदा का तलारक्ष बनाया। विप्र वेश धारण करने वाले योगराज ने पद्मसिंह से नागदा के निकट बड़ी आय वाला ''चिरकूप'' (चीरवा) गाँव पहले पहल पाया।

समृद्धिशाली योगराज ने योगेश्वर (शिव) और योगेश्वरी (देवी) के मन्दिर बनवाये। योगराज के चार पुत्र थे – पमराज, महेन्द्र, चंपक और क्षेम। योगराज का प्रथम पुत्र पमराज नागदा नगर टुटा, उस समय भूताला की लड़ाई में गुलामवंश के सुल्तान अल्तमश से लड़कर शहीद हो गया। महेन्द्र का पुत्र बलाक राजा जैत्रसिंह (राज्यकाल विक्रम संवत् 1270 से 1309) के आगे लड़ते हुए कोटड़ा के युद्ध में राणा त्रिभुवन के साथ लड़ाई में शहीद हो गया।[9] जैत्रसिंह ने योगराज के चौथे पुत्र क्षेम को चित्तौड़ की तलारक्षता (कोतवाली) सौंप दी। क्षेत्र के दो पुत्र थे – रतन और मदन। चित्तौड़ की तलहटी में राजा तेजसिंह के साथ बीसलदेव के युद्ध में रत्न शत्रुओं का संहार करता हुआ शहीद हुआ। मदन को राजा समरसिंह ने चित्तौड़ का तलारक्ष बनाया। तलारक्षता के बड़े पाप का विचार कर मदन ने अपना चित्त शिव पूजन आदि में लगाया।

उद्धरण के आठ पुत्रों में से पहले पुत्र योगराज का वंश उपरोक्त प्रकार फैला। दूसरे पुत्र रतभू का पुत्र केल्हण केल्हण का पुत्र उदयी और उदयी का पुत्र कर्मण हुआ। यही कर्मण (कर्मा) वर्तमान चीरवा गांव का संस्थापक कर्मा जी है। चीरवा का शिलालेख अनुसार तत्कालीन राजाओं एवं उनसे सम्बन्धित तलारक्षकों (नगररक्षक अधिकारियों) का विवरण निम्न प्रकार है –

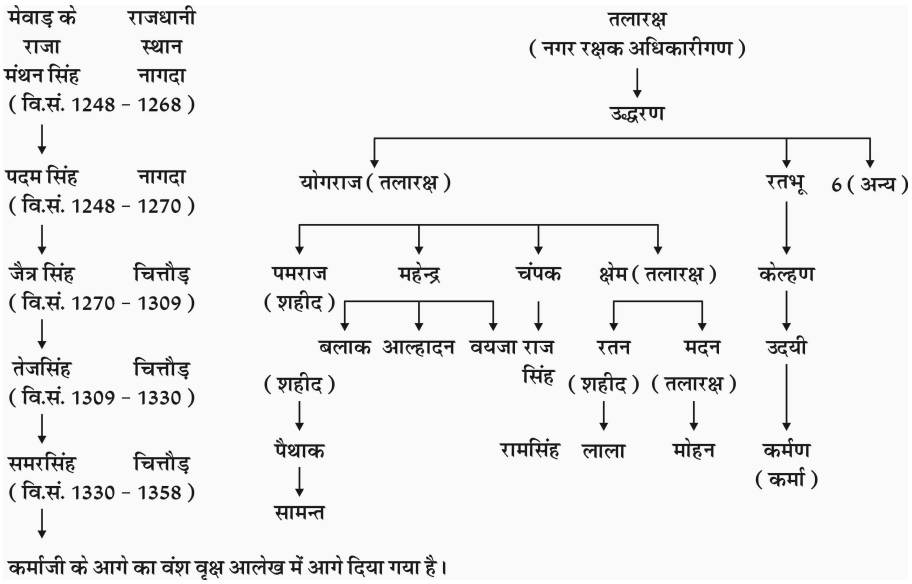

राजा लक्षसिंह (लाखा) (वि.सं. 1439–1475) ने चीरवा गांव एकलिंग जी को भेंट किया। यह उल्लेख एकलिंग जी के दक्षिणी द्वार पर स्थापित प्रशस्ति में है। महाराणा रायमल के समय (वि.सं. 1530–1551) एकलिंग जी मन्दिर को भेंट किये गये कई गाँव पुनः बहाल किये गये।

वि.सं. 1633 (सन् 1576) हल्दीघाटी के प्रसिद्ध युद्ध में देलवाड़ा का जागीरदार झाला मानसिंह शाही फौज से लड़कर शहीद हुआ। उसके बेटे, शत्रुशाल, कल्याण व आसकरण थे। महाराणा प्रतापसिंह और शत्रुशाल, जो कि मामा–भान्जा थे, के बीच तकरार होने से महाराणा प्रताप ने कहा – शत्रुशाल नाम वाले को मैं कभी अपने राज्य में नहीं रखूंगा। महाराणा ने

देलवाड़ा की जागीर राठौड़ (बदनोर वाले) को दे दी। शत्रुशाल तो मेवाड़ छोड़कर जोधपुर चला गया। उसके छोटे भाई कल्याण एवं आसकरण ने उस समय चीरवा गांव में आश्रय लिया, क्योंकि चीरवा गाँव ब्राह्मणों का शासन (माफी) गाँव था।

चीरवा गाँव उत्तर की ओर से उदयपुर शहर का एवं दक्षिण की ओर से एकलिंग जी का प्रवेश द्वार होने से इसका तत्कालीन समय में काफी सामरिक महत्व रहा है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि यह गाँव मेवाड़ के राजा (श्री एकलिंगनाथ) के दक्षिण की ओर से एवं राजधानी (उदयपुर) के लिये उत्तर की ओर से बाह्य सुरक्षा पंक्ति (Outer Line of Diffence) रहा है।

महाराणा अमर सिंह (द्वितीय) (वि.सं. 1755 से 1767) को अपनी सेना के लिए रूपयों की आवश्यकता थी। उन्होंने खालसे की प्रजा, जागीरदारों अहलकारों के साथ–साथ ब्राह्मणों तथा चारण भाटों के शासनिक गाँवों (माफी) से भी रूपये वसूली चाही।[10] इस पर खालसे की प्रजा जागीरदारों एवं अहलकारों के साथ–साथ ब्राह्मणों ने भी छः लाख रूपये पुरोहित के मारफत महाराणा को दिये।

चीरवा गाँव के बड़वे एवं स्थानीय बुजुर्गों के अनुसार मेनारिया समाज के पूर्वज श्री कर्मा जी व श्री योगेश्वर जी दोनों भाई पावनस्थली श्री एकलिंग जी में आये थे। श्री योगेश्वर जी वहीं रहे तथा अपनी आयु पूर्ण कर देवलोक गमन हुए। उनकी समाधी बाघेला तालाब गणेश घाटा द्वार के पास से श्री धारेश्वर जी के लिए बने पैदल मार्ग के पास बनी है। आज भी सभी मेनारिया परिवार शादी–विवाह एवं शुभ कार्यों के समय इस समाधी ''गोतरतां'' पर शीश नवाकर आशीर्वाद ग्रहण करते हैं। बड़वे की

जानकारी कई बार अपुष्ट होती है एवं बुजुर्गों के पास बड़वों से प्राप्त जानकारी ही सुलभ रहती है। ऐसे में पुराने इतिहासकारों के अनुसार संभवतः योगराज (तलारक्ष नागदा) ही योगेश्वर है। जिनकी समाधी श्री धारेश्वर जी के मार्ग पर स्थित है। श्री कर्मा जी योगराज के भाई रतभू के वंशज है, जैसा कि तलारक्ष उद्धरण के वंशवृक्ष में उल्लेखित है। इतिहासकारों ने योगराज को टांटेड जाति का बताया है। यह उनका तत्कालीन स्थानवाचक उपनाम रहा है, जो कालान्तर में चीरवा गांव के ब्राह्मणों का मेनार से सम्बद्ध होने से मेनारिया उपनाम हुआ। योगराज (तलारक्ष नागदा) के वंशज जब मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ स्थानान्तरित हुई, उस समय वे चित्तौड़ चले गये। कालान्तर में चीरवा गाँव[11] की माफी (शासन) कर्मा जी को प्राप्त हुई। इन तथ्यों के बारे में आगे और भी खोज की आवश्यकता है।

''वंश-वृक्ष'' मेनारिया ब्राह्मण समाज गाँव चीरवा

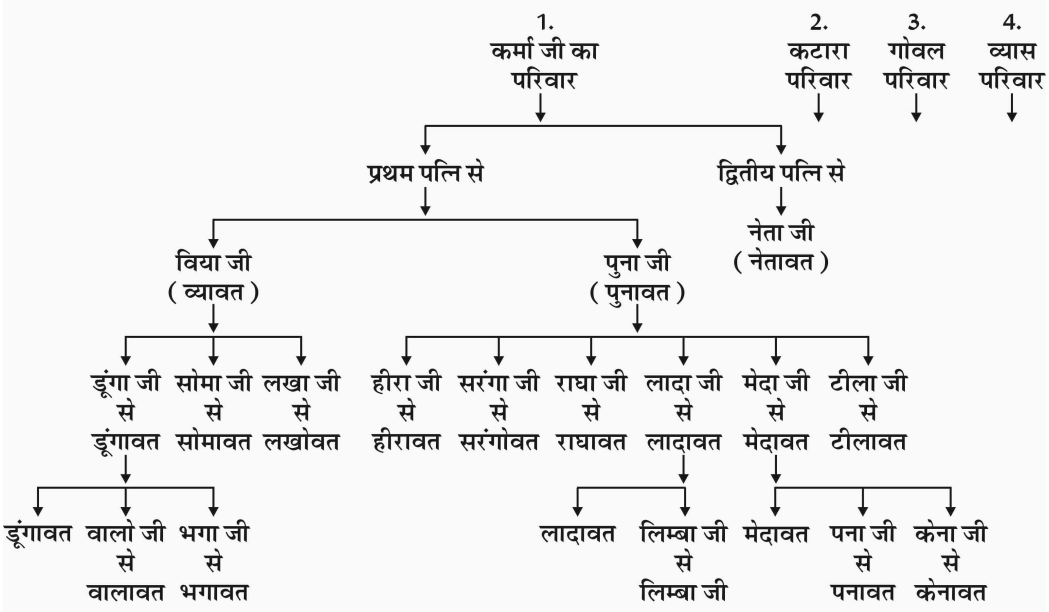

वर्तमान में गाँव में डूंगावत, वालावत, भगावत, सोमावत, लखोवत (सभी व्यावत), हीरावत, सरंगोवत, राघावत, लादावत, मेदावत, केनावत (सभी पुनावत), कटारा, गोवल एवं व्यास परिवार आवासित है।

5.3 हल्दीघाटी युद्ध का अमर शहीद : कल्याण जी पानेरी –

महाराणा प्रताप का नाम इतिहास के पृष्ठों में स्वतन्त्रता, स्वाभीमान, स्वराष्ट्र प्रेम एवं सनातन धर्म, संस्कृति के महानायकों में सत्युत्य है। प्रताप के उज्जवल कार्यों और उसके उदात्त मानवीय चारित्रिक गुणों के आधार पर ब्रिटिश इतिहास लेखक कर्नल जेम्स टॉड ने लिखा कि मुगल सम्राट के विरूद्ध निरन्तर संघर्ष के दौरान अरावली की घाटी में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा जो लियोनिडास (ग्रीक योद्धा) हो, कोई ऐसी स्थली नहीं थी जो युनान की थर्मोपल्ली हो, निश्चय ही हल्दीघाटी भारत की थर्मोपल्ली (ई.पू. 488 में ईरान–युनान के मध्य ऐतिहासिक रणभूमि) और दीवेर इसका मैराथन (यूनान के प्रायद्वीप में वह युद्ध स्थल जहाँ युनानी सेनाओं ने साम्राज्यवादी ईरानियों से यूनान के देशों को मुक्त कराये)

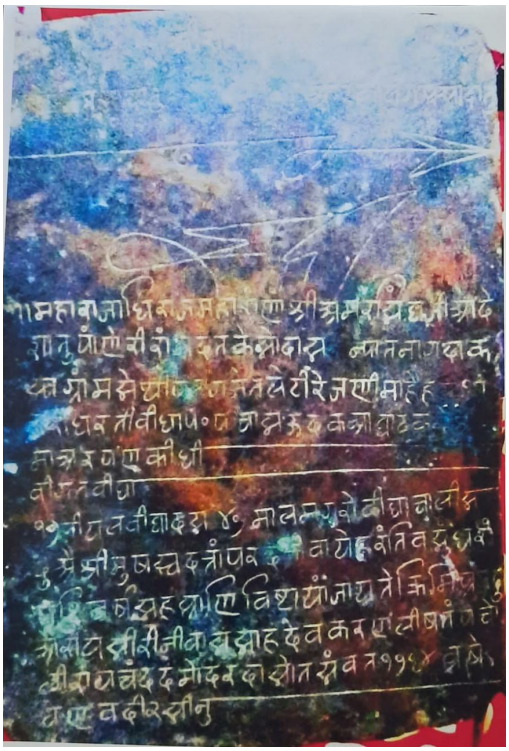

महाराणा प्रताप एवं साम्राज्यवादी मुगलसत्ता के मध्य हुए 19 बार छोटी मोटी लड़ाईयाँ हुई परन्तु 18 जून 1576 के हल्दीघाटी के युद्ध में

प्रताप के साथ मातृभूमि की रक्षार्थ हिन्दू, मुस्लिम, राजपूत, ब्राह्मण, वैश्य, भील एवं अन्य समस्त वर्गों के लोगों ने भाग लिया। जिनमें हकीमखां सूरी, ग्वालियर का राजा रामशाह तंवर, उसका पुत्र शालीवाहन, झाला मान सिंह (बड़ी सादड़ी), वीर जयमल का पुत्र राठौड़ रामदास, देवगढ़ का रावत सांगा चूण्डा, जगमाल चूण्डावत पुत्र सांगा चूण्डावत, कल्याणजी पानेरी (मेनारिया ब्राह्मण गवारड़ी का), चारण अभयचन्द, देसूरी का खान सोलंकी, रामासिंह व प्रतापसिंह चूण्डावत, भाई कृष्णदास, देलवाड़ा का मानसिंह झाला, डोडिया भीमसिंह इत्यादि ने प्राणोत्सर्ग किया। ऐसे अज्ञात सैनिक एवं जन यौद्धा भी लड़े एवं शहीद हुए जिनके स्मृति स्मारक बनास नदी एवं बेड़च के मध्य रहने वाले लोगों ने अपने–अपने पूर्वजों के बनवाये जो खेतों, खलियानों एवं गाँवों के चौराहों पर देखे जा सकते हैं।

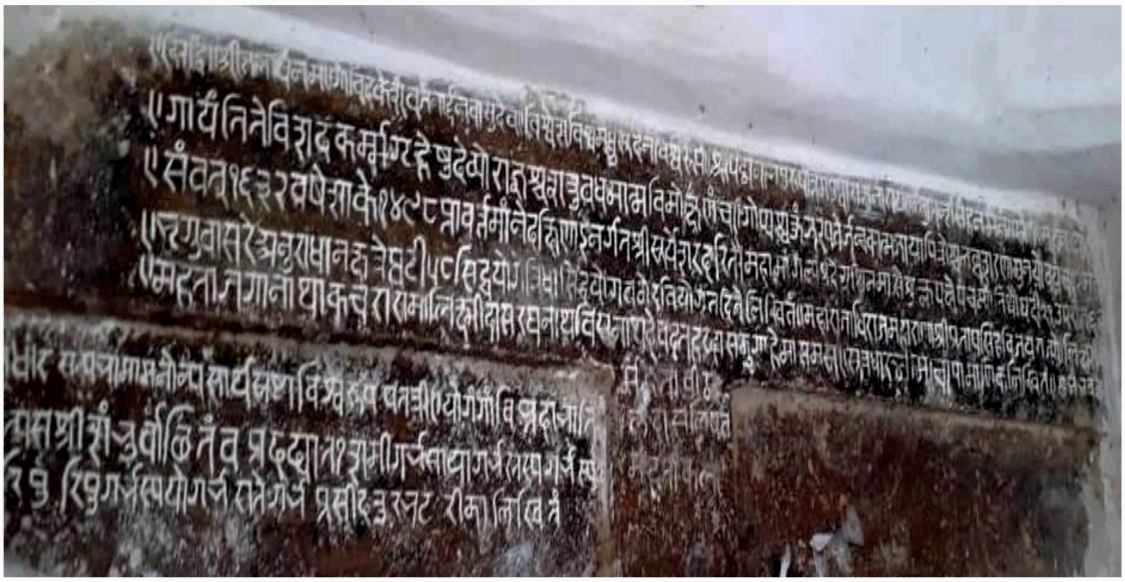

ग्राम खरसाण के चारभुजानाथ मन्दिर के प्रवेश द्वार पर उत्कीर्ण महाराणा प्रताप कालीन दुर्लभ शिलालेख
विक्रम संवत् 1632, शक वर्ष 1498 (ईस्वी सन् 1576) हल्दीघाटी युद्ध में महाराणा प्रताप के विजय महोत्सव पर उत्कीर्ण

(10 अगस्त, सन् 2015 ई.) फोटो प्रति –
खोजकर्ता – डॉ. जी.एल. मेनारिया, इतिहासकार

मेनार का गैर नृत्य (महाराणा प्रताप का हल्दीघाटी युद्ध – विजयोत्सव परम्परा का प्रतीक)

ऐसे अमर शहीदों में महाराणा प्रताप के सहयोगी रहे कल्याणजी पानेरी का नाम उन अज्ञात शहीदों की सूची में है। गवारड़ी गाँव (जिला राजसमन्द तहसील रेलमगरा) के इस वीर योद्धा कल्याणजी एवं उसकी सहगामी लालीदेवी का स्मृति स्मारक उक्त गाँव के चारभुजा मन्दिर के प्रमुख चौराहे पर विद्यमान है। स्थानीय राव परिवार के रिकॉर्ड बही में कल्याणजी पानेरी के पूर्वजों एवं उसके उत्तराधिकारी वंशावली से ज्ञात होता है कि बाप्पा रावल के समय नागदा के नरेश जोशी की पीढ़ियों में हुआ था।

गवारड़ी गाँव के अमर शहीद कल्याणजी पानेरी एवं उनकी पत्नि लालीबाई का स्मारक (फोटो सौजन्य कल्याणजी के परिवार के श्री बद्रीलाल द्वारा)

5.4 मेवाड़ का पुरोहित घराना : एक परिचय –

नागदा पालीवाल ब्राह्मणोत्पत्ति –

ब्राह्मणों की यों तो अनेक जातियां हैं, पर मुख्यतया 10 जातियां हैं। इनमें से 5 तो पंचगौड़ और 5 पंचद्राविड़ कहलाती हैं। पंचद्राविड़ में गौड़, कान्यकुब्ज, सारस्वत, मैथिल और उत्कल है। ये दशों देश–प्रदेश के नाम हैं, इनमें रहने के कारण था इनसे निकलकर अन्यत्र जाने से भी वे इन्हीं नामों से पुकारे जाते हैं।[12] पालीवाल नाम कैसे हुआ, इसमें कई मतभेद हैं। कोई तो पालीवालों का निर्गम स्थान पाली (मारवाड़) मानते हैं और कुछ लेखक पाली (गुजरात) कहते हैं।

पाली (गुजरात) निर्गम स्थान मानने के प्रमाण हैं –

1) नाथद्वारा निवासी स्व. पं. बालकृष्णजी पुरोहित (मूल गांव बागोल वाले) ने दिनांक 05/02/37 ई. को एक लेख प्रकाशित किया उसकी निम्न पंक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं –

'श्री स्थल सिद्धपुर साम्प्रदायी राजामूल के दत्त ग्राम 171 पाली नगर उपनाम पालनपुर तथा पालीताणें के ब्राह्मण पालीवाल जातीय पंच द्राविड़ टोलकिए तथा औदिच्य श्रीमान् मेवाड़ाधीश के पास आकर पुरोहिताई प्राप्त कर मेवाड़ में निवास करने लगे। जिनके वंशज 44 खेड़ा, 24 खेड़ा तथा बड़े पालीवाल अद्यावधि विद्यमान है।'

स्व. पं. बालकृष्ण जी ने बहुत अन्वेषण करके यह लेख लिखा –

2) स्वर्गीय बड़ा पुरोहित जी श्री भूपाललाल जी ने एक प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक लेखक को बतलाई, उसमें लिखा है – 'पुरोहित सरशलजी के

पिता विजयदेव जी थे, ये औदिच्य ब्राह्मण थे, पर पाली (गुजरात काठियावाड़) में रहने के कारण पालीवाल कहलाए।'

3) 'महात्मा पदवाची जैन ब्राह्मणों का संक्षिप्त इतिहास' के पृष्ठ 130 पर यह लेख है – 'सरशलजी औदिच्य ब्राह्मण थे – पाली (गुजरात) से आने के कारण पालीवाल कहलाए – ये मारवाड़ – पाली से नहीं आए।'

4) 'पालीवाल संदेश आगरा' के एक लेख द्वारा भी ज्ञात हुआ – 'पाली (गुजरात) से आने वाला समुदाय मेवाड़ प्रान्त में अधिक तर बसा हुआ है। यह भाटों की पुस्तकों, प्राचीन लेख–पत्र तथा ताम्रपत्रों से प्रमाणित होता है।'

5) 'टॉड राजस्थान' नामक पुस्तक में टॉड साहब लिखते हैं – 'पाली के निवासी ब्राह्मण बड़े धनवान थे, दान नहीं लेते थे और व्यापार किया करते थे। कन्नौज के राजा स्वदेश द्रोही जयचन्द के पौत्र रावसिंहाजी खेड़नाथ के पास पाली नगर (गुजरात) पर बारहवीं शताब्दी के आरम्भ में आकर आक्रमण किया। पाली निवासी ब्राह्मणों के पास अतुलित सम्पत्ति थी। होली के दिन जब ब्राह्मण–ब्राह्मणियाँ होली खेलने लग गई, उस दिन रावसिंहाजी ने ब्राह्मणों पर आक्रमण करके इनकी कुल सम्पत्ति पर अपना अधिकार कर लिया।'

आबागढ़ गुजरात में चांपानेर स्टेशन के पास स्थित है। इन्हीं गायनों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पालीवाल ब्राह्मण जाति की उत्पत्ति गुजरात के पालीनगर से ही है।

पालीवाल ब्राह्मण पाली नगर गुजरात से ही आकर मेवाड़ में बसे। विक्रमीय 11वीं – 12वीं शताब्दी में गुजरात में अराजकता के कारण लूटेरे

लूट खसोट किया करते थे। इनसे तंग आकर पाली से निकल कर मेवाड़, मारवाड़, जैसलमेर, बीकानेर, मध्यभारत, पंजाब, संयुक्त प्रान्त आदि स्थानों पर जाकर बस गये। 400–500 वर्ष से अपने आपको अलग–अलग समझने लग गए, पर यह भ्रम मात्र है क्योंकि ये सब मूल स्थान के कारण एक थे।

विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि आजकल जो पालीवाल कहलाते हैं, वे असली पाली से आने वाले ब्राह्मणों की संतान नहीं है क्योंकि विवाहादि के कारण अन्य ब्राह्मण जाति से भी बहुत व्यक्तियों को सम्मिलित कर पालीवाल बना लिए गए। जैसे नागदा, नागर, सांचोरा, औदिच्य, पंचगौड़, श्रीगौड़ आदि जाति वालों से सम्पर्क स्थापित कर पालीवाल नाम दे दिया गया। बिखरे हुए भाइयों को एक सूत्र में बांधने की सेवा 'पालीवाल' व्यापक शब्द ने बहुत अच्छी की। केवल इस शब्द के श्रवण तथा उच्चारण मात्र से जातीय प्रेम झलक जाता है।

राणा राहपजी के 13वीं पीढ़ी में राणा हमीर हुए। ये कुम्भलगढ़ (केलवाड़ा) विशेष रहते थे। इन्होंने हमीरपाल नामक तालाब बनवाया उसकी प्रतिष्ठा वि.सं. 1375 में रखी। पुरोहित देवाजी को वास्तु–कर्म के लिए राणाजी ने कहा कि राणाजी अलनी पटराणी को साथ में न लाकर उपपत्नि को ले आए थे। पुरोहितजी ने जो स्पष्ट वक्ता थे, कहा कि आपको अपनी पटराणीजी का मान ऐसे अवसर पर अवश्य रखना चाहिए। पर राणाजी अपनी उपपत्नि पर विशेष प्रेम होने से यह मानने को तैयार नहीं हुए इस पर देवाजी राणा की पुरोहिताई छोड़कर शिशोदे अपने गांव चले गए।[13] राणाजी ने ज्यों ही हमीरपाल की प्रतिष्ठा देवरामजी के लघु भ्राता साजणजी के बड़े पुत्र राजड़जी से करवाई, पर फिर राणाजी को देवाजी की स्पष्ट वादिता समझ में आ गई और अपनी भूल पर पश्चाताप हुआ।

कुछ समय पश्चात् पुनः देवरामजी को मनाने के लिए स्वयं राणाजी केलवाड़े से सीसोदे, जहां देवाजी का निवास स्थान था, पधारे। उस समय पुरोहितजी अपनी कुलदेवी के मन्दिर में पूजन कर रहे थे इन्हें आत्म गौरव था, अतः इन्होंने मन में सोचा कि यदि मुझे राणा कुछ कटु वचन कहेंगे तो मुझ सहन न होगा, सो इन्होंने हीरकणी (हीरे का कण) खाकर आत्महत्या करली क्योंकि इन्होंने पुरोहिताई तो पहले ही छोड़ दी थी, सो इस बात की तो इन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। राणा इस प्रकार इनसे मिल भी न सके और पश्चाताप करते हुए केलवाड़ा चले गए। जब राणा हमीर मेवाड़ के महाराणा हो गए तब भी पालीवाल ही राजपुरोहित थे और पालीवालों का इसी कारण दिन–दिन उन्नति होने लगी।

राजड़जी यों तो पुरोहित थे ही पर वीर होने के कारण सेनानायक का पद भी इन्हीं को सौंपा। ये वीर योद्धा होने के कारण इन्होंने कई बार युद्ध किया। महाराणा हमीर ने प्रसन्न होकर एवं इनकी वीरता की प्रशंसा करते हुए 4 गांव भाणुजा, गुड़ली, दीयाण और डूब खेड़ा का पट्टा वि.सं. 1392 में कर दिया।[14]

राणा हमीर ने इन्हें भाणुजे के थाणापति बनाए। क्योंकि उस समय डाकुओं का बड़ा जोर था तथा सारे परगणे का भी प्रबन्ध इन्हीं को सौंपा। उस परगणे में मुख्य गांव कणूजा, कठार, धणा, नांदेसमा, गोगून्दा और मचींद थे अर्थात् इस परगणे के चारों और ये गांव आ गए हैं। सभी गांव वालों को कह दिया था कि आप लोग प्रोत राजड़जी की आज्ञा पालन करें क्योंकि ये सिसोदिया के सेनानायक हैं। ये साधारण व्यक्ति नहीं एवं 'अनड़परोत' हैं अर्थात् ये आत्म गौरव की रक्षा करने वाले पुरोहित हैं। ये नतमस्तक नहीं होते। राजड़जी जब सेनापति थे, उस समय सब भील मिलकर दंगा (झगड़ा) किया। उस दंगे को इन्होंने अपनी वीरता से शान्त किया। ये बड़े बुद्धि सागर

थे, इसीलिए इन्होंने विजय प्राप्त की। इसके पश्चात् राजड़जी पुरोहिताई छोड़कर चुंडाजी के साथ सांडवा मांड़वगढ़ गए। ये कौनसे सम्वत् में गए इसका पता नहीं, फिर कुष्ठ निवारण किया। फिर मोकलजी के साथ युद्ध हुआ, इस युद्ध की भंयकरता बड़ी प्रसिद्ध है। मोकलजी इस युद्ध में काम आए। राजड़जी ने इस तरह हिन्दू धर्म की रक्षा की। कुछ समय के पश्चात् चुंडाजी पुरोहित राजड़जी को मांडवगढ़ का अधिकार देकर चित्तौड़ पधारे।

देवीदासजी के पश्चात् नारायणदासजी राजपुरोहित हुए। इनको महाराणा विक्रमादित्य जी ने सं. 1588 में कुंचोली का पट्टा दत्त में दिया। वि. सं. 1628 में महाराणा प्रताप ने बड़गाँव का पट्टा भी इन्हीं को दत्त में दिया। उस समय उदयपुर बस गया था।

समस्त पालीवाल जाति को भी इस बात का गौरव है कि हमने मेवाड़ राज्य की रक्षा की ओर भारत वर्ष को भी इसी ब्राह्मण जाति के स्वतन्त्रता का उपदेश दिया। एक इतिहास प्रेमी लेखक ने नारायणदास जी को 'पालीवाल जाति का प्रकाशमान नक्षत्र', 'सोलहवीं शताब्दी का दधीचि' तथा 'त्याग वीर' की उपाधि से अंलकृत किया।

पाद टिप्पणियाँ –

1) सेवग जेठमल ने इसके पूर्वजों का वर्णन इस प्रकार दिया है – ''भामाशाह का पड़दादा चांदा कावड़िया जो राय की गोत्र ओसवाल दिल्ली का रहने वाला था, उसके बाप–दादे बादशाह की खफगी के कारण लड़ाई में मारे गए थे, उस वक्त वह बच्चा ही था। इसीलिए उसको कावड़ में डालकर मेवाड़ लाए। इससे उसका और उसकी सन्तान का नाम 'कावड़िया' हो गया। चाँद का बेटा तीड़ा और तीड़ा का भारमल्ल हुआ। ये लोग बादशाहों के यहां कोठारी और कामदार थे और उदयपुर में दीवान हो गये थे। दीवान होने के पहिले भी इन लोगों के पास बहुत धन था। इसी से ये शाह कहलाते थे।'' (वीरशासन, 16 दिसम्बर, 1952, पृ. 7)

   डॉ. जगदीशचन्द्र जैन ने अपने शोध प्रबन्ध ''जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज'' में जैन आगम–ग्रन्थों के हवाले से बताया है कि ''सोने के सिक्कों में दीनार अथवा केवड़िक का उल्लेख है जिसका प्रचार पूर्व देश में था।'' संभवतः 'केवड़िक' सिक्के के प्रचुर संग्रह के कारण भारमल्ल के पूर्वज 'केवड़िया' या 'कावेड़िया' या 'कावड़िया' कहलाए।

2) अजमेर के शासक पृथ्वीराज चौहान के दिल्ली पर शासन करने से पहले वहां तोमरवंश का राज्य था।

3) डॉ. रघुवीरसिंह का मत है कि – ''मेवाड़ राज्य के कोष तथा आर्थिक मामलों का कार्यभार प्रताप के राज्यारोहण के समय से ही भामाशाह के हाथ में रहा। अन्य सारे शासकीय मामले प्रधान रामा महासहाणी के अधीन थे। प्रताप द्वारा दिए गए ताम्रपत्रों आदि में सन् 1577 के

उत्तरार्द्ध से भामाशाह का नाम लिखा मिलता है। सन् 1578 में रामा महासहाणी के स्थान पर भामाशाह को मेवाड़ राज्य का प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया। प्रताप के देहावसान के बाद भी भामाशाह इसी पद पर बना रहा।'' (महाराणा प्रताप, पृ. 60)

4) मेवाड़–मुगल संधि का सूत्रधार रंगोजी बोलिया उद्धृत, रजत जयन्ती स्मारिका, बोलिया विकास संस्थान, उदयपुर तृतीय संस्करण – 2017, पृष्ठ 116–128।

5) बेवरिज तुज्के जहांगिरी अंग्रेजी अनुवाद जिल्द 1, उद्धृत, गौरी शंकर हीराचन्द ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, द्वितीय भाग, प्रकाशन वैदिक यन्त्रालय, अजमेर, पृष्ठ 273–287

6) वीर विनोद खण्ड प्रथम श्यामलदास, मंयक प्रकाशन, जयपुर (राजस्थान), सन् 1986, पृष्ठ 461–478

7) ओझा गौरी शंकर हीराचन्द उदयपुर राज्य का इतिहास द्वितीय भाग, प्रकाशन वैदिक यन्त्रालय, अजमेर, पृष्ठ 805 से 812

8) श्री येवन्ती कुमार जी बोल्या, (सेवानिवृत्त, वरिष्ठ इंजीनियर विद्युत विभाग एवं अध्यक्ष, बोलिया विकास संस्थान, उदयपुर) के पास निजी संग्रह से उपलब्ध बोल्या वंश के प्रामाणिक अभिलेखों पर आधारित। उक्त लेख का लेखक मेवाड़ राज्य से सम्बन्धित बोल्या घराने के योगदान से सम्बन्धित अप्रकाशित मूल्यवान अभिलेखों को देखने और उनसे सम्बन्धित सामग्री के फोटो कॉपी उपलब्ध कराने हेतु उनके योगदान के लिए आभारी है।

9) प्राचीन इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड, कविराजा श्यामलदास एवं गौरीशंकर हीराचन्द ओझा द्वारा मेवाड़ एवं उदयपुर के बारे में लिखित इतिहास क्रमशः एनाल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ मेवाड़, वीर विनोद एवं उदयपुर राज्य का इतिहास।

10) गाँव के बुजुर्ग सर्वश्री पृथ्वीराज जी डूँगावत, नारायण लाल जी सोमावत, रामलाल जी सारंगोत, वेणीराम जी गोवल, डॉ. एवं प्रोफेसर गोविन्द लाल जी मेनारिया, जमनाशंकर जी कटारा, भैरूलाल जी व्यास, पन्नालाल जी व्यास, हीरादास जी वैष्णव, श्रीमती गमेरी बाई सोमावत, श्रीमती सोहन बाई गोवल से चर्चा के दौरान प्राप्त जानकारी।

11) डॉ. मिनाक्षी मेनारिया अप्रकाशित शोध प्रबन्ध – चित्तौड़ एक अध्ययन (पुरातात्विक स्त्रोतों के सन्दर्भ में मो.ला.सु.वि. में प्रस्तुत पी. एचडी. शोध के अन्त में दी गई तालिका दृष्टव्य है), सन् 2002

12) पालीवाल ब्राह्मण इतिहास अथवा सरशल वंश प्रबोधनी, लेखक रा. वै. रेवाशंकर पुरोहित, आयुर्वेदाचार्य – अवधूत एवं प्रकाशक चिकित्सक, शिरोमणी, प्रथम बार वि.सं. 2043, ऋषि आश्रम – नागरवाड़ी, उदयपुर

13) डॉ. नीलम मेनारिया अप्रकाशित शोध प्रबन्ध – एकलिंगजी का ऐतिहासिक एवं सांस्कृति अध्ययन मो.ला.सु.वि. में प्रस्तुत पी.एचडी. शोध प्रबन्ध, सन् 2002

14) पुरातत्वीय अवशेष – चीरवा गाँव का शिलालेख, पुराने कुएं, बावड़ियाँ आदि।

परिशिष्ट – मेवाड़ महाराणा द्वारा प्रदत्त महत्वपूर्ण ताम्रपत्र

1) महाराजाधिराज महाराणा जी श्री भीमसिंह जी आदेशातु पाणे री गजसिंग दुर्गादास, जात नागदा, कस्म सिंगण वाव तथा सालोल्यामा है लोकल जमें धरती बीघा साड़ा तेरा 13।। कुड़ा निवाण सुदी तथा घर घरूवा भीखारा पोंल सूधी हाट 1 चोहटा रो वाड़ा जान रायजी रा मन्दिर पाछलो जहा सूधी उदक आघाट करे श्री रामार्पण करे दीदी लागत विलगत सर्व सूधी विगत विघा 11) सिंगण वाव सालोल्यामा है 211) लोक लज में – स्वदत्तां पर दत्तांवा यो हरन्ती वन्सुधरा। षष्ठी वर्ष सहस्त्राणि विष्टायांजायते क्रमी।। प्रत दुवे साह मोजीराम बोल्या लिखतम् पंचोली गिरधरलाल गुलाबोत सम्वत् – 1834 वर्षे फागण विद 12 भीमे।–

(यह उपर्युक्त ताम्र–पत्र मदन मोहन जी धनेश्वर जी जोशी के पास है।)

2) महासत्या की मादड़ी का 750 बीघा का ताम्र पत्र की प्रतिलिपि –

।। श्री रामो जयति।।

श्री गणेशायप्रसादातु श्री एकलिंगजीप्रसादातु

सही भालो

महाराजाधिराज महाराणा श्री भीमसिंह जी आदेशातु जोशी धना धूला जात छोटा पालीवाल बागोरा कुस ग्राम महासता की मादड़ी – परगणा मोई रे जणी मदे धरतो हलु 15 पनरा की धरती बीघा 750 धरती हल 1 एकरी बीघा 50 बामण गूंगला दाहेमा की बेचाव सुदा तो है उदक आघाट करे देवाणा पीवल उनाली वा सीयाली मालमगरो महाराणाजी श्रीअमरसिंहजी वेकुण्ठ पधारता महा. श्रीसंग्रामसिंहजी को सही उदक को तांबा पतर खडम भोग लागत व लगतरू ख वरख घर गो रमा सूदो उदक आगाट रो तांबा–पत्र थो

सो दंगा राडा में जातो रयो सो था अरजाउवेवा पर थौणो निरधार करेने यो तांबा पतर डोली को जमीन को करे देवाणो थाने सो थूं थारो वंशरा खा या पाया जाशी गाम में घर गामोट 12 सूदी कणी बातरी चोलण वेगा नहीं आगल सूं चलू खाता पीता हो जो खाया पाया जा जो जूनो मेटोमती नवी करोमती – स्वदत्तां पर दत्तां वा ये हरन्ती वसुंधरा। षष्ठी वर्ष सहस्त्राणि विष्टयां जायते क्रमी ।।1।। प्रतदुवे खुवास रूगनाथ लिखतां पंचोली वल्लभदास गीरधर लालोत सम्वत् 1865 का वैशाख सुद 9 उदक।

3) मावली के पास मोरडी (मरतडी) एक गांव है उसमें 44 खेड़े के पालीवाल नारायणजी, राधाकिशनजी, भूरीलालजी तथा भूरीलाल जी के पुत्र रविन्द्रकुमारजी निवास कर रहे हैं इनके पास 51 बीघा भूमि है उसके ताम्र पत्र की प्रतिलिपि :–

।। श्रीरामजी।।

सही भाला

सिध श्री महाराणाजी श्री रायमलजी दत्त पर दत्त नामण नंगाजी छोटा पालीवाल मोरडी का जमी बीगा 51) अखरे अकावन रामाअरपण कर दीदी। नीम सीम सूदी आसु कोई खेचल करे जीने श्रीएकलिंगनाथ पूगे। सम्वत् 1544 सावण सुदी 15 द. पंचोली मोणालाल – द. तरवाडी हरीराम रा.....

(इस ताम्र–पत्र को राज ने 1950 आसाड़ में सही माना)

4) महाराणा से पावण (दान–पुण्य का कुछ अंश) बड़े भाणुजेवाली को मिलने का प्रमाण –

स्व. खीमराजजी भण्या (बड़े भाणुजा के पुरोहित) के पास एक हस्तलिखित पत्र मिला उसमें लिखा था कि जब राजलजी राजपुरोहित थे तब

वे दरबार के साथ गया श्राद्ध करने गए तब वे वहीं शान्त हो गए। राजलजी ने बहुत समय तक पुरोहिताई की। पावण वि.सं. 1943–46 तक मिलती रही। पुरोहित देवा जीभावल्या आदि भाईयो ने ऊँकार नाथजी बड़े पुरोहितजी से कुछ रूपये लेकर पावती लिख दी कि अब हमारे भाई आपसे दान पुण्य की कोई पांती नहीं लेंगे।

महाराणा रायमल द्वारा प्रदत्त अप्रकाशित कतिपय ताम्रपत्र –

1) श्री महाराणा रायमल (सन् 1473 – 1508 ई.) द्वारा प्रदत्त परसराम पोखरणा (पुरोहित) सुरजपुरा ग्राम (प्रतापगढ़) का अप्रकाशित ताम्रपत्र–

उक्त ताम्रपत्र श्री पुष्कर पोखरणा, निवासी सवीनाखेड़ा के सौजन्य से प्राप्त हुआ

ताम्रपत्र का मूल पाठ –

।। श्रीरामजी ।।

सिद्ध श्री महाराणा जी श्री श्री रायमलजी का दत्त परदत्त बामण परसराम जी पोखरा प्रोत (पोखरणा पुरोहित) ग्राम प्रोता (गांव पुरोहितों) को श्री रामार्पण कर धरती बीघा ४०० चार सौ नीम सीम सुरजपुरे (यह प्रदत गांव सुरजपुरा प्रतापगढ़ रियासत में था) बामणे मातृ अरपण कर दी दो जो थारे बायोत्तर कर दी दो। अणी री जो कोई न चोलण करसी, जा न श्री एकलिंग नात प्रभु सी पुगसी (श्री एकलिंग नथा पुगसी) संमत् 1444 मती माह सोम सातम दसगत पंचोली किशन लाल का।

ताम्रपत्र लेख सारांश –

ताम्रपत्र के ऊपर सर्वप्रथम ''श्री रामजी'' शब्द उत्कीर्ण है। मेवाड़ के महाराणा सूर्यवंशी होने से वे भगवान राम, श्री गणेश व श्री एकलिंग जी की वन्दना के साथ भूदान, ब्रह्मदान वगैरः करते थे। अधिकत्तर मेवाड़ के शासकों द्वारा प्रदत्त ताम्रानुशासन, शिलालेखों में वे अपने ईष्टदेव भगवान एकलिंग जी के आदेश सूचक स्तुती में ''श्रीरामोजयति'' ''श्री गणेशायप्रसादातु'' व अंत में दायीं तरफ ''श्री एकलिंग प्रसादातु'' उत्कीर्ण कराते। इस ताम्रपत्र में केवल श्री राम की स्तुती कर महाराणा श्री रायमल ने ब्राह्मण पोखरणा पुरोहित को सुरजपुरा गांव ठि. कानोड़ देवालिया में था में पुरोहित कार्य हेतु 400 बीघा भूमि अपनी मातृश्री की स्मृति में दी।

इस ताम्रपत्र में स्पष्ट लिखा है कि मेवाड़ महाराणा रायमल ने पुरोहित परसराम पोखरणा को पुरोहित ब्राह्मण को ग्राम सुरजपुरा में 400 बीघा भूदान मातेश्वरी की स्मृति में ब्रह्मदान में श्रीरामार्पण कर दी। आगे यह भी लिखा गया है कि उक्त प्रदत्त भूमि की नीम–सीम इत्यादि सहित

पुरोहित परसराम ब्राह्मण को बपौती में भूदान कर दिया। इसके साथ यह भी उल्लेखित है कि उक्त ब्रह्मदेय भूमि को जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी इस परिवार को दान में दी है, इसे कोई भी पुनः अधिग्रहित नहीं करे यदि कोई भी ब्रह्मदेय ऐसी या इस प्रकार की दत्त–परदत्त भूमि का अतिक्रमण या अधिग्रहण करता है या करेगा तो उसे एकलिंगनाथ पुगेगा याने वह पाप का भागीदार होगा।

उक्त ताम्रपत्र में कुल 13 पंक्तियां है। अन्तिम पंक्ति में ताम्रपत्र जारी करने का संमत् 1444 याने ईस्वी सन् 1387 सन् उत्कीर्ण है। उस वर्ष माह महीने का सोमवार 7 (सातम्) का दिवस था। इस को जारी करने वाला प्रशासनिक अधिकारी पंचोली किशनलाल के हस्ताक्षर का उल्लेख हुआ है।

2) श्री महाराणा रायमल (सन् 1473 – 1508 ई.) द्वारा प्रदत्त ग्राम जावद (राजनगर, कांकरोली) (पुरोहित छोटा पालीवाल परिवार को प्रदत्त) का अप्रकाशित ताम्रपत्र –

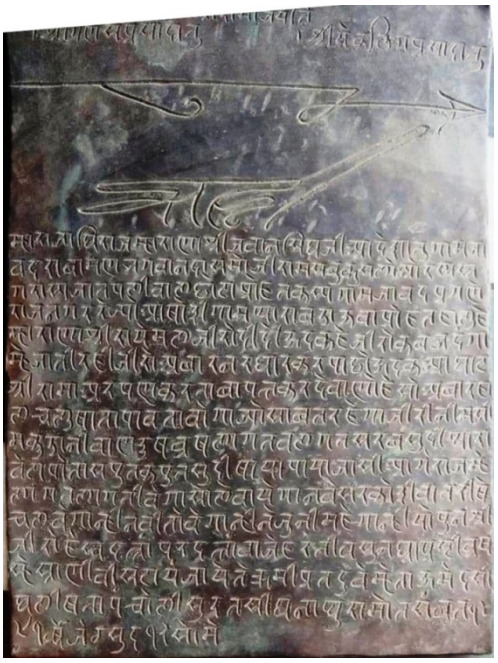

(उक्त ताम्रपत्र जावद ग्राम (कांकरोली) के प्रतिष्ठित परिवार स्व. श्री भगवती लाल जी पालीवाल पिता स्व. श्री परसराम जी पालीवाल (पुरोहित) के पुत्र श्री चन्द्रशेखर पालीवाल एवं पुत्रवधु श्रीमती हंसा पालीवाल के सौजन्य से प्राप्त हुआ है)

ताम्रपत्र का मूल पाठ

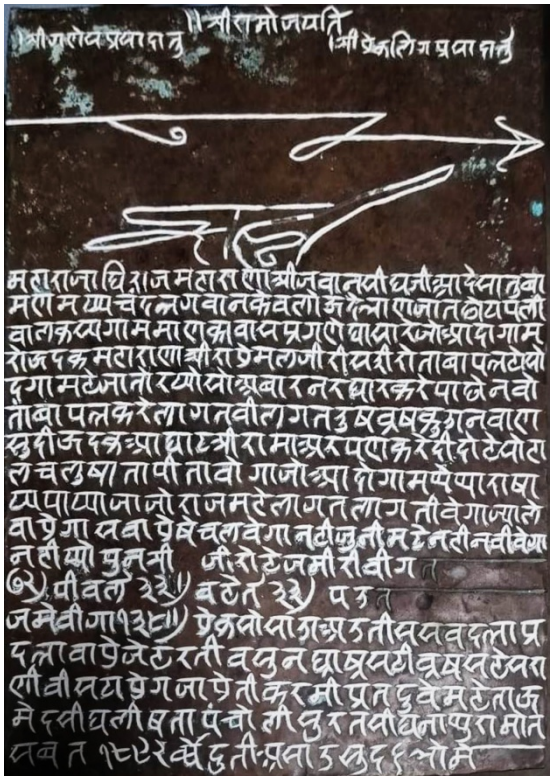

श्री रामोजयति

श्री गणेशाय प्रसादातु **श्री एकलिंग प्रसादातु**

सही

महाराजा धिराज, महाराणा श्री जवान सिंघ जी आदेशातु बा मण मप्प चंद भगवान कंवलो उदेभाणा जात छोटा पली वाल कस्य गाम माणकवास प्रगणे घासा रे जो आदो गाम रो उदक महाराणा श्री रायेमल

जी रो जारी रो तांबा पत्र हो सो दंगा महे जातो रय्यो सो अबार नरधारण करे पाछो नवो तांबा पत्र करे लागत विलगत, रूष व्रष कुआन नवाणा सुदी उदक आधार श्री रामा अरपण करे दी दो है यो चालु षाखाता पीता वो गाजो आदो गाम थें थारा बाप्प दादा रे समय जो राज में लागत विगत वेगा ज्या तो वेगा सवा ऐ बेचला वेगा न ही जूनी मटे नहीं नवी वेगा नहीं यो पुन श्री जी रो है जमीरो विगत ..... ७२) वीवता ३३।) बहेत ३३) पड़त ..... जमे वीगा, १३८।।) एक सौ अड़तीस सवा दला प्र दत्रा वा ऐ जैह रती वसुन्धा प्रसष्टी व्रष सहेसराणी वीसटा ऐ गजा प्रेती कर मी प्रत दुवे महेता उ मेद सीघ लीखता पंचोली सुरत सीघ नाथु रायोत संवत् १८९२ वर्षे दुती आ आसाढ़ सुद ६ भोमे

ताम्र पत्र का अर्थानुवाद –

महाराजाधिराज महाराणा श्री जवानसिंह के आदेशानुसार पूर्व में महाराणा रायमल के समय प्रदत्त ताम्रपत्र ग्राम माणकावास परगना घासा के छोटे पालीवाल ब्राह्मण मप्प चंद भगवान केवलो उदेभाण के नाम जारी कर माणकावास आधा गांव धर्मार्थ भूमि प्रदान करने का पुनः निर्धारण कर नवीनीकृत कर ताम्रपत्र प्रदान किया। इसमें उल्लेखित कुल भूमि 138½ बीघा – 72 बीघा पीवल, 33¼ मध्यम, 33 बीघा पड़त कुल एक सौ साड़े अड़तीस बीघा भूमि प्रदान की। इसमें उक्त भूमि के नींव सीम समस्त वृक्ष, रूंख व कुआं सहित कर लाग बाग जो पहले से लागू की उसे चालू रखी। नया कर लाग बाग नहीं लगने का वचन देते हुए धर्म (उदक आधार) पुण्यार्थ दी। इसमें अन्तिम पंक्तियों में दान–पुण्य की परम्परानुसार शास्त्रोक्त शपथ का उल्लेख हुआ है कि दानदाता द्वारा प्रदत्त उक्त भूमि को कोई भी पुनः अधिगृहित नहीं करेगा। यदि करेगा तो उसे सहस्त्र वर्षों तक नरकीय जीवन यापन करने का पाप लगेगा।

अन्तिम पंक्तियों में ताम्रपत्र नवीनीकरण का समय वि.सं. 1892 के द्वितीय आषाढ़ माह की सुदी छठ मंगलवार दिया है। महाराणा के आदेश से इसकी प्रति प्रदान करने वाले अधिकारी मेहता उम्मेदसिंह लिखने वाला पंचोली सुरतान सिंह नाथु रामोत का नाम उल्लेखित है। (ई. सन् 1835 का है)

सौजन्य :– तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान, चीरवा की संस्कृत विभागाध्यक्ष प्रो. नीतू मेनारिया को महाविद्यालय के शैक्षणिक अध्ययनार्थ, ग्राम माणकावास के सरपंच श्री युधिष्ठिर पुरोहित के पास उपलब्ध ताम्रपत्र को इन्हें पढ़ने हेतु बताया व उसकी फोटो कॉपी दी। डॉ. नीतू मेनारिया ने इसकी प्रति तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान चीरवा के पुस्तकालय में अध्ययनार्थ सुरक्षित रखी।

ताम्रपत्रों की खोज खबर : एक सर्वेक्षण –

मेवाड़ के ताम्रपत्रों में राज्य के चिन्ह सूर्य एवं एक तरफ चन्द्रमा, शिलालेख या ताम्रपत्र पर सबसे ऊपर ''श्री रामोजयति'' बाईं तरफ श्री गणेशाप्रसादातु तथा दायीं तरफ ''श्री एकलिंगजी प्रसादातु'' सूचक हिन्दू व सनातन धर्म के देवों की स्तुति के साथ ताम्रपत्र या अभिलेखों में सलूम्बर का भाला व भींडर के अंकुश सूचक चिन्ह के नीचे उसकी प्रामाणिकता के लिए अधिकारिक सत्यपान सूचक सही शब्द लिया जाता था। कई अभिलेखों में जो सूरह लेख है वहां भूदान वहां गर्दभ या गाय वत्स के चित्र है। सती स्मारकों के ऊपर सूर्य चन्द्र एवं सबसे नीचे सतीमाता या शहीद के चित्र घोड़े पर सवार योद्धा (स्व.) के चित्र उत्कीर्ण किये गये हैं।

ताम्रपत्र का मूल पाठ

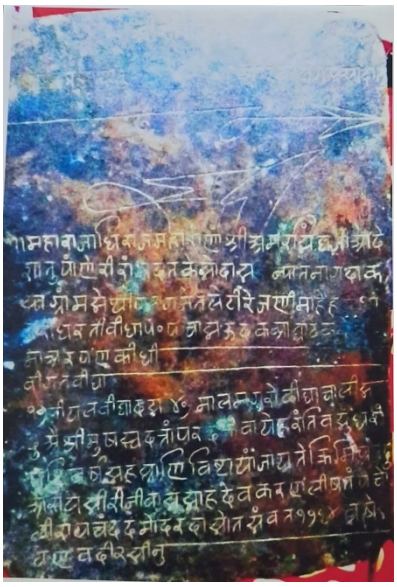

1

श्री रामोजयति

श्री गणेशाय प्रसादातु **श्री एकलिंग प्रसादातु**

सही

महाराजा धिराज, महाराणा श्री अमरसिंह जी आदेशातु पाणेरी रामदत्त केसोदास न्यात नागदा कस्य ग्राम सेंथी प्रगने तलेटी री जणी माहे धरती वीघा 40 (50 बीघा) पचास उदक आधार अरपण कीधी .... वीगत वीघा .... 10) सींयाल वीघा दस, 40) माल मगरो वीघा चालीस दुऐ श्रीमुख स्वदत्रां परदते हे वाये हरंति वसुंधरा षष्टि वर्ष सहस्त्राणि विष्टायां जायते क्रिमि ..... श्री राय श्री री जीवाय शाह देव करणां

लीखतं श्री रायचंद दमोदर दासोत संवत् 1764 वर्षे श्रावण वदी 2 सीनु (श्रावण वदी 2, शनि) .....

ताम्र पत्र का अर्थानुवाद –

यह ताम्र पत्र महाराणा अमरसिंह के आदेश से प्रगणे तलेहटी (चित्तौड़) ग्राम सेंथी में पाणेरी रामदत्त केसोदत्त जो नागदा (ब्राह्मण) है, को धरती कुल 50 बीघा उदक आघात मातृश्री (भूमि दान में देय) को अरपण कर ताम्रपत्र प्रदान किया गया। जिसका ब्यौरा उक्त ताम्रपत्र में दिया गया है। 10 बीघा पीवलद्रस व 40 बीघा माल मगरे चालीस है। उक्त ताम्रपत्र को जारी करने का वर्ष वि.सं. 1764 श्रावण बदी 2 शनिवार अंकित है। अर्थात् सन् 1707 ईस्वी का है। महाराणा अमरसिंह द्वितीय के समय का है।

सौजन्य :– उक्त ताम्रपत्र की छायाप्रति इतिहासकार डॉ. जी. एल. मेनारिया, निदेशक तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान, चीरवा के सौजन्य से प्राप्त हुआ। जो वर्तमान में तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान, चीरवा के पुस्तकालय में देखा जा सकता है। यह ताम्रपत्र मूल ताम्रपत्र है जो अभी तक अप्रकाशित है।

अध्याय षष्ठम

18वीं एवं 19वीं सदी का संक्रमणकालीन मेवाड़ (मेवाड़–मराठा संघर्ष)

अध्याय षष्टम – 18वीं एवं 19वीं सदी का संक्रमणकालीन मेवाड़ (मेवाड़–मराठा संघर्ष)

6.0 ठाकुर अमरचन्द बड़वा का योगदान (सन् 1751 ई. से 1775 ई.)

6.1 महाराणा हम्मीरसिंह द्वितीय एवं अमरचन्द बड़वा

6.2 मेवाड़ पर मराठा आक्रमण और सत्ता की राजनीति

6.3 मेवाड़ पर मराठा–पिण्डारी आक्रमण एवं सामन्तों में दल बंदी तथा ब्रिटिश प्रभु सत्ता की स्थापना

6.4 प्रधान मेहता अगरचंद की प्रशासनिक भूमिका

6.5 मेवाड़ प्रशासन में प्रधान पद के लिए प्रतिस्पर्द्धा (मेहता शेर सिंह एवं मेहता राम सिंह)

6.6 मेहता गोकलचंद मेवाड़ के प्रधान पद पर नियुक्ति एवं उनकी प्रशासनिक सेवाऐं

6.7 मेवाड़–महाराणा के आदेश से नाथद्वारा के गोस्वामी गिरधारी लाल के विरूद्ध प्रशासनिक कार्यवाही

6.8 राय मेहता पन्नालाल के प्रशासकीय कार्य

6.9 महाराणा शंभू सिंह ने 'लंगर' एवं 'तलवार बंधाई' का विशेषाधिकार प्रदान किया

6.10 प्रशासनिक पुनर्गठन एवं वित्तीय सुधार

6.11 नमक–व्यापार समझौता

6.12 चित्तौड़गढ़ में विशेष दरबार का आयोजन (सन् 1881 ई.)

6.13 मेहता तखत सिंह द्वारा बागोर के सकत सिंह के 'नकली' पुत्र के मामले की छानबीन

6.14 ड्यूक ऑफ कनौट ने फतेह सागर झील एवं जनहित

परियोजनाओं की नींव रखीं

6.15 मेवाड़ प्रशासन में सहीवाला अर्जुन सिंह की भूमिका

6.16 1857 का जननायक ताराचन्द पटेल एवं तात्याटोपे की मेवाड़ ब्रिटिश सत्ता के विरोधी गतिविधियाँ

पाद टिप्पणियाँ

परिशिष्ट 1 – मेवाड़ के प्रधान बोलिया घराने का अभिलेख

परिशिष्ट 2 – महाराणा अरिसिंह का शाह मोतीराम बोलिया के नाम ओदश पत्र (मराठा आक्रमणों से मेवाड़ की रक्षार्थ)

परिशिष्ट 3 (अ) – महाराणा मेवाड़ चेरिटेबल ट्रस्ट, सिटी पैलेस, उदयपुर से प्राप्त वंशावली

परिशिष्ट 3 (ब) – मेवाड़ का राजवंश एवं राजघरानों की तालिका

परिशिष्ट 3 (स) – मेवाड़ का राजवंश एवं राजघरानों की तालिका

अध्याय : षष्ठम

18वीं एवं 19वीं सदी का संक्रमणकालीन मेवाड़

(मेवाड़–मराठा संघर्ष)

18वीं सदी[1] में महाराणा अरिसिंह, महाराणा हम्मीर सिंह, महाराणा भीमसिंह के शासनकाल में शाह मोतीराम बोल्या, मेहता अगरचन्द, ठाकुर अमरचन्द बड़वा, मेहता दीपचन्द तथा महाराणा भीमसिंह, जवानसिंह, सरदारसिंह तथा स्वरूपसिंह के राज्य काल में सोमचन्द गाँधी तथा मेहता रामसिंह, मेहता शेरसिंह, महाराणा शम्भूसिंह, सज्जनसिंह के शासन काल में तथा महाराणा फतहसिंह के समय मेहता राय पन्नालाल मेवाड़ प्रशासन में प्रधान पद पर रहे हैं। इसी प्रकार राणा जगतसिंह द्वितीय व राणा राजसिंह द्वितीय के समय कोठारी चतुर्भुज, राणा स्वरूपसिंह व शम्भूसिंह के काल में कोठारी केसरीसिंह, राणा सज्जनसिंह के समय में कोठारी बलवन्त सिंह राज्य के प्रधान थे।[2]

राणा संग्रामसिंह द्वितीय[3] के समय कोठारी भीमजी फौजबक्शी, मेहता सांवलदास राणा अरिसिंह के समय शाह मोतीराम बोल्या, मेहता अगरचन्द, राणा भीमसिंह के समय मेहता भालदास, मोजीराम बोल्या, सोमचन्द गांधी, मेहता देवीचन्द, राणा स्वरूपसिंह के समय मेहता लक्ष्मीलाल आदि सफल सेनानायक थे।[4]

राज्य के शिलालेख लिखवाने, संस्कृत में ग्रंथों का लेखन, पत्राचार, संधिदूत तथा राजनयिक कार्यों में पाणेरी, भट्ट मेवाड़ा, पालीवाल, दशोरा (पुरोहित), बड़वा इत्यादि ब्राह्मण जातियों के लोगों को नियुक्त किया जाता था।

6.0 ठाकुर अमरचन्द बड़वा का योगदान (सन् 1751 ई. से 1775 ई.) –

सनाढ्य जाति में राणा अमरसिंह के प्रधान अमरचन्द बड़वा का परिवार राणा जगतसिंह द्वितीय से राणा भीमसिंह तक राज्य में विभिन्न प्रशासनिक पदों पर सेवार्थ नियुक्त थे। अमरचन्द का पिता शम्भूनाथ, जगतसिंह द्वितीय के समय रसोडे का हाकिम था। राणा प्रताप द्वितीय ने अमरचन्द बड़वा को ठाकुर का पद व ताजिम प्रदान कर राज्य का परामर्शदाता बनाया। उसका लड़का लालशंकर राणा हम्मीर व भीमसिंह के समय उच्च पद पर था।[5]

राणा शम्भूसिंह के काल में पुरोहित श्यामनाथ, सुन्दरनाथ राज्य की रिजेन्सी कॉन्सील के सदस्य व मुसाहिब थे। राणा सज्जनसिंह के समय बड़वा परिवार के पदमनाथ इजलास खास के सदस्य रहे थे।[6]

महाराणा जगतसिंह द्वितीय के समय मेवाड़ दरबार में सामन्तों के गृह कलह के कारण कुंवर प्रतापसिंह को कैदखाने में डाल रखा था, परन्तु 5 जून 1751 में जगतसिंह के देहान्त होने से जिन दरबारियों ने कुंवर प्रतापसिंह को जेलखाने से निकाल कर उन्हें गद्दी पर बिठाया उनमें अमर चन्द बड़वा की अहम् भूमिका थी। अतः कृतज्ञता प्रकट कर महाराणा बनते ही उसने अमरचन्द बड़वा को ठाकुर की पदवी व ताजीम देकर अपना प्रमुख सलाहकार नियुक्त किया था।

मेवाड़ के राजदरबार में सामन्तों के परस्पर मतभेद व महाराणा के साथ उनके सम्बन्धों में कटुता के कारण राज्य में एक योग्य प्रधानमंत्री के रूप में अमरचन्द बडवा की प्रशासनिक दक्षता व उसकी स्वामीभक्ति जैसे

गुणों वाला व्यक्ति मिलने से शासन में सुधार का एक नया युग प्रारम्भ हुआ।

पेशवा बाजीराव प्रथम साम्राज्यवादी था।[7] उसने मालवा, गुजरात व राजपूताने पर भीषण आक्रमण कर यहाँ से भारी धन सम्पदा लूट कर अपनी शक्ति बढ़ाई। 18वीं सदी में आंग्ल–मराठा युद्धों के परिणामस्वरूप अंग्रेजों ने होल्कर सिंधिया को परास्त कर सन् 1806 में दिल्ली के युद्ध में मुगल सम्राट शाहआलम को परास्त कर उसके साथ सन्धि कर उसे पेंशन भोगी बनाकर सहायक सन्धि के तहत अपने अधीन किया। जहाँ तक मेवाड़ एवं शेष राजपूताना के राज्यों का सम्बन्ध है मेवाड़–मारवाड़, मेवाड़–आमेर, मेवाड़–मराठों में परस्पर संघर्ष हुआ। इस तरह अमरसिंह प्रथम के पश्चात् मुगलों के क्षत–विक्षत व छिन्न भिन्न प्रदेशों को मराठा साम्राज्य में विलिन करने के उद्देश्य से चौथ व सरदेशमुखी जैसे भारी करारोपण कर विस्तारवादी नीति अपनायी। इस कारण राजपूताना के अन्य राज्यों की तरह मेवाड़ में भी सामन्तों व शासकों के सम्बन्धों में परिवर्तन हुआ। 18वीं सदी मुगल दरबार में सामन्तों की दलबन्दी से कमजोर हुआ। मुगल दरबार की दलबन्दी विभिन्न जातिय गुटों के कारण थी, यथा इरानी–दुर्रानी, मुगल–पठान, तुर्की–मुस्लिम व शिया–सुन्नी, हिन्दू–मुस्लिम इत्यादि। मेवाड़ में भी सामन्तों में दलबन्दी व आन्तरिक गृह युद्ध होने लगा, इससे मराठों व पिण्डारियों तथा अंत में अंग्रेजों को लाभ मिला।

इस अवधि में मेवाड़ मराठों, पठानों व पिण्डरियों के आक्रमण लूटपाट व अराजकता के दौरा–दौर में एक संक्रमणकाल में था।[8] होल्कर व सिन्धियों ने मेवाड़ में जिस प्रकार लूटपाट व आतंक पैदा किया उसे देखते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री ठाकुर अमरचन्द बड़वा व उसके अन्य सहयोगी शाह मोतीराम बोलिया को प्रशासन में सर्वोच्च पद देकर मेवाड़

को बाह्य आक्रमणों से सुरक्षित रखने की कार्यवाही हुई। इसी अवधि में चुण्डावतों व शक्तावतों के बीच प्रतिस्पर्धा राज दरबार में गुटबन्दी व महाराणा का पक्षपातपूर्ण व्यवहार से राज्य में अराजकता उत्पन्न हुई।[9]

मेवाड़ महाराणा अरिसिंह द्वितीय के क्रोधी स्वभाव से उसके सरदार अप्रसन्न थे। इसका लाभ उठाकर मल्हार राव होल्कर ने मेवाड पर पेशवा के आदेश से खिराज वसूलने हेतु ससैन्य आक्रमण करते हुए वह उदयपुर में ऊँटाले तक आ पहुँचा।[10] राज्य के असंतुष्ट कुराबड़ रावत अर्जुनसिंह ने धायभाई रूपा को होल्कर के पास भेजकर मराठा से मुक्ति पाने का प्रयत्न करने लगा। महाराणा ने अपने ही विश्वासपात्र स्वामीभक्त ठाकुर अमरचन्द बड़वा को मुसाहब (मुख्य सलाहकार) के पद से हटाकर महता अगरचन्द बच्छावत को अपना सलाहकार बनाया व अमरचन्द बड़वा के पद पर बसन्तराय पंचोली को पदभार सौंप दिया। फलतः विश्वासपात्र सरदार उदयपुर छोड़कर चले गये। राज्य की आर्थिक स्थिति के साथ ही सैन्य शक्ति दुर्बल हो गयी। इसके उपरान्त भी महाराणा अरिसिंह अपने सामन्तों, मंत्रियों, प्रमुख सलाहकारों का सहयोग लेने में असफल रहा। अतः उसने सिन्ध व गुजरात से सेना भर्ती कर उन्हें राज्य में नियुक्ति दे दी।[11]

तत्कालीन अभिलेखों से स्पष्ट होता है कि मराठों के मेवाड़ पर आक्रमणों का मुकाबला करने हेतु सन्धि सेना भर्ती करने व बड़वा अमर चन्द जैसे राज्य हितैषी को पद से हटाने से राज्य में शक्तावतों व चूण्डावतों में परस्पर वैमनस्य बढ़ गया। असंतुष्ट सामन्तों ने महाराणा के विरूद्ध विद्रोह कर दिया। एक दल ने अरिसिंह को अपदस्थ कर स्वर्गीय राणा राजसिंह द्वितीय के पुत्र रतनसिंह को महाराणा बनाने का यत्न किया। इस वक्त मेवाड़ राज्य उदयपुर, भीलवाड़ा व चित्तौड़ तक ही सीमित हो गया। दूसरी तरफ राज्य के दूसरे दल का नेता देवगढ़ का रावत

जसवन्तसिंह था, जिसने मराठों की सहायता लेने हेतु अपने पुत्र राघवदेव को ग्वालियर में माधवराव सिन्धिया के पास भेजा। सिन्धिया ने सवा करोड रूपये लेना स्वीकार कर उसे सहायता देने का वचन दिया। उधर महाराणा ने कोटा के झाला जालिम सिंह व अगर चन्द मेहता को पेशवा के पास सहायतार्थ भेजा परन्तु रतनसिंह के पक्षधरों से सिन्धिया को भारी धन मिलने के लालच से उसने मेवाड़ की राजधानी उदयपुर पर आक्रमण किये। इसी अवधि में उदयपुर में पठान सेना ने वेतन नहीं मिलने से राजमहल का घेरा डाल दिया। रतनसिंह को महाराणा बनाने व अरिसिंह को अपदस्थ करने के विषय में मेवाड़ का एक प्रकार से विभाजन सा हो गया। फलतः रतनसिंह कुम्भलगढ़ में महाराणा बन बैठा, दूसरा स्वयं राणा उदयपुर में। उज्जैन के पास क्षिप्रा में राजपूत सेना एवं मराठों में भीषण युद्ध हुआ जिसमें 15000 नागा साधुओं की फौज जयपुर से सिन्धिया के पक्ष में लड़ी। मेवाड़ के इस संक्रमणकालीन समय में राज्य के संकट मोचक ठाकुर अमर चन्द बड़वा को पुनः प्रधानमंत्री के पद पर नियुक्त किया गया।[12]

महाराणा अरिसिंह के हाथों लिखे परवानों[13] से ज्ञात होता है कि ठाकुर अमरचन्द बड़वा को कुछ समय महत्वपूर्ण प्रधान पद संभले ही हटाया हो किन्तु अरिसिंह महाराणा ने अपने परवानों में स्पष्ट आदेश दिया था कि आप याने शाह मोतीराम बोलिया, ठाकुर अमरचन्द बड़वा व उसके आदमी जैसा कहे वैसे राज्य की देखरेख करो। मोतीराम बोलिया को लिखे पत्र में यह भी लिखा कि आप पर मुझे पूरा भरोसा है। इससे स्पष्ट होता है कि अरिसिंह जी ने ठाकुर अमरचन्द बड़वा की राज्य भक्ति व निष्ठा का सम्मान किया।

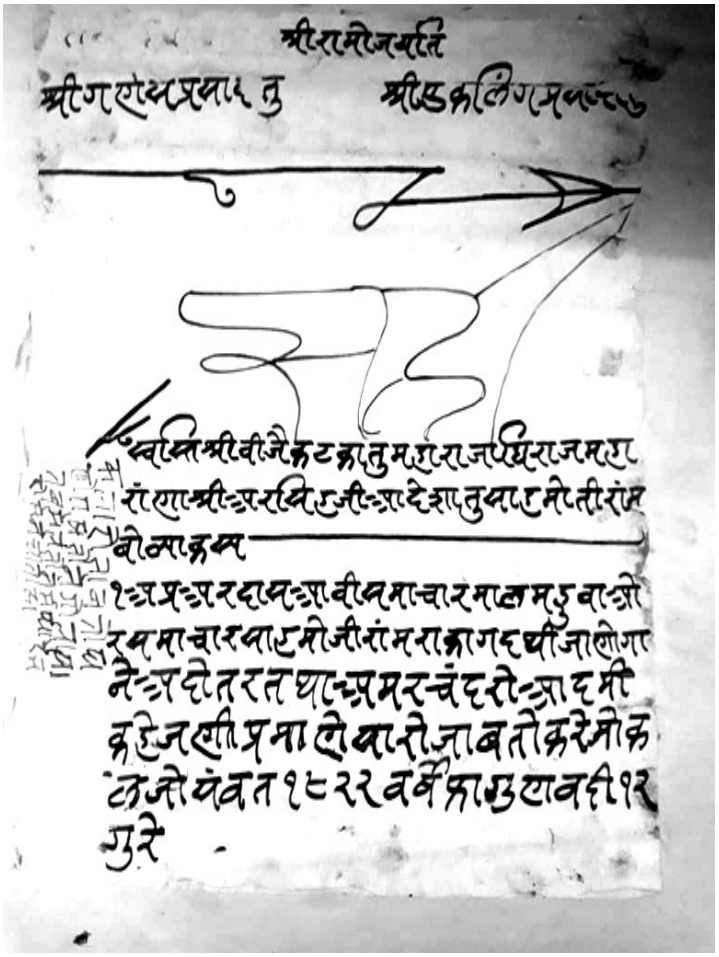

स्वस्ति श्री विजैकटकातु महाराजाधिराज महाराणा जी श्री अरिसिंह जी आदेशातु साह मोतीराम बोल्या कस्य अप्रपरदास आदीस समाचार मालम हुवा और समाचार साह मोजी रामरा कागद थी जाणोगा ने अदोतरथा, अमरचन्द रो आदमी कहे जणी प्रमाणे सारो जाबतो करे मोकल जो संवत् 1822 वर्षे फागुण वदी 12 ग्रहे

(इस पत्र में अरिसिंह जी महाराणा का शाह मोतीराम बोल्या को प्रेषित पत्र जो उसके भाई मोजीराम बोल्या को प्रेषित को निर्देशित कर आज्ञा दी गयी है कि प्रधानमंत्री ठाकुर अमरचन्द बड़वा के आदमियों के कहे अनुसार कुम्भलगढ़ किले के प्रबन्ध व गढ़ घाणेराव की रक्षा का प्रबन्ध करने का उल्लेख मिलता है।)

''कला रो जाब तो घणोरा षत जो न गो लातब मे लता नरम धारण सेन चातीसा''

उक्त पत्र में कुम्भलगढ़ किले और घाणेराव सैन्य क्षेत्र की सुरक्षा प्रबन्धन का आदेश दिया गया है।

इस पराजय का समाचार सुनकर महाराणा अपनी सैनिक शक्ति के कम हो जाने से अत्यधिक घबराया। उसके सहायक सरदारों में सलूम्बर का भीमसिंह (पहाड़सिंह का उत्तराधिकारी) कुराबड़ का रावत अर्जुनसिंह और बदनोर का ठाकुर अक्षयराज ही रह गये थे। सरदारों ने उत्साह दिलाने पर महाराणा ने सिंध तथा गुजरात से और मुसलमान सैनिकों को बुलाकर युद्ध की तैयारी शुरू की। शहरपनाह के चारों ओर छोटे–छोटे किले बनवाकर शहर के कोट दरवाजे व खाई को ठीक किया। दुश्मन भंजन तोप को एकलिंग गढ पर चढ़ाया। महाराणा की आर्थिक अवस्था अत्यधिक खराब थी, इसलिए वह समय पर मुसलमान सैनिकों को वेतन न दे सका, जिससे वे बहुत बिगड़े। महाराणा इस आन्तरिक उपद्रव से बहुत डरा और रावत भीमसिंह की सलाह से उसने अमरचन्द बड़वा को इस विकट स्थिति को संभालने के लिए प्रधान बनाया। अमरचन्द ने कहा मैं स्पष्ट वक्ता और मिजाज का तेज हूं। मैंने पहले भी जब–जब काम किया है तब तब पूरे अधिकार के साथ ही। आप किसी की नेकसलाह मानते नहीं।

संधि होने पर सिंधिया तो रुपये लेकर लौट गया, परन्तु रत्नसिंह मन्दसौर में न गया और न उसके साथी सरदारों ने उसका पक्ष छोड़ा। देवगढ़ के राघवदेव, भीण्डर के मुहकमसिंह वगैरह विद्रोही सरदारों ने फिर महापुरुषों (नागों) के बड़े भारी सैन्य को एकत्रित कर मेवाड़ पर चढ़ाई की

और महाराणा के सरदारों को धमकियां देना व गांवों को लूटना प्रारम्भ किया। महाराणा भी यह खबर सुनते ही रावत भीमसिंह और अर्जुनसिंह को उदयपुर की रक्षार्थ छोड़कर ससैन्य चल पड़ा और देलवाड़ा होता हुआ जीलोला गांव में पहुंचा। महापुरुषों की सेना मोकरूंदा गांव में ठहरी हुई थी। टोपला गांव में टोपल मगरी के पास मुकाबला हुआ। महाराणा की सेना में महाराणा के काका बाघसिंह और अर्जुनसिंह, महत्ता अगरचन्द बड़वा अमरचन्द, पंवार राव शुभकरण, रावत प्रतापसिंह (आमेट का), रावत फतहसिंह (कोठारिये का), शिवसिंह (रूपाहेली का), अक्षयसिंह का (छोटा वाला), सूरजमल (नारलाई का), शेरसिंह (खोड़वाला), छत्रसिंह (बसी का) शम्भूसिंह (सनवाड़ का), शक्तिसिंह (खैराबाद का), सूरतसिंह (महुवा का), धीरतसिंह (हमीरगढ़ का), चतुरसिंह (बनेड़िये का), नाथसिंह (थांबले का), मोहकम सिंह (गाडरमाले का), ईशरदास (दौलतगढ़ का), गजसिंह (लसाणी का), नाथसिंह (जीलोला का), उम्मेदसिंह (कोसीथल का), गजसिंह (लसाणी का), जवानसिंह (रूंद का), सूरजमल (सिंयाड़ का) तथा कई सिन्धी अफसर थे। युद्ध में दोनों पक्ष बड़ी वीरतापूर्वक लड़े। अन्त में विद्रोहियों की सेना भाग निकली। महाराणा विजय प्राप्त कर उदयपुर लौटा। इस युद्ध से रत्नसिंह की ताकत बिल्कुल कम हो गई।

6.1 महाराणा हम्मीरसिंह द्वितीय एवं अमरचन्द बड़वा –

महाराणा हम्मीरसिंह के बालक होने के कारण राजमाता ने शासन प्रबन्ध अपनी इच्छानुसार कराना चाहा और उसके लिए उसने शक्तावत सरदारों को अपनी ओर मिलाना प्रारम्भ किया। शनैः शनैः उनकी सहायता से उसका प्रभाव इतना बढ़ गया कि उसकी दासियों का भी हौंसला बहुत बढ़ गया, जिससे वे किसी को कुछ नहीं समझती थी। एक दिन उसकी कृपापात्री गुजर जाति की दासी रामप्यारी[14], जो बहुत वाचाल और घमंडी

थी, अमरचन्द से कुछ बुरी तरह पेश आई, जिस पर स्पष्टवक्ता अमरचन्द ने भी क्रोधावेश में उसे 'कहा' की रांड कह दिया। रामप्यारी ने इस बात को बढ़ाकर राजमाता से उसकी शिकायत की। वह इस पर अत्यधिक क्रुद्ध हुई और अमरचन्द को दूर करने के लिए सलूम्बर के रावत भीमसिंह से सहायता मांगी। अमरचन्द पहले से ही यह सोचकर अपने घर गया और अपना कुल जेवर व असवाब छकड़ों में भरवाकर उसने जनानी ड्योढ़ी पर भिजवा दिया तथा वहां जाकर कहा – 'मेरा कर्तव्य तो आप और आपके पुत्रों का हितचिन्तन करना है, चाहे उसमें कितनी ही बाधाएं क्यों न उपस्थित हो। आपको तो यह चाहिए था कि मुझसे विरोध करने की अपेक्षा मेरी सहायता करती', परन्तु वह तो राज्याधिकार को अपने हाथ में रखना चाहती थी और अपनी दासियों आदि के हाथ का खिलौना बन जाने के कारण योग्यायोग्य का विचार न कर उसने अमरचन्द को विष दिलाने का प्रपंच रचा और उसी के परिणामस्वरूप कुछ दिनों बाद उसकी मृत्यु हो गई। उस समय उसके घर में से कफन के लिए भी पैसा न निकला, जिससे उसकी उत्तर क्रिया राज्य की तरफ से हुई।

ठाकुर अमरचन्द बड़वा[15] ने बहुत विकट स्थिति में निःस्वार्थ बुद्धि और देशहित की प्रेरणा से राज्य का कार्य बहुत योग्यतापूर्वक चलाकर देश को आने वाली कई आपत्तियों से बचाया था। उसका बिना किसी अपराध के विषपान प्रयोग से प्राणान्त होना मेवाड़ के इतिहास को कलंकित करता है। कर्नल टॉड ने उसके विषय में जो प्रशंसात्मक वाक्य लिखे हैं, ठाकुर अमरचन्द के समग्र जीवन एवं उसके उज्जव कार्यों का सही मूल्यांकन है।

6.2 मेवाड़ पर मराठा आक्रमण और सत्ता की राजनीति –

जब मेवाड़ के शासकों की सैन्य शक्ति नष्ट हो गई, तो राज्य में गृह युद्ध और विद्रोह भड़क उठा। इनमें युद्धरत दो प्रमुख उप–कुल, शक्तावत और चुण्डावत थे। पठानों और पिंडारियों (अनियमित सैन्य लुटेरियों) के वर्चस्व वाली मराठा सेनाऐं मेवाड़ को उजाड़ती रहीं। तब महादजी सिंधिया (महादजी शिंदे रा. 1730–94 ग्वालियर रियासत के संस्थापक) ने एक अनुशासित सेना का गठन किया, जिसमें उत्तर भारतीय सैनिक और गोरों (अंग्रेजों) का नेतृत्व था। मराठों के करीबी सहयोगी अमीर खान के पठानों ने सिंधिया की मौत के बाद मेवाड़ में अपने विनाश के बीज बो दिए। विदेशी भाड़े के आतंकवादियों को काम पर रखने के बावजूद, मराठों को अपने उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हुई, क्योंकि इन पठानों और पिंडारियों ने मराठों को तहस–नहस कर दिया।

देश के पतन का असर अंग्रेजों पर पड़ा, जिनके साथ मेवाड़ ने शांति संधि पर हस्ताक्षर किए थे। चुण्डावतों के शक्तिशाली गुट ने अपने ही महाराणा अरि सिंह द्वितीय (1761–73) को पद से हटाने की योजना बनाई। गोगुंदा के प्रमुख की बेटी तथा स्वर्गीय महाराणा राज सिंह द्वितीय के कथित पुत्र रतन सिंह की ताजपोशी कुम्भलगढ़ में हुई और उन्होंने महादजी सिंधिया को पुरस्कार देने के वादे के साथ उनकी सहायता का न्यौता दिया।

''सन् 1751 में महाराणा प्रताप सिंह द्वितीय मेवाड़ के उत्तराधिकारी बने। इस राजा के इतिहास में, अपने तीन साल के शासन काल में मराठा आक्रमण एवं युद्धों के अलावा कुछ और दर्ज नहीं है। इन के बाद इनके पुत्र महाराणा राज सिंह द्वितीय आए जिन्होंने अपने पूर्वजों के नाम एवं पद

के अलावा कुछ और नहीं पाया। उनके सात साल के शासन काल में मराठा समुदाय ने लगभग सात बार चढ़ाई की और मेवाड़ साम्राज्य को क्षीण कर दिया।''

सन् 1761 में महाराणा अरि सिंह द्वितीय ने प्रधान का पद अमरचंद बड़वा से लेकर जसवंतराय पंचोली को सौंपा एवं मेहता अगरचंद को विशिष्ट सलाहकार के रूप में नियुक्त किया। इस कारण से पूर्व प्रधान अमरचंद बड़वा अलगाव महसूस करने लगे। जसवंतराय पंचोली, मेहता अगरचंद एवं अन्य महत्वपूर्ण निष्ठावान लोगों ने महाराणा अरि सिंह द्वितीय को राजकीय समस्याऐं समझाने का बहुत प्रयास किया लेकिन क्रोधी राजा ने किसी भी सलाह पर ध्यान नहीं दिया। महाराणा के निर्देशानुसार सन् 1767 में निराश प्रधान जसवंतराय पंचोली ने त्यागपत्र दिया और महाराणा ने पद मेहता अगरचंद को सौंपा। जालिम सिंह (शाहपुरा के राज उम्मेद सिंह के छोटे पुत्र) महाराणा के सलाहकार बने रहे।

मेहता अगरचंद एक साफ दिल व्यक्ति की तरह जाने गए। उन्होंने अपने कर्त्तव्यों के पालन को प्राथमिकता दी। मेवाड़ के छोटे सरदारों के विरूद्ध कई वर्षों तक चले गृह युद्ध में उन्होंने अपने राजा की विजय के लिए अथक प्रयास किए। सन् 1762 से 1765 तक जब माण्डलगढ़ का किला अनौपचारिक रूप से छोटे सरदारों के कब्जे में था और सिर्फ चार गाँव खालसा (राज्य भूमि) के अन्तर्गत थे। राज्य सलाहकार के पद पर रहते हुए मेहता अगरचंद मेवाड़ के लिए यह किला पुनः जीतना चाहते थे। उन्होंने छोटे सरदारों पर चढ़ाई की और माण्डलगढ़ को मेवाड़ के लिए हासिल करने में सफल हुए। सन् 1765 में राज्य के प्रति सेवा एवं निष्ठा के फलस्वरूप हुए मेहता अगरचंद को माण्डलगढ़ का 'किलेदार' नियुक्त किया गया। मेहता अगरचंद अपने परिवार के साथ माण्डलगढ़ किले में

स्थापित हुए और तभी से सन् 1947 में भारत की स्वतन्त्रता तक बच्छावत मेहताओं के परिवार किले में रहते आए हैं और किलेदारी पद का गौरव उठाते आए हैं।

सन् 1767 में जब राज्य अशांति से गुजर रहा था तब मेहता पृथ्वीराज के पुत्र मेहता अगरचंद (ज. 1735–1799) की महाराणा अरि सिंह द्वितीय द्वारा प्रधान पद पर नियुक्ति की गयी एवं जागीर सौंपी गयी। सन् 1769 के असफल उज्जैन युद्ध के पश्चात् अमरचंद बड़वा को पुनः बुलाकर प्रधान के पद पर नियुक्त किया गया।

6.3 मेवाड़ पर मराठा–पिण्डारी आक्रमण एवं सामन्तों में दल बंदी तथा ब्रिटिश प्रभु सत्ता की स्थापना –

उसी समय महादजी सिंधिया की सेना जो बागी रतन सिंह एवं उसके दल की सहायक थी, ने उज्जैन के पास शिप्रा नदी के तट पर डेरा डाला। 13 जनवरी 1769 के दिन मराठों के साथ युद्ध में सलुम्बर, शाहपुरा एवं बनेड़ा के प्रमुख मारे गए। कोटा के राज राजा जालिम सिंह झाला एवं मेवाड़ के प्रधान मेहता अगरचंद, महाराणा अरि सिंह के साथ लड़ते हुए बुरी तरह जख्मी हुए। मेहता अगरचंद एवं अन्य लोग मराठों द्वारा बंदी बना लिए गए। महाराणा के आदेश पर रूपाहेली ठाकुर, शिव सिंह ने कुछ आदिवासियों (बावरी जाति) को भेजा जो मेहता अगरचंद को छुड़वाने में सफल हुए। अन्य सैनिक बाद में रिहा हुए। मेवाड़ की सेना (अधिकतर मुस्लिम एवं सिंधी) ने युद्ध पश्चात् उज्जैन में लूट–पाट की। इस कारण सिंधिया उत्तेजित एवं क्रोधित हो गए। युद्ध के पश्चात्, कोटा के जालिम सिंह झाला, महादजी सिंधिया के प्रबल समर्थक बनें।

''सन् 1769 में उज्जैन युद्ध की असफलता के बाद सलूम्बर के रावत भीम सिंह ने महाराणा अरि सिंह द्वितीय को सलाह दी कि पूर्व प्रधान अमर चन्द बड़वा (सनाढ्य ब्राह्मण) को पुनः बुलाकर जिम्मेदारी सौंपी जाए। इस पर महाराणा उनके घर गए और प्रधान पद की जिम्मेदारी सम्भालने का प्रस्ताव रखा। अमरचंद बड़वा द्वारा व्यक्त की गई गंभीर आपत्तियों के कारण महाराणा ने किसी भी हद तक उनकी मदद करने का वादा किया।''

अमरचंद बड़वा ने प्रधान के रूप जिम्मेदारी स्वीकार की और महादजी सिंधिया से प्रतिशोध के चलते उदयपुर की किलेबंदी शुरू की। जबकि उदयपुर के अच्छे महत्वपूर्ण रणनीति की दृष्टि वाले स्थानों पर ज्यादातर उमराव और रावत तैनात किए गए, लेकिन पूर्व प्रधान मेहता अगरचंद कुछ उमरावों के साथ सलाहकार के रूप में महाराणा अरि सिंह के साथ रहे। युद्ध तकरीबन छः महीनों तक चला। महादजी सिंधिया जो रतन सिंह की ओर से लड़ रहे थे, आखिरकार 21 जुलाई 1769 को अपने सैन्य दल के साथ लौट गये। महाराणा अरि सिंह द्वितीय, अमरचंद बड़वा, सलूम्बर के रावत भीम सिंह एवं कुराबड़ के रावत अर्जुन सिंह से बहुत प्रसन्न थे।

सन् 1773 में महाराणा अरि सिंह के मरणोपरांत नाबालिग कुंवर हमीर सिंह द्वितीय को गद्दी पर बिठाया। जल्द ही कुराबड़ के रावत अर्जुन सिंह और अन्य चुण्डावतों ने जो अमरचंद बड़वा द्वारा निष्ठावान कहलाए गए थे। महाराणा हमीर सिंह के पास प्रधान पद के संचालन को लेकर अपनी नाराजगी जतायी। सन् 1775 में अमरचंद बड़वा को बंदी बनाने के बाद जहर देकर मार दिया गया।

महाराणा हमीर सिंह द्वितीय (ज. 1761–78) का वयस्क होने से पहले 1778 में निधन हो गया। छोटे नाबालिग भाई कुंवर भीम सिंह गद्दी पर बैठे। सन् 1784 में बाईजीराज (महाराणा भीम सिंह की माता) की विश्वसनीय सेविका, बाई रामप्यारी की सलाह पर जनानी महल के कार्यकारी सोमचंद गांधी को प्रधान बनाया गया। उन्होंने राज्य के शत्रुओं से मित्रता की जैसे कि रावत रतन सिंह ओर कोटा, बूंदी के शासक। रावत अर्जुन सिंह, रावत प्रताप सिंह और उनके अन्य साथियों ने महाराणा भीमसिंह की खिल्ली उड़ाई।

''मेवाड़ में शक्तावतों एवं चुण्डावतों के दो मुख्य राजपूत दल थे। वे हमेशा एक दूसरे से बैर रखते एवं युद्ध करते रहते थे। यह गुटबाजी मेवाड़ में फिर से तब उभरी जब प्रधान सोमचंद गांधी शक्तावतों की ओर से आए जिससे भीण्डर महाराज मोखम सिंह सबसे ताकतवर बने। राज्य के प्रशासन में जहां चुण्डावत, सलूम्बर रावत भीम सिंह के साथ बने रहे वहीं कुराबड़ रावत अर्जुन सिंह इत्यादि की उपेक्षा की गयी। अक्टूबर 1789 में कुराबड़ के रावत अर्जुन सिंह एवं भदेसर के रावत सरदार सिंह ने मिलकर जनानी महल में सोमचंद गांधी की हत्या करवाई। सोमचंद के छोटे भाई सतिदास गांधी को प्रधान बनाया गया।''

6.4 प्रधान मेहता अगरचंद की प्रशासनिक भूमिका –

जहाजपुर और माण्डलगढ़ के मध्य स्थित अमरगढ़ किले को लेकर बूंदी के राव राजा उम्मेद सिंह के साथ विवाद खड़ा हुआ। पश्चात् बूंदी के राजकुमार अजीत सिंह ने महाराणा अरि सिंह को शिकार का निमन्त्रण दिया और धोखे से उनकी हत्या कर दी। युवा हमीर सिंह द्वितीय ने मेवाड़ की राजगद्दी संभाली। प्रधान अमरचंद बड़वा, अगरचंद मेहता और

जसवंतराय पंचोली ने करजाली के महाराज बाघ सिंह, कुराबड़ के रावत अर्जुन सिंह एवं अन्य चुण्डावतों से राज्य की देखरेख करने की विनती की क्योंकि महाराणा नाबालिग थे। सन् 1778 में बालिग होने से पहले उनकी भी मृत्यु हो गयी। उनके छोटे भाई भीम सिंह ने मेवाड़ का सिंहासन सम्भाला।

सन् 1792 में महाराणा भीम सिंह ने मेवाड़ को अपनी बागी सरदार रतनसिंह से बचाने के लिए महादजी सिंधिया से मदद मांगी। महादजी ने सुरक्षा एवं अर्थ व्यवस्था करने के लिए मेवाड़ में अंबाजी इंगलिया को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। मेहता अगरचंद के साथ अंबाजी इंगलिया और रावत अर्जुन सिंह को कुम्भलगढ़ किले से रावत रतन सिंह को हटाने के लिए बुलाया गया। भीषण लड़ाई में रतन सिंह हार गए लेकिन वह भागने में कामयाब रहे। अंबाजी सन् 1792 से 1799 तक उदयपुर में रहे, मेवाड़ सरदारों के बीच आपसी युद्ध को रोककर मेवाड़ के संसाधनों में काफी सुधार किया, साथ ही अपने लिए काफी धन दौलत भी जुटा ली। तत्पश्चात् नवम्बर 1796 में षड़यंत्रकारी प्रधान सतिदास गांधी और उनके भतीजे जयचंद को बंदी बना लिया गया। मेहता अगरचंद की प्रधान पद पर पुनः नियुक्ति की गयी और सन् 1799 में अपनी मृत्यु तक वे पद पर बने रहे। सलूम्बर रावत भीम सिंह को 'खिल्लत' (जमीन और धन की भेंट) से सत्कार किया।

मेहता अगरचन्द ने महाराणा अरिसिंह के समय से राजभक्त रहकर समय समय पर बहुत कुछ सेवा की थी। वि.सं. 1856 पौष (ई.स. 1799 दिसम्बर) में माण्डलगढ़ में उसका देहान्त होने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र देवीचन्द मंत्री बनाया गया और जहाजपुर का किला उसके अधिकार में रखा गया, जिसे लकवा ने छः लाख रूपयों के एवज में शाहपुरे के राजा

से छीनकर पीछा महाराणा के खालसे में मिला लिया था। लकवा ने थोड़े ही दिनों में मेवाड़ की प्रजा से 2400000 रूपये वसूल किये। फिर अपनी ओर से जसवन्तराव भाऊ को अधिकार देकर वह जयपुर चला गया।[16]

वि. सं. 1859 (ई. स. 1802) में जसवन्तराव होल्कर सिन्धिया से गहरी हार खाकर मेवाड़ में चला गया, परन्तु जब सिन्धिया की सेना उसका पीछा करती हुई वहां भी आ पहुंची, तब वह नाथद्वारे चला गया। वहां के गोस्वामियों से उसने तीन लाख रूपये वसूल करना और मन्दिरों की सम्पत्ति लूट लेना चाहा। इस पर गोस्वामियों ने महाराणा को इसकी सूचना दी, जिस पर उसने देलवाड़े के राज कल्याणसिंह झाला, कूंठवा के ठाकुर विजयसिंह (सांगावत), आगर्या के ठाकुर राठौड़ जगतसिंह (जैतमालोत), मोई के जागीरदार अजीतसिंह भाटी, साह एकलिंग दास बोल्या और जमादार नाथू (सिन्धी) को सेना सहित नाथद्वारे की ओर रवाना किया। ये लोग वहां पहुंचकर गोस्वामी और तीनों मूर्तियों को लेकर चले; इतने में कोठारिये का रावत विजयसिंह चौहान भी मदद के लिए आ पहुंचा। पहले ये लोग ऊनवास गांव में ठहरे। यहां से आगे कुछ भय न होने से विजयसिंह अपने ठिकाने के लिए विदा हो गया। मार्ग में जसवंतराव होल्कर की फौज़ ने उस बहादुर सरदार को घेरकर कहा – 'शस्त्र और घोड़े दे जाओ।' शस्त्र और घोड़ों को देने में अपना अपमान समझकर उस वीर रावत ने अपने घोड़ों को मार ड़ाला और स्वयं वीरतापूर्वक शत्रुओं पर टूट पड़ा। शत्रु सेना में हजारों सैनिक थे, जो विजयसिंह की बहादुरी पर शाबास! शाबास! बेलते और अपनी जान का खतरा समझते थे। अन्त में वह वीर अपने राजपूतों सहित वहीं मारा गया।[17] ऊनवास से वे तीनों मूर्तियों उदयपुर पहुंचा दी गई।

इसके उपरान्त मेवाड़ के सरदारों से दंड के रूप में लाखों रूपये वसूल कर जसवन्तराव होल्कर अजमेर होता हुआ जयपुर की ओर चला गया। सिंधिया के अफसरों ने भी, जो होल्कर का पीछा करते हुए मेवाड़ में आए थे, महाराणा और उसके सरदारों से तीन लाख रूपये वसूल किए।[18]

मरहटों के उपद्रव तथा अत्याचार को देखकर मौजीराम ने, जो प्रधान बनाया गया था, महाराणा को यह सलाह दी कि मेवाड़ की सेना में यूरोपियन ढंग की शिक्षा पाये हुए नये सैनिक भरती किये जाऐं और उनका खर्च सरदारों से वसूल किया जाए। जब यह बात सरदारों को मालूम हुई, तब उन्होंने मौजीराम को अधिकार–च्युत करके उसके पद पर सतीदास को नियुक्त किया और उसके भाई शिवदास को, जो चूण्डावतों के डर से भागकर ज़ालिमसिंह के पास कोटे चला गया था, वापस बुला लिया।[19] इस घटना के कुछ दिनों पीछे, सलूम्बर के एक मठ में लकवा का देहान्त हो जाने पर, आंबाजी इंगलिया का भाई बालेराव शक्तावतों तथा सतीदास प्रधान से मिल गया। फिर उसने महाराणा के भूतपूर्व मंत्री देवीचन्द को, चूंडावतों का तरफदार समझकर, कैद कर लिया और चूण्डावतों की कुछ जागीरें छीन लीं। अपनी योजना को पूर्ण करने का सुअवसर देखकर ज़ालिमसिंह झाला भी, जो चूण्डावतों का विरोधी था, कोटे से फौज़ लेकर आया और शक्तावतों से मिल गया। वि.सं. 1858 फाल्गुन (ई.स. 1802 मार्च) में बालेराव ने महाराणा के पास पहुंचकर मौजीराम को सौंप देने के लिए कहा, परन्तु उसका कथन स्वीकृत न हुआ। इस पर मरहटी सेना महलों की ओर बढ़ी, तो साहसी मौजीराम ने बालेराव, जामलकर तथा ऊदाकुँवर को कैद कर लिया। इस तरह मरहटा सरदारों के कैद हो जाने पर चूण्डावतों ने उनकी सेना पर आक्रमण किया, जिससे वह तितर–बितर होकर गाडरमाला की ओर भाग गई।[20]

यह खबर सुनकर अपने मित्र आंबाजी के भाई बालेराव की कैद से छुड़ाने के लिए भीण्डर और लावा के शक्तावत सरदारों की सहायता लेकर ज़ालिमसिंह झाला चेजा घाटी की तरफ बढ़ा। महाराणा उससे मेल रखना चाहता था, परन्तु चुण्डावतों के दबाव में आकर वह सिन्धियों तथा सरदारों की 6000 सेना सहित उसका मुकाबला करने के लिए बढ़ा। घाटी के पास पांच दिन तक बड़ी बहादुरी के साथ ज़ालिमसिंह से लड़ाई होती रही, जिसमें रावत अजीतसिंह (सारंगदेवोत) सख्त घायल हुआ। महाराणा ने पालकी देकर उसे अपने ठिकाने में पहुँचा दिया। फिर ज़ालिमसिंह को भी उसकी इच्छानुसार महाराणा ने अपने पास बुला लिया और उसने अपने मालिक (महाराणा) से इस गुस्ताखी की क्षमा मांगी, जिस पर उस (महाराणा) ने उसके लिहाज़ से बालेराव आदि तीनों को छोड़ दिया और फौज़ खर्च के एवज़ में ज़ालिमसिंह को जहाजपुर का परगना और किला सौंप दिया तो उसने अपनी तरफ से विष्णुसिंह शक्तावत को वहां का हाकिम बनाया।[21]

वि.सं. 1860 (ई. स. 1803) में जसवन्तराव होल्कर ने मेवाड़ में दुबारा आकर महाराणा से चालीस लाख रूपये मांगे ओर उसका एक तिहाई तुरन्त लेना चाहा। इस पर महाराणा ने जैसे–तैसे 12 लाख रूपये एकत्र कर दे दिये और बाकी रूपये वसूल करने के लिए बलराम सेठ वहां रखा गया। देवगढ़ के सरदार से साढ़े चार लाख और भीण्डर के शक्तावत सरदार से दो लाख रूपये वसूल हुए। लावा तथा बदनोर के सरदारों से भी उसने बहुत रूपये लिए।[22]

वि.सं. 1862 (ई.स. 1805) में सिंधिया भी मेवाड़ में आकर बदनोर के पास ठहरा। वहां होल्कर और उसने मिलकर यह निश्चय किया कि अपने कुटुम्ब तथा सामान को मेवाड़ के किलों में रखकर अंग्रेजों से, जिन्होंने

हमसे उत्तरीय हिन्दुस्तान और नर्मदा के दक्षिण का सारा प्रदेश छीन लिया है, लड़ना चाहिए; परन्तु आंबाजी इंगलिया ने, जो इन दिनों सिंधिया का प्रधानमंत्री था और लकवा दादा को मदद देने के कारण महाराणा से द्वेष रखता था, यह सलाह दी कि आप दोनों को मेवाड़ का राज्य आपस में बाँट लेना चाहिए।

इस समय रावत संग्रामसिंह शक्तावत तथा कृष्णदास पंचोली तो होल्कर के और रावत सरदारसिंह चूंडावत सिंधिया के दरबार में महाराणा का प्रतिनिधि था। वे दोनों सरदार इस कठिन अवसर पर आपस का द्वेष छोड़कर एक हो गए और स्वामिभक्ति की प्रेरणा तथा कर्त्तव्य के अनुरोध से सिंधिया की स्त्री बैजाबाई को, जिसने अपने पति को मुठ्ठी में कर लिया था, अपनी ओर मिला लिया। इसके बाद उन्होंने होल्कर से मिलकर पूछा – 'क्या आप भी मेवाड़ को आंबाजी के हाथ बेच देना चाहते हैं ?' फिर उसके सम्मुख महाराणा की विकट स्थिति का ऐसा मर्मस्पर्शी शब्दों में चित्र खींचा कि उसका जी पिघल गया। सरदारसिंह तथा संग्रामसिंह को ढाढ़स बँधाते हुए उसने उत्तर दिया – 'मैं आप लोगों को विश्वास दिलाता हूँ कि आंबा की इच्छा पूरी न होने दूंगा; आप लोग आपस का बैर छोड़कर एक हो जाऐं।' इसके उपरान्त उसने सिंधिया से मिलकर कहा – 'महाराणा हमारे मालिकों के मालिक हैं[23], उन्हें सताना ठीक नहीं। उनके जो ज़िले दबा बैठे हैं उन्हें लौटाकर हम दोनों को उनसे मेल कर लेना चाहिए।' होल्कर की बातें सिन्धिया ने भी मान लीं। उस (होल्कर) ने निम्बाहेड़े का परगना महाराणा को लौटा भी दिया, परन्तु कुछ दिनों बाद होल्कर को अपने एक संवाददाता का इस आशय का पत्र मिला कि महाराणा का भैरवबख्श नामक दूत लॉर्ड लेक के डेरे में आकर उसके साथ अंग्रेजी सेना की सहायता से मरहटों को मेवाड़ से बाहर निकाल देने

की कोशिश कर रहा है। उस पत्र के पाते ही होल्कर आग बबूला हो गया। उसने तुरन्त सरदारसिंह, संग्रामसिंह तथा कृष्णदास पंचोली को बुलाकर उन्हें खूब फटकारा और उन पर कृतघ्नता एवं विश्वासघात का दोषारोप करते हुए कृष्णदास से पूछा – 'क्या मेवाड़ियों का अपनी कृतघ्नता प्रकट करने का यही ढंग है ?' इस पर कृष्णदास पंचोली ने बड़ी नम्रतापूर्वक मीठे तथा युक्तिपूर्ण शब्दों में उत्तर देना आरम्भ किया, परन्तु जसवन्तराव के मंत्री अलीकर ताँतिया ने उसे रोककर अपने स्वामी से कहा – ''आप और सिंधिया के बीच दुश्मनी पैदा कराकर ये 'रंगड़'[24] दोनों को बरबाद कर देंगे। आप को इनकी ईमानदारी का पता चल गया, इसलिए इनका साथ छोड़ दें, सिन्धिया से मेल कर लें और आंबाजी को मेवाड़ का सूबेदार नियुक्त करें। यदि आप मेरी सलाह न मानेंगे तो मैं आपका साथ छोड़कर सिन्धिया को मालवे ले जाऊंगा।'' भास्कर भाऊ को छोड़कर और सभी मंत्रियों ने ताँतिया की बातों का समर्थन किया। फिर होल्कर उत्तर की ओर चला गया। वहां उसकी लॉर्ड लेक से मुठभेड़ हुई। उसे हराकर लेक ने पंजाब तक उसका पीछा किया। होल्कर के मेवाड़ से विदा होते ही सिंधिया से सदाशिवराव के द्वारा 1600000 रूपये मेवाड़ से वसूल किये।[25]

मरहटों की ऐसी लूट–खसोट से मेवाड़ की बड़ी दुर्दशा हो गई थी और महाराणा भीमसिंह अत्यन्त खिन्न तथा तंग हो रहा था; इतने में एक नया उपद्रव उठा। वि.सं. 1855 (ई. स. 1799) में सलूम्बर के रावत भीमसिंह के द्वारा महाराणा की कुंवरी कृष्णकुमारी का जोधपुर के महाराजा भीमसिंह के साथ सम्बन्ध (सगाई) हुआ था, परन्तु वि.सं. 1860 (ई. स. 1803) में उक्त महाराजा का देहान्त हो जाने से उसका सम्बन्ध जयपुर के महाराजा जगतसिंह से किया गया।

दौलतराव सिंधिया ने, जो इन दिनों महाराजा जगतसिंह से रूपये न मिलने के कारण चिढ़ा हुआ था, इस सम्बन्ध का विरोध करते हुए जयपुर को नीचा दिखाने के उद्देश्य से महाराणा को कहलाया कि जयपुर के वकील को, जो शादी का पैगाम लेकर आया है, उदयपुर से बाहर कर दो, किन्तु महाराणा ने उसका कहना न माना, तब वह स्वयं उदयपुर पर चढ़ आया। उदयपुर के निकट घाटी में महाराणा से उसकी लड़ाई हुई, जिसके फलस्वरूप महाराणा को लाचार होकर उसकी बात मान लेनी पड़ी। फिर सिंधिया एकलिंगजी के मन्दिर में महाराणा से मिलकर वापस चला गया।

इन्हीं दिनों पोकरण (जोधपुर राज्य में) का ठाकुर सवाईसिंह, जो जयपुर में था, महाराजा जगतसिंह से अपनी पोती की शादी करना चाहता था। इस पर जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने उसके पास इस आशय का एक पत्र भेजा कि तुम अपनी पोती का विवाह महाराजा जगतसिंह से करना चाहते हो, तो पोकरण में करना। अगर उसे जयपुर में ले जाकर करोगे, तो राठौड़ों की हतक होगी। इसके उत्तर में उसने लिखा कि मेरे भाई उम्मेदसिंह का घर जयपुर में है और गीजगढ़ का ठिकाना उसकी जागीर में है। इसलिए यहां विवाह करने में तो कोई हतक की बात नहीं है; परन्तु महाराणा की कन्या कृष्णकुमारी, जिसका सम्बन्ध पहले स्वर्गीय महाराजा भीमसिंह के साथ हो चुका था, महाराजा जगतसिंह को ब्याही जाने वाली है, इसमें अलबत्ता राठौड़ों की मान–हानि है। पत्र पाते ही मदान्ध मानसिंह ने परिणाम तथा औचित्य–अनौचित्य का कुछ भी विचार न कर उदयपुर की ओर कूच कर दिया। यह खबर सुनकर महाराजा जगतसिंह भी जयपुर से रवाना हुआ और बीकानेर का महाराज सूरतसिंह तथा नवाब अमीरखां उसके मददगार बने। अन्त में वि.सं. 1863 फाल्गुन सुदि (ई.स. 1807 मार्च) में जयपुर और जोधपुर की सीमा के निकट

पर्वतसर के पास दोनों की सेनाओं में गहरी लड़ाई हुई। लड़ाई छिड़ने से पहले राठौड़ों में आपस की फूट पड़ गई थी और उनमें से अधिकांश, जो अपने स्वामी से अप्रसन्न थे, जयपुर की सेना में शामिल हो गये, जिससे महाराजा मानसिंह को भागकर जोधपुर के किले में शरण लेनी पड़ी।

तदनन्तर जयपुर के दीवान रायचन्द ने तो महाराज जगतसिंह को कृष्णकुमारी से शादी कर जयपुर लौटने और ठाकुर सवाईसिंह ने जोधपुर पर चढ़ाई करने की सलाह दी। उक्त महाराजा ने सवाईसिंह की बात मानकर जोधपुर को जा घेरा। मानसिंह ने नवाब अमीरखां को घूस देकर अपनी तरफ मिला लिया, जिससे महाराजा जगतसिंह को वहां से लौटना पड़ा।

इसके उपरान्त निष्ठुर अमीरखां ने महाराजा मानसिंह से कहा – 'जब तक कृष्णकुमारी जीवित है तब तक कभी–न–कभी फिर झगड़ा हो जाने की आशंका है, इसलिए जैसे हो सके उसे मरवा डालना ही ठीक होगा।' अमीरखां की बात मानकर उक्त महाराजा ने उसे इस काम के लिए उदयपुर की ओर रवाना किया। नवाब ने उदयपुर पहुँचकर अजीतसिंह चूंडावत के द्वारा, जो उसकी सेना में महाराणा की तरफ से वकील था, महाराणा को कहलाया – 'या तो आप अपनी कन्या का विवाह महाराजा मानसिंह के साथ कर दें या उसे मरवा डालें। यदि आप मेरा कहना न मानेंगे, तो मैं आपके देश को बर्बाद कर दूंगा।' मेवाड़ की दशा ऐसी निर्बल हो गई थी कि महाराणा को लाचार होकर उसका कथन स्वीकार करना पड़ा। उसने महाराज दौलतसिंह (भैरवसिंहोत) को बुलाकर कृष्णकुमारी का वध करने की आज्ञा दी। यह हुक्म सुनकर दौलतसिंह का क्रोध भड़क उठा और उसकी देह में आग सी लग गई। आवेश में आकर उसने कहा – 'ऐसा क्रूर और अमानुषिक आदेश करने वाले की जीभ

कटकर गिर जानी चाहिए। निरपराध अबला पर हाथ उठाना मेरा धर्म नहीं है; यह तो हत्यारों का काम है। यह कहकर दौलतसिंह के चुप हो जाने पर दरबार में कुछ देर तक सन्नाटा छा गया। फिर महाराणा अरिसिंह (द्वितीय) के पासवानिये (अनौरस) पुत्र जवानदास को आज्ञा दी गई। कटार लेकर उसने अन्तःपुर में प्रवेश किया, परन्तु सोलह वर्ष की उस सुकुमारी एवं रूपवती राजकुमारी को देखकर उसका शरीर काँपने लगा और हाथ से कटार गिर गया।'

जनाने में इस प्रकार उसके आने का कारण जानकर कृष्णकुमारी की माता महाराणी चावड़ी दुःख से कातर एवं विह्वल होकर रोने लगी। महाराणी को विलाप करते देखकर जवानदास का जी भर आया और वह राजमन्दिर से खिसक गया। तब राजकुमारी को जहर मिला हुआ शरबत पीने के लिए दिया गया। उसने प्रसन्नतापूर्वक शरबत का प्याला हाथ में लेकर अपनी माता को दिलासा देते हुए कहा – 'माता! तू क्यों विलाप कर रही है ? मैं मौत से नहीं डरती। क्या मैं तेरी बेटी नहीं हूँ ? मैं मृत्यु से क्यों डरूँ ? राजकन्याओं का जन्म तो आत्मबलि के लिए ही होता है। यह मेरे पिता का अनुग्रह है कि मैं अब तक जी रही हूँ। प्राणोत्सर्ग द्वारा अपने पूज्य पिता का कष्ट दूर कर उनके राज्य की रक्षा में अपने जीवन को सफल एवं सार्थक बनाने का यह मौका मुझे अपने हाथ से न जाने देना चाहिए।' यह कहकर उसने विष पी लिया, परन्तु वह क़ै होकर निकल गया। इस तरह तीन बार ज़हर पीने और प्रत्येक बार क़ै से निकल जाने पर अफ़ीम पिलाने से उसकी जीवन लीला समाप्त हुई। यह करूणापूर्ण घटना वि.सं. 1837 श्रावण वदि 5 (ई.स. 1810 ता. 21 जुलाई) को हुई। इसके कुछ दिनों पीछे राजकुमारी की माता भी अन्नजल छोड़

देने के कारण इस संसार से चल बसी। फिर नवाब अमीरखां मेवाड़ से लौट गया।[26]

6.5 मेवाड़ प्रशासन में प्रधान पद के लिए प्रतिस्पर्द्धा (मेहता शेर सिंह एवं मेहता राम सिंह) –

महाराणा भीम सिंह के शासन काल में आर्थिक व्यवस्था के कारण शाही सरकार का कर ऋण सात लाख रूपयों तक बढ़ गया था। सन् 1828 में महाराणा जवान सिंह (1828–38) ने मेहता (चील) राम सिंह को प्रधान पद से हटाया और मेहता शेर सिंह, चतुर राजनेता मेहता देवीचंद के भतीजे को प्रधान पद पर नियुक्त किया। रिश्ते में मेहता (चील) राम सिंह, मेहता (बच्छावत) शेर सिंह के फूफा थे। देवीचंद की बहिन देव कंवर का ब्याह राम सिंह से हुआ था और राम सिंह की बहन गट् कंवर का ब्याह देवीचंद से हुआ था। शेर सिंह को उनकी निष्ठा एवं ईमानदारी के लिए जाना जाता था। लेकिन वे कुशल अर्थ प्रशासक नहीं थे। परिणामस्वरूप राज्य की उधारी बढ़ती चली गयी और महाराणा जवान सिंह के पास मेहता (चील) राम सिंह को फिर से बुलाने के अलावा कोई विकल्प नहीं रहा।

सन् 1831 में, मेहता राम सिंह को प्रधान पद से हटाकर मेहता शेर सिंह को पुनः नियुक्त किया गया। दोनों ही सत्ता के तीव्र आकांक्षी थे और जो भी शक्तिशाली हुआ वह प्रधान पद का दावेदार बना। मेवाड़ राज्य के प्रधान मेहता शेर सिंह ने ब्रिटिश सरकार से फुलिया परगना (जिला) शाहपुरा को पुनः प्राप्त करवाया। सन् 1831 में शाहपुरा के राजाधिराज माधो सिंह ने प्रसन्न होकर उबला गांव उपहार स्वरूप शेर सिंह को प्रदान किया।

महाराणा सरदार सिंह (रा. 1838–42) के राजगद्दी पर आसीन होने के पश्चात् ही मेहता (बच्छावत) शेर सिंह को बर्खास्त कर बंदी बना लिया गया। महत्वाकांक्षी मेहता (चील) राम सिंह को प्रधान पद पर पुनः नियुक्ति की गयी। विदित रहे कि रिश्ते में मेहता राम सिंह मेहता शेर सिंह के फूफा (बुआ देव कंवर के पति) लगते थे।

मेहता शेर सिंह को कारावास में बहुत कष्ट उठाने पड़ रहे थे। इसलिए राजनीतिक एजेंट मेजर रोबिनसन ने महाराणा से उनके प्रति नरमी बरतने की विनती की। लेकिन उनके आलोचकों ने महाराणा के ब्रिटिश एजेंट की बात ना सुनने की सलाह दी। अंततः वचन पत्र पर दस लाख रूपए जुर्माने की रकम भरने पर मेहता शेर सिंह को कैद से रिहा किया गया। क्योंकि उनके आलोचक उन्हें जान से मारना चाहते थे, उन्हें मारवाड़ की ओर पलायन करने की सलाह दी गयी।

''महाराणा स्वरूप सिंह (1842–61) को मेहता (चील) रामसिंह पर आर्थिक अव्यवस्था को लेकर अविश्वास होने के कारण उन्होंने मेहता शेर सिंह को मारवाड़ से बुलवाकर खास रूक्के पर हस्ताक्षर करवाकर पुनः प्रधान पद पर नियुक्त किया। रूक्के में उनके पूर्वज मेहता अगरचंद की प्रशंसा की गयी। महाराणा स्वरूप सिंह ने मेहता शेर सिंह के राजस्व को सुधारने, पुराने कर्ज चुकाने एवं निर्धारित शुल्क पर छूट पाने के प्रयासों का भी स्मरण किया। उनका वेतन बीस हजार रूपये प्रति वर्ष एवं आठ हजार रूपये की अधिक रकम पुनर्वास के लिए निर्धारित की गयी।''

मेवाड़ के महाराणा स्वरूप सिंह (1842–61) छटून्द चाकरी (ठाकुरों द्वारा महाराणा को दिया गया शुल्क) के मसले को अपने सरदारों के लिए हल करना चाहते थे। छटून्द चाकरी शुल्क के अन्तर्गत ठाकुरों को सेवा

करने का एक छठा हिस्सा राजकीय कोष में जमा करवाना होता था। इसलिए प्रधान मेहता शेर सिंह ने राजनीतिक एजेंट लेफ्टिनेंट कर्नल रोबिनसन की सहायता से महाराणा के लिए छटून्द चाकरी के संशोधन प्रक्रिया का मसौदा बनाया, जिस पर प्रधान एवं सरदारों ने हस्ताक्षर किए।

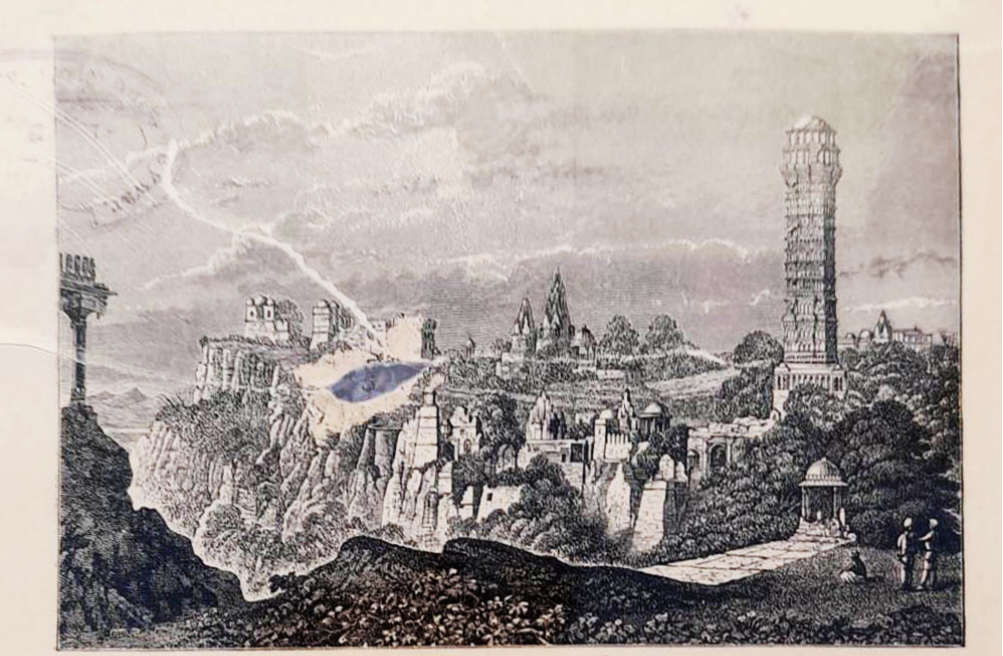

AN INTERIOR VIEW IN CHITORE,
WITH THE COLUMN OF VICTORY.

ISLAND AND PALACE OF JUG MUNDIR,
IN THE LAKE OF OODEYPORE

उदयपुर के महाराणा स्वरूप सिंह द्वारा राजनीतिक एजेन्ट लेफ्टिनेंट कर्नल रोबिनसन को खरीता (पत्र), तिथि – ज्येष्ठ बद 5 सम्वत् 1903 (मई 1847) को पेश किया। ''यह निश्चित ही दिवंगत मेहता (चील) राम सिंह के प्रशासन के दौरान की बात है जिस कारण उन्हें प्रधान पद से हटाया गया और उनकी जगह मेहता (बच्छावत) शेर सिंह को नियुक्त किया गया। तब से ही आप की कृपा से राज्य कर वसूली में बढ़ोतरी हुई है। इस कारण मैं आपकी सरकार को कर की भरपाई कर पाया हूँ एवं राज का पुराना कर्ज भी चुकता हुआ है। मैंने प्रधान मेहता शेर सिंह को आप के पास ब्यौरेवार विवरण देने भेजा है। उन्होंने एक निष्ठावान सेवक के रूप में स्वयं को सिद्ध किया है और मैं उनकी सेवाओं से प्रसन्न हूँ। इस अवसर पर जो उनके साथ शत्रुता रखते हैं और कर्नल सदरलैण्ड के समक्ष मामले की गलत प्रस्तुति करते हैं मैंने मेहता शेर सिंह को आश्वासन दिया है कि अगर वे निष्ठावान रहेंगे तो मैं सदैव उनका समर्थन करूंगा एवं भविष्य में उन्हें दण्ड की रकम में छूट दी जाएगी।''

सन् 1848 में प्रधान मेहता शेर सिंह, महाराणा स्वरूप सिंह के समक्ष नई मुद्रा का प्रस्ताव लाए। महाराणा ने इसको मंजूरी दी। मेहता शेर सिंह ने राजनीतिक एजेंट कर्नल रोबिनसन की मदद से ब्रिटिश सरकार की स्वीकृति दिलवायी। नये रूपये का सिक्का स्वरूप शाही रूपये के नाम से प्रचलित हुआ। सिक्के के अग्रभाग पर देवनागरी में लिखा – 'चित्रकूट उदयपुर' एवं पृष्ठ भाग पर देवनागरी में लिखा – 'दोस्ती लंघन' (लंदन)।

6.6 मेहता गोकलचंद मेवाड़ के प्रधान पद पर नियुक्ति एवं उनकी प्रशासनिक सेवाऐं –

प्रधान मेहता देवीचंद के पोते गोकलचंद मेहता (जन्म 1807–78) को मेवाड़ के प्रधान पद पर सन् 1856 में महाराणा स्वरूप सिंह द्वारा नियुक्त किया गया जब उनके पिता मेहता स्वरूपचंद (ज. 1789–1859) जीवित थे। उन्होंने आर्गीया के किले (वर्तमान राजसमन्द जिले में आमेट के पास) को तब पुनः प्राप्त किया जब एक बागी उत्तराधिकारी ने महाराणा को चुनौती देकर अवैध रूप से किले पर कब्जा कर लिया था। उनकी असाधारण वीरता के लिए महाराणा स्वरूप सिंह ने उन्हें सम्मानित कर उनके परिवार को जागीर प्रदान की। अपने पूर्वजों की ही भांति वे महाराणा के प्रति निष्ठावान एवं विश्वासपात्र रहे।

सन् 1859 में प्रधान मेहता गोकलचंद के विरोधी सक्रिय हुए। महाराणा के कान भरे गए। महाराणा स्वरूप सिंह (रा. 1842–61) ने गोकलचंद को प्रधान पद से हटा कर कोठारी केसरी सिंह को नियुक्त किया। लेकिन अल्पकाल में प्रधान कोठारी केसरी सिंह पर राज्य निधि से सम्बन्धित सट्टेबाजी के गम्भीर आरोपों के कारण मेहता गोकलचंद को पुनः सन् 1861 में प्रधान पद पर नियुक्त किया गया।

महाराणा शंभूसिंह (रा. 1861–74) के समय में रूपाहेली के प्रमुख बाघ सिंह ने लोगों द्वारा अपने बेटे एवं भाइयों की हत्या का दावा कर मूंड कट्टी (रक्त/हत्या की रकम) की माँग की। इस मामले की छानबीन के लिए महाराणा शंभू सिंह ने पंचायत बुलाई जिसमें बेदला के राव बख्ता सिंह, भीण्डर के महाराज मदन सिंह, मेहता जालिम सिंह (प्रधान अगरचंद मेहता के पोते), कोठारी छगनलाल (पन्नालाल मेहता के ससुर), बक्शी

मथुरादास एवं धिनकारिया उदयराम शामिल थे। पंचायत ने महाराणा स्वरूप सिंह के पूर्व निर्णय को समर्थन देते हुए बाघ सिंह के मूंड कट्टी को नकार दिया। लेकिन रूपाहेली प्रमुख ने निर्णय का अनुपालन करने से मना किया। इसलिए साहसी सेनापति एवं प्रधान मेहता गोकलचंद ने विद्रोही प्रमुख को वश करने हेतु राजकीय सैन्य की चार बंदूकों, एक सौ चालीस घुड़सवार दल, पाँच सौ साठ पैदल सैनिकों के दल के साथ रूपाहेली की ओर कूच किया। अन्य प्रमुखों की सेना ने भी राजकीय सैन्य का साथ देते हुए 15 मई 1861 को रूपाहेली गाँव पर एक साथ आक्रमण किया, तब प्रमुख बाघ सिंह ने आत्मसमर्पण किया।

6.7 मेवाड़–महाराणा के आदेश से नाथद्वारा के गोस्वामी गिरधारी लाल के विरूद्ध प्रशासनिक कार्यवाही –

सन् 1671 की बात है कि बादशाह औरंगजेब के उन्मत्त मुगल सैनिकों के धमकाने पर वैष्णव धर्म के गोसाई दामोदर ने अपने इष्टदेव श्रीनाथजी की मूर्ति उठायी एवं गोवर्धन पर्वत (गिरिराज पर्वत, मथुरा–वृन्दावन के पास) से उदयपुर की ओर पलायन किया। मेवाड़ के महाराणा राज सिंह (रा. 1652–80) ने उन्हें उदयपुर से 30 मील उत्तर की ओर सीहाड़ गाँव (बनास नदी के किनारे) में आश्रय दिया जो बाद में नाथद्वारा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। तीर्थ का व्यय चलाने हेतु उन्हें पर्याप्त जागीर बहाल की गयी। इस तरह गोसाई या गोस्वामी 'ठिकानेदार' (प्रांत प्रमुख) के नाम से भी पहचाने जाने लगे।

सन् 1871–76 के दौरान नाथद्वारा के गोसाई (गोस्वामी, वैष्णव धर्म प्रमुख) गिरधारी लाल ने अपने शासक मेवाड़ के महाराणा के प्रति अविश्वास एवं अवज्ञा का रूख अपनाया। तब ब्रिटिश सरकार ने उनसे

बलपूर्वक समर्पण करवाने का निर्णय लिया। 8 अप्रेल 1876 को महाराणा सज्जन सिंह (रा. 1874–84) के निर्देश पर राजनीतिक एजेंट मेजर गनिंग, पंच सरदारी मण्डल के सदस्य, बेदला के राव बख्ता सिंह, प्रधान मेहता गोकलचंद एवं मुंशी मेहता पन्नालाल ने मेवाड़ भील के बंदूक धारी दस्तों के साथ नाथद्वारा की ओर प्रस्थान किया। गोसाई को 200 लोगों के साथ शहर के मोती महल में घेर लिया गया और बंदी बनाकर उदयपुर भेज दिया गया।

उनके अल्पायु पुत्र को उनके स्थान पर आसीन कर दिया गया। दरबार के सैनिक दल को तीर्थ की रक्षा हेतु वहीं छोड़ दिया गया। नाथद्वारा पर दरबार का प्रभाव पाँच वर्षों तक रहा। कुशल शिक्षक द्वारा युवा गोसाई की शिक्षा का प्रबन्ध किया गया। मेवाड़ से निष्कासित गोसाई, गिरधारी लाल को मथुरा भेज दिया गया।

6.8 राय मेहता पन्नालाल के प्रशासकीय कार्य –

''23 दिसम्बर 1869 को महाराणा शंभू सिंह (रा. 1861–74) के वयस्क होने पर अपने पूर्ण अधिकारों के साथ नई कार्यकारी परिषद 'महकमा खास' की स्थापना की एवं मेहता पन्नालाल (जन्म 1843–1919) को मुंशी पद पर नियुक्त किया गया। जुलाई, 1870 में कोठारी केसरी सिंह ने प्रधान पद से त्याग पत्र दे दिया क्योंकि वे नयी न्यायिक प्रशासन बदलाव के विरोध में थे। प्रधान के पद की तुरन्त पूर्ति नहीं की गयी, लेकिन प्रधान पद का कार्य मेहता गोकलचंद को प्रशासन की देखभाल एवं लक्ष्मणराव को न्याय तंत्र के रूप में सौंपा गया।''

''गोकलचंद को फिर से प्रधान पर पर नियुक्त किया, लेकिन प्रधान पद के अधिकार महकमा खास के मुंशी मेहता पन्नालाल को ही सौंपे।

मुंशी मेहता पन्नालाल शासक एवं अन्य प्रशासनिक शाखाओं के बीच विशेष सम्पर्क सूत्र के रूप में कार्यरत रहे।''

सन् 1871 में दूरदर्शी मुंशी मेहता पन्नालाल के प्रयासों से महकमा खास का आठ विभागों में पुनर्गठन हुआ। मेहता जालिम सिंह एवं उनके दत्तक पुत्र मेहता तखत सिंह को सैन्य, शस्त्रागार एवं किलेदारी का कार्यभार सौंपा गया। प्रजा की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए मेहता गोकलचंद एवं लक्ष्मणराव को कोई भी मुख्य जिम्मेदारी नहीं सौंपी गयी। मुंशी मेहता पन्नालाल शासक एवं अन्य प्रशासनिक शाखाओं के बीच विशेष संपर्क सूत्र के रूप में कार्यरत रहे। आपराधिक गतिविधियाँ घटीं, राजस्व की वसूली में सुधार आया एवं भूमि अभिलेखों का बेहतर रूप से संधारण होने लगा।

मुंशी मेहता पन्नालाल की सलाह से महाराणा शंभूसिंह ने निर्णय लिया कि खालसा (राज्य भूमि) में भू–राजस्व (मालगुजारी) के नियमित भुगतान के लिए उचित कदम उठाये जाए। गाँवों में उपजाऊ क्षेत्र को नाप कर उस समय लोगों की उपयोगिता के अनुसार मिट्टी का वर्गीकरण किया गया। इस योजना का घोर विरोध किया गया और राज्य अधिकारियों एवं भूमि शोषण वर्ग द्वारा इसे विफल करने का हर प्रकार से प्रयास किया गया।

सन् 1872 में कुछ लोगों ने आरोप लगाया कि प्रधान मेहता गोकलचंद के पुत्र मेहता गोपाल सिंह के कब्जे में स्वर्गीय महाराणा स्वरूप सिंह के पासवान के खोये हुए गहने हैं। इस मामले की छान–बीन हुई लेकिन मेहता गोपाल सिंह के पास कोई गहने नहीं मिले। लेकिन संशय के आधार पर उन्हें बंदी बनाकर एक लाख रूपये का जुर्माना लगाया

गया। प्रधान मेहता गोकलचंद को भी एक लाख रूपये का जुर्माना लगाया। चूंकि, वे दोनों रकम का भुगतान करने में असमर्थ थे इसलिए मुंशी मेहता पन्नालाल ने सलाह दी कि दोनों ढाई से तीन हजार रूपये प्रति वर्ष कमाई वाले गाँव खालसा में दें।

6.9 महाराणा शंभू सिंह ने 'लंगर' एवं 'तलवार बंधाई' का विशेषाधिकार प्रदान किया –

सन् 1871 में मुंशी मेहता पन्नालाल की सेवाओं से खुश होकर महाराणा शंभू सिंह ने उनका वेतन बढ़ाकर दो हजार रूपए कर दिया। शंभू निवास के दक्षिण में नया महल लम्बे समय से निर्माणाधीन था। इस निर्माण कार्य को शीघ्रता से करवाने की जिम्मेदारी मुंशी मेहता पन्नालाल ने स्वयं पर ली। मेहता पन्नालाल की सेवाओं से खुश होकर महाराणा शंभू सिंह ने उद्घाटन के पश्चात् तुरन्त ही उन्हें सोने का लंगर (पैरों में पहने जाने वाला गहना) उपहार स्वरूप दिया।

6.10 प्रशासनिक पुनर्गठन एवं वित्तीय सुधार –

महाराणा सज्जन सिंह (रा. 1874–84) न केवल प्रशासनिक समस्याओं में उलझे थे बल्कि करीबी रिश्तेदारों एवं स्वजनों की अवज्ञा से भी परेशान थे इसलिए प्रधान मेहता पन्नालाल ने राज्य के कार्यों को सुचारू रूप से चलाने हेतु सभी पदाधिकारियों को एकजूट कर प्रशासन एवं वित्तीय सुधार की ओर ध्यान केन्द्रित किया। मेहता पन्नालाल के योग्य मार्गदर्शन से महाराणा सज्जन सिंह अपनी प्रजा, ठाकुरों एवं सरदारों का विश्वास पुनः जीत गए। सभी प्रशासकीय सुधारों में सबसे महत्वपूर्ण सुधार था, भिन्न खर्चों एवं करों का वित्तीय आय–व्यय।

मेहता पन्नालाल ने जो कदम उठाए वे मेवाड़ को आधुनिकता की ओर ले गए। नई सड़कें बनवाई और पुरानी का विस्तार किया गया। उनके आदेश से पहाड़ों पर वनीकरण, पानी की पाइप लाईन की मरम्मत एवं नई पाइप लाईन बिछाई गई। उन्होंने पुलिस दस्तों का आधुनिकीकरण एवं सेटलमेंट विभाग स्थापित कर कृषि एवं ग्रामीण सीमा का विवरण बनवाया। मेवाड़ की न्यायिक व्यवस्था में भी सुधार लाया गया। महाराणा सज्जन सिंह ने अतिरिक्त सिविल कोर्ट एवं क्रिमिनल कोर्ट का उद्घाटन किया जहां आधुनिक निर्णायक समिति की भाँति ही निर्णय लिए जाते थे। नए सरकारी विभागों के साथ ही महदराज सभा, अपील न्यायालय की स्थापना की गयी। उन्होंने प्रथम शैक्षणिक समिति की स्थापना की। प्रथम सरकारी मुद्रण भी स्थापित किया। मेवाड़ के इतिहास में इसे 'स्वर्णिम युग' के नाम से जाना जाएगा।

6.11 नमक–व्यापार समझौता –

दिल्ली दरबार से लौटते ही महाराणा सज्जन सिंह राज्य प्रशासन में गहरी रूचि लेने लगे। 10 मार्च, 1877 को महाराणा ने 'इजलास खास' (प्रिवी कौंसिल) नाम से राज्य परिषद के नये संविधान की घोषणा की। मेहता राय पन्नालाल जो अब तक महकमा खास के मुंशी की भूमिका निभा रहे थे, उन्हें 'इजलास खास' के मुंशी पद पर औपचारिक नियुक्ति दी गयी। राज्य परिषद के पुनर्गठन के पीछे उन्हीं की बुद्धि कार्यरत थी। मेहता तख्त सिंह को हाकिम गिरवा का प्रभार सौंपा गया। कुम्भलगढ़ जिला मारवाड़ राज्य के गोडवाल सीमा से प्रायः मीणा डकैतों द्वारा से आतंकित हो रहा था। मेहता तखत सिंह को इस समस्या पर ध्यान देने तथा कड़ी सुरक्षा का भार सौंपा गया।

14 फरवरी, 1878 को जब महाराणा सज्जन सिंह राजनगर में डेरा डाले हुए थे, जहां वाईसराय परिषद के सदस्य मिस्टर ए. सी. ह्यूम एवं मेवाड़ के पॉलिटिकल एजेंट लेफ्टिनेंट कर्नल इम्पी नमक व्यापार समझौते पर बातचीत करने पहुँचे। महाराणा की ओर से राय मेहता पन्नालाल एवं कविराज श्यामल दास ने समझौते पर विचार विमर्श किया।

समझौते के अनुसार ''देश में नमक के काम पर रोक लगने का विपरीत प्रभाव मेवाड़ पर भी हुआ। मुख्य रूप से बंजारा जाति द्वारा किया जाने वाला नमक व्यापार ठप होने लगा। कारीगर बेरोजगार हो गए, व्यापारियों ने अपना व्यापार खोया एवं कई स्थान पूरी तरह से वीरान हो गए। यह अशांति पूरे देश में फैलने लगी। नमक की बढ़ती कीमतों को देखते हुए महाराणा ने अपनी ओर से अन्य वस्तुओं पर लगने वाली चूंगी हटा दी। लेकिन जिलों से नमक की महंगाई एवं अभाव को लेकर लगातार शिकायतें आती रहीं।''

जुलाई, 1880 को महाराणा सज्जन सिंह ने राय मेहता पन्नालाल को नमक व्यापार के विषय पर बारीकी से छानबीन करने हेतु जिलों में भेजा। एक महीने पश्चात् उन्होंने विवरण प्रस्तुत किया जिसमें नमक के उचित वितरण का सुझाव दिया। एक बार पुनः कवि श्यामलदास ने मेहता पन्नालाल को सुझाव को खारिज करने का असफल प्रयास किया। लेकिन मेहता पन्नालाल के दृढ़ निश्चय और महाराणा के सहयोग से मेवाड़ प्रशासन ने इस उद्देश्य तक पहुँचने हेतु सफल कार्यवाही की।

प्रधान मेहता पन्नालाल के असाधारण प्रयासों को दो अद्भुत मिसालें हैं – न्यायिक व्यवस्था को विशेषाधिकारों से अलग करना एवं प्रथम बार गजट (राज सूचना पत्र) को प्रकाशित करना। महाराणा के प्रमुख

सलाहकार के रूप में उन्होंने यह सब अपने तिहरे दायित्यों – महाराणाओं से निष्ठा, ब्रिटिश राजकीय विभागों से समन्वय एवं राज्य की प्रजा का कल्याण जो उनके हृदय के निकट था, को चतुराई से निभाया। ऐसा करने में उन्हें अदालत की नाराज़गी निर्वासन और भाग्य के उलटफेर को भुगतना पड़ा। यहां तक कि उनकी हत्या का प्रयास भी किया गया। इस प्रकार दूरदर्शी एवं दक्ष प्रशासक, प्रधान मेहता राज पन्नालाल ने अपनी सेवाओं से तीन महाराणाओं का विश्वास जीतने का भरपूर प्रयास किया।

''मेवाड़ के प्रशासनिक कार्यों को दो मुख्य विभागों में बाँटा गया – महद्राज सभा और महकमा खास। महद्राज सभा (अपील न्यायालय/मेवाड़ उच्च न्यायालय) को इजलास खास की जगह स्थापित किया गया। वह न्यायिक विभाग जो स्वयं महाराणा द्वारा कार्यरत था। जबकि विशिष्ट विभाग महकमा खास प्रधान के नेतृत्व रखा गया।'' राय मेहता पन्नालाल को महकमा खास के पहले प्रधान के रूप में नियुक्त किया गया।

महद्राज सभा (मेवाड़ उच्च न्यायालय) परिषद के अठारह सदस्यों में मेहता राय पन्नालाल एवं उनके छोटे भाई मेहता तखत सिंह भी शामिल थे।

6.12 चित्तौड़गढ़ में विशेष दरबार का आयोजन (सन् 1881 ई.) –

''सन् 1881 में महाराणा सज्जन सिंह को GCSI (Knight – Grand Commander of the Order of the Star of India) का खिताब पुरस्कार स्वरूप मिला जिसके लिए गवर्नर जनरल जॉर्ज रोबिनसन्, दी मर्कुएस्स ऑफ रीपोन चित्तौड़गढ़ आए। उनके सम्मान में विशेष पुरस्कार समारोह के लिए दरबार का आयोजन किया गया। एक समिति का गठन हुआ जिसमें

राजनीतिक एजेंट विंगेट, इंजीनियर मरे एवं मेहता तखत सिंह शामिल थे। आयोजन का मुआयना करने महाराणा डेढ़ महीने पहले चित्तौड़गढ़ पहुँचे।''

चित्तौड़ दरबार के समय का दुर्लभ चित्र

(वि.सं. 1938 ई. सन् 1881)

चित्र में सम्मिलित –

मध्य में सिंहासन पर – महाराणा सज्जनसिंह, महाराणा के दाहिने – शाहपुराधीश नाहरसिंह, सरदारगढ़ ठाकुर मनोहरसिंह, कविराजा श्यामलदास, मेवाड़ के प्रधान 'राय' मेहता पन्नालाल, महाराणा के बायें – बेदला राव तखतसिंह, कानोड़ रावत उम्मेदसिंह, पासोली राव रत्नसिंह, आसींद रावत अर्जुनसिंह, चंवर ढुलाते हुए – फूलनाथ और हुक्मा, बायें तरफ पीछे खड़े – तखतसिंह, रतनलाल और उदयराम पानेरी, दाहिने पीछे खड़े – पुरोहित पद्मनाथ एवं प्राणनाथ

6.13 मेहता तखत सिंह द्वारा बागोर के सकत सिंह के 'नकली' पुत्र के मामले की छानबीन –

शेफर्ड ऑफ उदयपुर और मेहता पन्नालाल की स्वजीवनी जैसे संदर्भ ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि ''जब महाराणा फतेह सिंह को महाराणा सज्जन सिंह का उत्तराधिकारी चुना गया तब राजसी महिलाओं ने फतेह सिंह के सामने शर्त रखी कि अगर कोई भी संतान पुत्र ना हुई तो बागोर के महाराज सकत सिंह के वंशज को मेवाड़ सिंहासन पर आसीन करने का अधिकार होगा। सन् 1887 में महाराणा को जानकारी मिली कि सकत सिंह की दूसरी पत्नि गर्भवती है एवं उन्हें उदयपुर से बागोर ले जाया गया है। इस बात पर महाराणा को अविश्वास था। महाराणा ने सोचा कि सकत सिंह उत्तराधिकारी बनाने हेतु अपनी नकली संतान को आगे लाना चाह रहे हैं।''

महाराणा ने सच की छानबीन करने का निर्णय लिया। उन्होंने कर्नल माइल्स से विचार विमर्श किया और गिरवा के हाकिम मेहता तखत सिंह को ए.जी.जी. कर्नल वॉल्टर से बातचीत करने आबू भेजा। मेहता तखत सिंह के अनुरोध पर महाराणा ने सकत सिंह की पत्नी की डॉक्टरी जाँच करवाने का निर्णय लिया जिसका यह तर्क देकर विरोध किया गया कि इस तरह की प्रक्रिया परिवार की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल हैं। उनकी दलील को खारिज कर मिसेस लोनोरगन जो एक प्रमाणित डॉक्टर थीं ने घोषित किया कि सकत सिंह की पत्नि गर्भवती नहीं है।

डॉक्टरी जाँच के तीन हफ्ते बाद सकत सिंह ने घोषित किया कि उनकी पुत्री ने पुत्र को जन्म दिया है। लेकिन महाराणा फतेह सिंह एवं

आवासी कर्नल माइल्स ने स्पष्ट रूप से निर्णय दिया कि सकत सिंह का पुत्र नकली है।

''बागोर के महाराज सकत सिंह का सन् 1889 में निधन हुआ। महाराणा फतेह सिंह ने रियासत को खालसा में जोड़ने का आदेश जारी किया, क्योंकि सकत सिंह का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। सोहन सिंह, जिन्हें महाराणा सज्जन सिंह के समय उनके उद्दण्ड व्यवहार के लिए बागोर रियासत से बेदखल कर दिया गया था ने ब्रिटिश सरकार से फतेह सिंह के आदेश का विरोध किया। सकत सिंह की माता एवं दो विधवाओं ने भी सोहन सिंह को समर्थन करते हुए अपनी याचिका भेजी।''

सोहन सिंह के दिए हुए दस्तावेजों की सच्चाई जानने के लिए दरबार ने एक समिति का गठन किया जिसमें छानबीन करने हेतु बेदला के राव तखत सिंह, ठाकुर मनोहर सिंह, प्रधान मेहता राय पन्नालाल, CIE एवं साहिवाला अर्जुन सिंह शामिल थे। छानबीन करने के पश्चात् समिति ने निर्णय लिया की दस्तावेज नकली थे।

6.14 ड्यूक ऑफ कनौट ने फतेह सागर झील एवं जनहित परियोजनाओं की नींव रखीं –

महाराणा फतेह सिंह के शासन काल में प्रधान मेहता राय पन्नालाल अपने पुत्र फतेहलाल के साथ कई ब्रिटिश उच्चाधिकारियों के उदयपुर भेंट के मेज़बान बने। विभिन्न जनहित परियोजनाओं को बढ़ावा देने में प्रधान की महत्वपूर्ण भूमिका का समर्थन एवं भूरि–भूरि प्रशंसा ड्यूक ऑफ कनौट ने की, जैसे –

- सन् 1885 में वॉयसरॉय लॉर्ड डफ़रीन ने न्यू वॉल्टर ज़नाना हॉस्पीटल (वर्तमान में मोती चोहट्टा का आयुर्वेदिक हॉस्पीटल) की नींव रखीं।

- सन् 1889 में राजकुमार ऐल्बर्ट विक्टर ने अपनी दादी एम्प्रेस विक्टोरिया के संगमरमर की मूर्ति का अनावरण गुलाब बाग में किया।

- सन् 1889 में वॉयसरॉय लॉर्ड लेंसडोन ने पब्लिक लाइब्रेरी विक्टोरिया हॉल (वर्तमान में सरस्वती सार्वजनिक पुस्तकालय) का उद्घाटन गुलाब बाग में किया।

- सन् 1889 में कनौट के ड्यूक एवं रानी ने कनौट बांध (वर्तमान फतेह सागर झील की पाल) की नींव रखी। प्रधान मेहता राय पन्नालाल के प्रस्ताव पर 'देवाली का तालाब' के बांध (पाल) की ऊँचाई 20 फीट से बढ़ा दी गई। नींव का पत्थर कनौट के ड्यूक द्वारा रखा गया। बांध (पाल) का नामकरण 'कनौट बांध' हुआ एवं झील का नया नाम 'फतेह सागर झील' रखा गया।

- पिछोला और स्वरूप सागर को फतेह सागर से जोड़ने वाली नहर का सुझाव इंजीनियर थोमसन् ने दिया जो कि पाल की ऊँचाई 20 फीट बढ़ाने की वजह से सम्भव हो पाया। इसे प्रारम्भ में थोमसन् कैनाल के नाम से जाना जाता था।

''सन् 1889 में कनौट के ड्यूक ने उदयपुर यात्रा की। प्रधान मेहता राय पन्नालाल के पुत्र मेहता फतेहलाल, अंग्रेजी भाषा के सुवक्ता होने के कारण प्रतिष्ठित एवं विशिष्ट अतिथियों की आवभगत हेतु प्रोटोकॉल

अफसर के तौर पर नियुक्त किए गए। बेहतरीन आयोजनों के अंतर्गत 'गणगौर की सवारी' का भी आयोजन हुआ।''

6.15 मेवाड़ प्रशासन में सहीवाला अर्जुन सिंह की भूमिका –

1857 के विप्लव के समय की घटनाओं का वर्णन तत्कालीन मेवाड़ राज्य के प्रधान अधिकारी सहीवाला अर्जुन सिंह के जीवन चरित्र[27] में लिखा है कि कैप्टन शावर्स ने नीमच, निम्बाहेड़ा व मन्दसौर को केन्द्र बनाकर मुगल शाहजादा फिरोज एवं उसके साथ मिलकर लड़ने वाले स्थानीय जागीरदारों के बढ़ते प्रभाव से ब्रिटिश सत्ता खतरे में थी, तब शावर्स ने मेवाड़ महाराणा के आदेश पर सहीवाला अर्जुनसिंह, बेदला का रावत बख्तसिंह को सेना व तोपों के साथ निम्बाहेड़ा, नीमच की तरफ भेजा। महाराणा ने चाचा अचलदास व पंचौली हरनाथ जी से सलाह लेकर उदयपुर से एक कम्पनी, दो तोपें, पचास सवार लेकर पचौली दिलीप सिंह व घोटावाला चतुर्भुज को भेजा और हुक्म दिया कि सादड़ी के आस–पास तैनात रहना तथा बागियों के विरूद्ध अंग्रेजों को मदद देना। इस हेतु सादड़ी, कान्हौड़, बांसी, बेगूं, भदेसर, अठाणा, सरवाण्या, दारू, बीनोता और उस जिले के सरदारों को पत्र लिखकर बुलवाया गया। सादड़ी से सिंघवी बहादुरमल जी पहुँचे। अठाणा रावत दीपसिंह व दारू का रावत भवानीसिंह भी जा पहुँचे। चित्तौड़ से सवाईसिंह जी भी सम्मिलित हो गया। सम्वत् 1914 आश्विन कृष्णा एक के दिन उधर नीमच से फौज रवाना हुई, जिसमें जनरल जेक्सन, कर्नल शोर (शावर्स कैप्टन) एवं अन्य ब्रिटिश अधिकारी बागियों के विरूद्ध दोनों ही तरफ से निम्बाहेड़ा की सुरक्षा हेतु गोलन्दाजी करने लगे। एक तरफ शाहजादा फिरोज व निम्बाहेड़ा का वृद्ध तारा पटले इत्यादि थे, दूसरी तरफ ब्रिटिश सेना एवं उसके साथ मेवाड़ की सेना संयुक्त थी, फलतः निम्बाहेड़ा से बागी भाग

निकले, परन्तु इस घटना में तारा पटेल को बागियों का साथ देने व विप्लव में ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध क्रान्ति में सहयोग देने की उसे सजा दी।[28]

सहीवाला का जीवन चरित्र पृष्ठ 63 पर लिखा है कि कैप्टन शावर्स ने 1857 की बगावत की घटना के समय मुगल शाहजादा फिरोज व निम्बाहेड़ा के बक्शी को भगा देने का आरोप निम्बाहेड़ा के पटेल ताराचन्द पर लगाकर उसे तोप से उड़ा देने का आदेश दिया।[29] मिसिंग चैप्टर ऑफ म्यूटिनी नामक पुस्तक में स्वयं कैप्टन शावर्स ने निम्बाहेड़ा के पटेल को परेड़ ग्राउण्ड में तोप के सम्मुख खड़ा कर उड़ा दिया। यह कार्य उसने शेष बागियों में भय पैदा करने की रोमन कार्यवाही की। यद्यपि सहीवाला अर्जुनसिंह ने इस विभत्स्य घटना (तारा पटेल को अपराधी ठहराकर तोप से उसका वध करने के आदेश) को रोकने का पूरा प्रयत्न किया, इसके साथ मेहता फूलचन्द, सवाईसिंह तथा कानोड़ के पन्ना लाल बाबेल ने भी कप्तान शावर्स को ऐसा गम्भीर अपराधी नहीं मानकर उसके मृत्युदण्ड के आदेश को रोकने की सिफारिश की किन्तु ब्रिटिश अधिकारी शावर्स ने किसी की बात को नहीं सुन अन्त में उसे निश्चित दिवस पर निम्बाहेड़ा के ब्रिटिश सैन्य परेड ग्राउण्ड में तोप से बांधकर उड़ा दिया। ब्रिटिश सरकार की तरफ से निम्बाहेड़ा को बागियों से मुक्त कराने की विजय से प्रसन्न होकर शावर्स की तरफ से महता फूलचन्द को 200 रूपये व पैदलों को 10 रू., सवारों को 15 रूपये, कामदारों को 50 रू. से 150 रू. तक इनाम दिया।[30]

150 रू. महता जी के कामदार कुन्दनलाल जी पंचोली चित्तौड़ वाले को, 150 रू. सहीवाला अर्जुनसिंह के कामदार खुशहाल सिंह को, 50 रू. रोशन लाल नायब को, 100 रू. सहीवाला अर्जुनसिंह के हथनी के महावत को तथा 50 रू. महता जी की हथनी गुमानी के महावत इलाबक्श को दिये गए। बेगूं रावत को 200 रू. कलदार जमलावदा के पटेल रामसिंह को 1200 रू.

कलदार, केसूंदा के पटेल केरिंग को 1200 रू. व केसूंदा के हाकिम पण्डित जादवराव को 1200 रू. सरकार से मिले व दोनों पटेलों को महाराणा मेवाड़ से कड़े व सरोपाव, बारह बीघा जमीन मिली।[31]

6.16 1857 का जननायक ताराचन्द पटेल[32] एवं तात्याटोपे की मेवाड़ ब्रिटिश सत्ता के विरोधी गतिविधियाँ –

मन्दसौर में फकीर के वेश में निर्वासित शाहजादे फिरोज के पक्षधर प्रसिद्ध क्रान्तिकारी तात्याटोपे का भी मन्दसौर से सम्बन्ध है। वह इस प्रकार कि जब तात्याटोपे व उनके साथी राव साहब ने गुजरात से आगे बढ़कर बांसवाड़ा छोटी राजपूत स्टेट में प्रवेश किया। बाँसवाड़े से दोनों नेता मेवाड़ की ओर बढ़े। मेवाड़ सलूम्बर के सामन्त के नेता को कुछ रसद दी और तात्या अपने पहले के कार्यक्षेत्र भीलवाड़े में से होता हुआ प्रतापगढ़ पहुँचा। यह भी एक राजपूत रियासत थी; शत्रु भी उसका पीछा बराबर कर रहे थे। शत्रु की फौज ने उसे हर तरफ से घेर रखा था। प्रतापगढ़ से वह मन्दसौर भागा और मन्दसौर से जीरापुर होता हुआ नाहरगढ़ गया। यह 1859 का साल था। नाहरगढ़[33] में वह अपने नये सहायक व मित्र मानसिंह से मिला। विपत्तियों ने ही केवल इन दो अपरिचित व्यक्तियों को एक साथ मिलाया था, परन्तु भाग्य में कुछ और ही लिखा था। तात्याटोपे का यही मानसिंह मित्र तात्याटोपे की मृत्यु का कारण बना। वह इस प्रकार कि सन् 1859 के अप्रेल मास में मानसिंह[34] ने तात्याटोपे को धोखा दिया। जनरल बेपियर ने मेजर मीड़ को पारो के जंगलों को साफ करके सड़क बनाने का काम सुपुर्द किया था। मानसिंह ने 2 अप्रेल को मीड़ के शिविर में आत्मसमर्पण किया और अपने नये अंग्रेज मित्रों को प्रसन्न करने के लिए उसने अपने मित्र तात्याटोपे को पकड़वा देने का आश्वासन दिया। वह जंगल के गुप्त कोनों से परिचित था। एक छोटा–सा सैन्यदल मानसिंह के सुपुर्द किया गया। मानसिंह के आदेश से

सिपाही एक छोटे–से गड्ढ़े में छिप गये जहां वह और तात्याटोपे अक्सर जाया करते थे। वह तात्या को वहां ले आया। आधी रात तक बातचीत करता रहा। अन्त में जब तात्या सो गया तो मानसिंह अपने सिपाहियों को ले आया। दो रसोइये जो तात्या के साथ वे घबड़ा कर भाग गये। तात्याटोपे पकड़ लिया गया। उसके हाथ स्वयं मानसिंह ने पकड़ रखे थे। 15 अप्रेल की तात्या के विरूद्ध सैनिक न्यायालय में देशद्रोह का मुकदमा चलाया गया। परिणाम पहले से निश्चित था। तात्या को शिवपुरी[35] के समीप फाँसी दे दी गई। मन्दसौर से सम्बन्धित दोनों वीरों का अन्त इस प्रकार हुआ।

1857 की क्रान्ति जिसको ब्रिटिश अधिकारियों ने एक सैनिक विप्लव कहा है, परन्तु स्वयं ब्रिटिश प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा लिखित पुस्तकों, पत्राचारों और तत्कालीन पुलिस और सैन्य अदालतों तथा खुफिया रिकॉर्डस् के साथ भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार में उपलब्ध प्रामाणिक दस्तावेजों के साथ–साथ मेवाड़, मालवा और मध्य भारत तथा गुजरात स्थित बड़ौदा के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि यह भारत का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम था।

पाद टिप्पणियाँ –

1) अ) गोपाल वल्लभ व्यास, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध ''18वीं व 19वीं सदी में मेवाड़ के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन के कतिपय पक्ष'', पृष्ठ 153–156 एवं कायस्थ वर्ग, पृष्ठ 157 से 158, प्रशासनिक घरानों में कोठारी, मेहता, गाँधी, गलूण्डया व बापना का प्रमुख स्थान था।

ब) सोसियल लाईफ इन मेडिवल इण्डिया, जी. एन. शर्मा पृष्ठ 90 व कोठारी बलवन्त सिंह का जीवन चरित्र, पृष्ठ 34–36 व 135–136

2) अ) गोपाल वल्लभ व्यास, उपरोक्त, वही, पृष्ठ 157–160

ब) बक्शीखाना रिकॉर्ड, पट्टा बहियाँ वि.सं. 1901–1904, 1908–1919, 1926, 1933–35 बस्ता 1 से 3 एवं 6 वि.सं. 1930 री टिप्पणी रोजानारी

3) मेवाड़ के प्रसिद्ध घराने – उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग 2, पृष्ठ 997–99, 1005–6, 1010–11, 1014–15, 1020–21, 1030–32

4) सहीवाला भाग 1, पृ. 61, कोठारी बलवन्त सिंह जीवन चरित्र, पृष्ठ 3, वीर विनोद पृष्ठ 939, 1561–62, 1699, 1708–09, 1933–34, 1943, 1950–53, 2220–21, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग द्वितीय, पृष्ठ 612, 651–59, 673, 748

5) अ) बक्शीखाना रिकॉर्ड, पट्टा बहियाँ, पट्टा बहियाँ, वि.सं. 1901–1904, 1908–1919, 1926, 1933–35, बस्ता संख्या 1 से 3 तक, गोपाल वल्लभ व्यास, उपरोक्त, वही, (अ.शो.प्र.) पृष्ठ 155–162

ब) उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग 2, पृष्ठ 998–999 व 1701 देखें अठारहवीं उन्नीसवीं शताब्दी के सामाजिक, आर्थिक जीवन के कतिपय पक्ष (पी.एच.डी. शोध अप्रकाशित, डॉ. गोपाल वल्लभ व्यास, पृष्ठ 139–40 व 1028–29)

6) औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग द्वितीय, पृष्ठ 787–88, 814 एवं श्यामलदास वीर विनोद, भाग 2, पृष्ठ 1714

7) मेवाड़ मराठा सम्बन्ध, अ. प्र. शोध प्रबन्ध (डॉ. गिरीशनाथ माथुर), पृष्ठ 40–46

8) उपरोक्त, वही, पृष्ठ 54–60

9) औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग प्रथम, पृष्ठ 956 से 963

10) औझा, उपरोक्त, वही, भाग प्रथम, माधव राव की उदयपुर पर चढ़ाई व ठाकुर अमरचन्द बड़वा का प्रधान बनना, पृष्ठ 963 से 972

11) वीर विनोद, भाग द्वितीय, पृष्ठ 1550, टॉड राजस्थान, जिल्द 1, पृष्ठ 500–503 एवं औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग प्रथम, पृष्ठ 958 से 960

12) वीर विनोद, उपरोक्त वही भाग द्वितीय, पृष्ठ 1691

13) महाराणा अरिसिंह का पत्र शाह मोतीराम बोल्या के नाम वि.सं. 1822 वर्षे फागुण वदी 12 गुरूवार इस पत्र में मेवाड़ पर मराठा आक्रमणों का मुकाबला करने हेतु नियुक्त ठाकुर अमरचन्द बड़वा के आदेशानुसार सैन्य ठिकानों का प्रबन्ध करने के निर्देश हैं।

14) महाराजाधिराज महाराणा अरिसिंह जी आदेशातु गोढ़वाड़ के समस्त ठाकुरों को निर्देशित पत्र वि.सं. 1823 वर्षे पोष सुदी 12 रविवार का इस पत्र में भी प्रधानमंत्री अमरचन्द बड़वा के नेतृत्व में और उसके कहे अनुसार मराठों के मेवाड़ आक्रमण का मुकाबला करने हेतु गोढ़वाड़ क्षेत्र की रक्षा करने की आज्ञा दी गई है।

15) पत्र अरिसिंह के द्वारा प्रेषित – शाह मोजीराम बोल्या के नाम का वि.सं. 1823 वर्षे चेत सुदी 10 बुद्धे मराठों के साथ सैन्य संघर्ष में सेना को वेतन भुगतान हेतु प्रेषित रूपये 5000 का उल्लेख हुआ है। अमरचन्द बड़वा की सैन्य व प्रशासनिक दक्षता का यह पत्र व ऐसे बोलिया घराने से प्राप्त (येवन्ती कुमार बोल्या के संग्रह से) अप्रकाशित बही में पढ़ने को मिले हैं।

16) टॉड; रा; जि. 1, पृ. 528। वीर विनोद; भाग 2, प्रकरण 15, पृ. 126

17) वीर विनोद; भाग 2, प्रकरण 15

18) टॉड; रा; जि. 1, पृ. 529–30

19) वही;जि. 1, पृ. 528–29

20) टॉड; रा; जि. 1, पृ. 531

21) वही; टॉड; रा; जि. 1, पृ. 530–31। वीर विनोद; भाग 2, प्रकरण 15, ख्यात।

22) रा; जि. 1, पृ. 531–32।

23) उद्धृत, पं. गौरीशंकर हीराचन्द औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, पृष्ठ संख्या 1001–1007

24) 'रङ्गड़' राजपूतों के लिए अपमान सूचक शब्द है।

25) टॉ; रा; जि. 1, पृष्ठ 532–35

26) टॉ; रा; जि. 1, पृष्ठ 535–41। वीर विनोद; भाग 2, प्रकरण 15

27) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, पृ. 64–68

28) शावर्स, ए मिसिंग चैप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी, पृ. 128–29

29) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, पृ. 57–58

30) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, पृ. 62–64

31) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, पृ. 65–67

32) पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट वो. 51, सन् 1857, पृष्ठ 473–479, सेन्ट्रल रिकॉर्ड, ऑफिस बड़ौदा

33) शावर्स, ए मिसिंग चैप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी, पृ. 119–32

34) उपरोक्त, ए मिसिंग चैप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी, देखें वही, पृ. 114–16

35) शावर्स, ए मिसिंग चैप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी, देखें वही, पृ. 133–144

परिशिष्ट 1 – मेवाड़ के प्रधान बोलिया घराने का अभिलेख

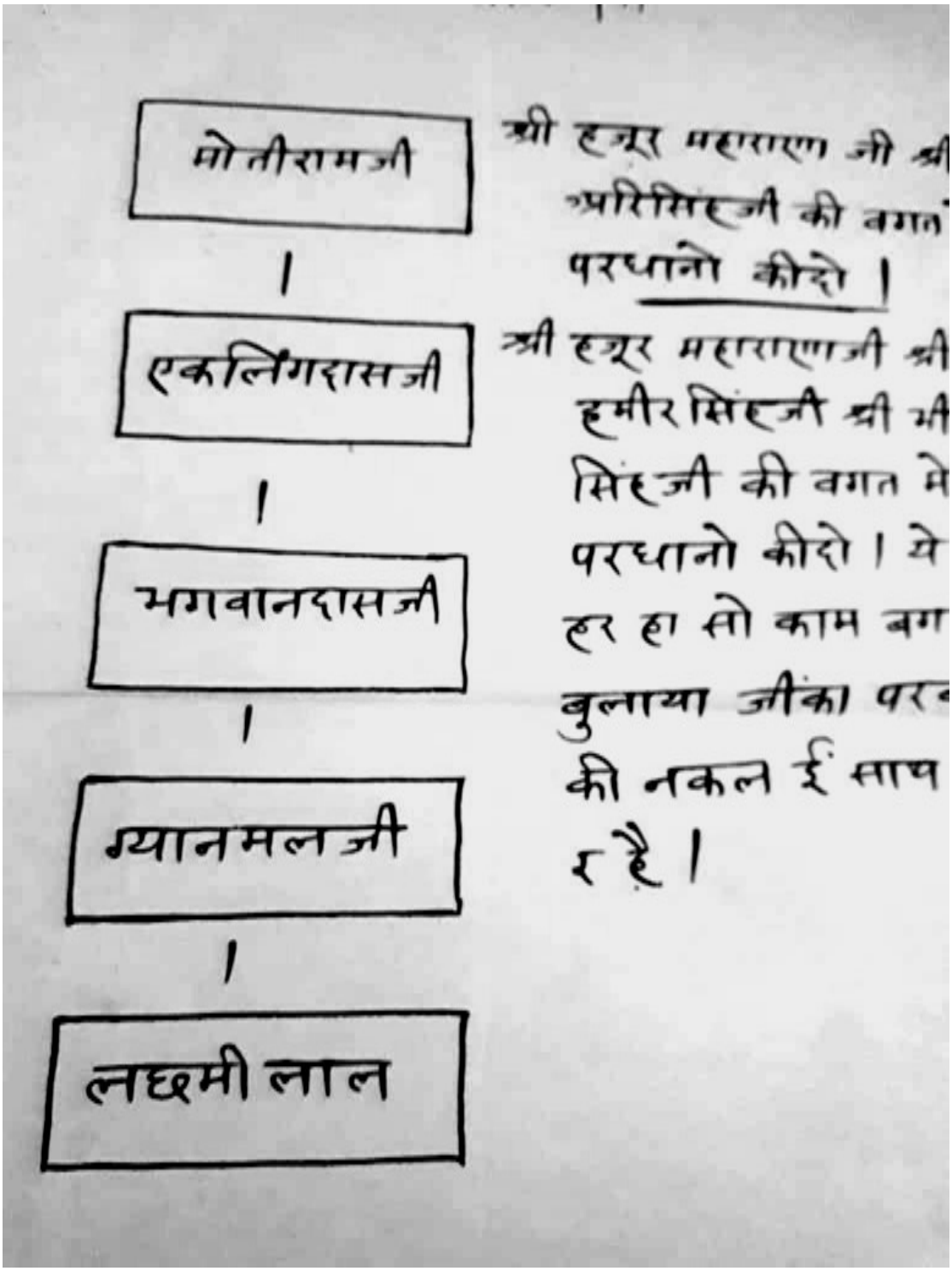

परिशिष्ट 2 – महाराणा अरिसिंह का शाह मोतीराम बोलिया के नाम ओदश पत्र (मराठा आक्रमणों से मेवाड़ की रक्षार्थ)

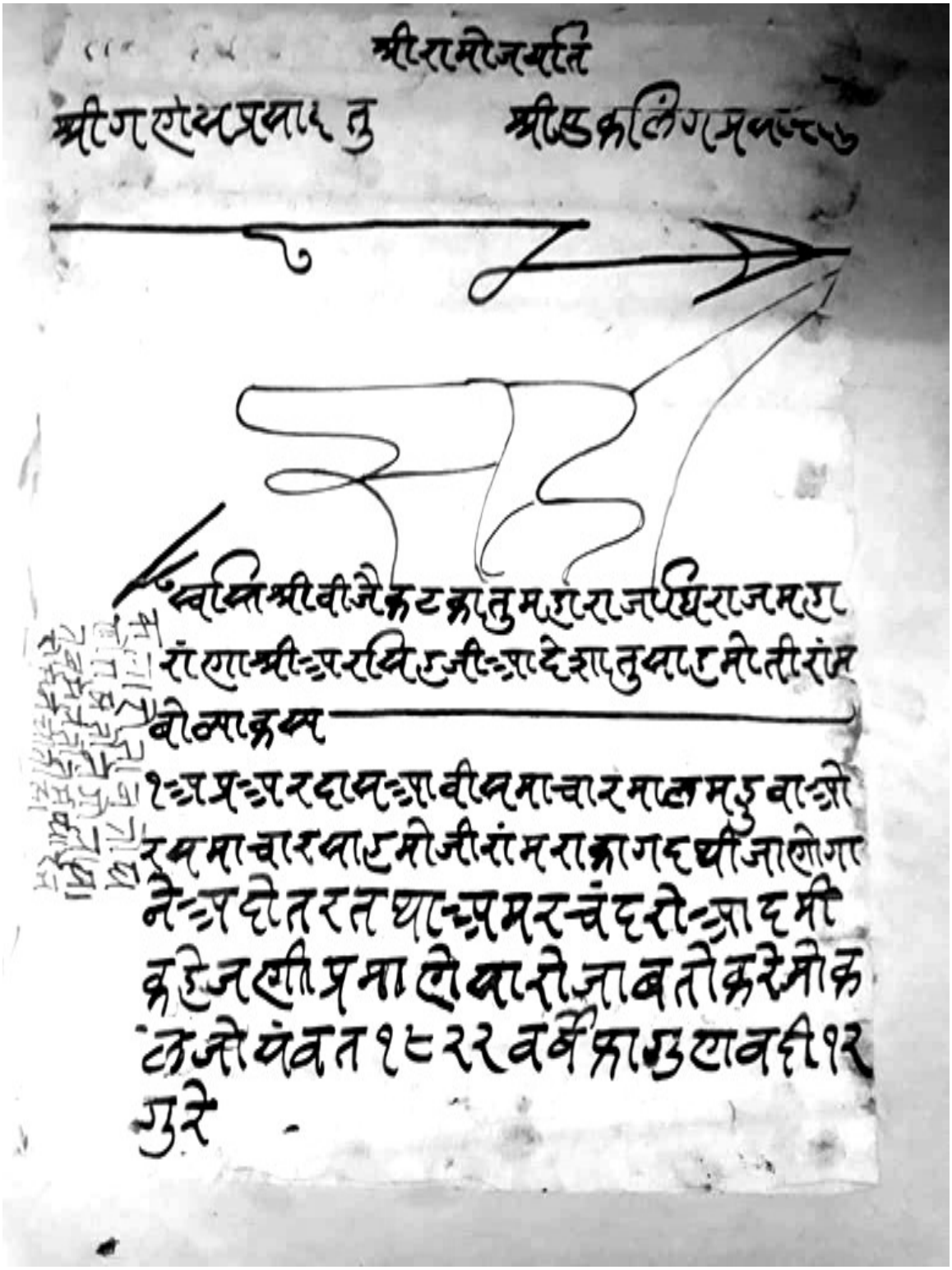

परिशिष्ट 3 (अ) – महाराणा मेवाड़ चेरिटेबल ट्रस्ट, सिटी पैलेस, उदयपुर से प्राप्त वंशावली

परिशिष्ट 3 (ब) – मेवाड़ का राजवंश एवं राजघरानों की तालिका

महाराणा संग्रामसिंह से मेवाड़ महाराणा भूपालसिंह जी तक का वंशवृक्ष एवं राजघरानों की तालिका

महाराणा संग्रामसिंह (द्वितीय)-A

मेवाड़ महाराणा

B-जगतसिंह (द्वि.)
C-प्रतापसिंह (द्वि.)(ठा अमरचन्द बड़वा)
|
D-राजसिंह (द्वि.)
E-अरिसिंह (द्वि.)
F-हमीरसिंह (द्वि.)
G-भीमसिंह
|
H-जवानसिंह
I-सरदारसिंह
|
J-स्वरूपसिंह
K-शम्भूसिंह
L-सज्जनसिंह
M-फतहसिंह
N-भूपालसिंह
O-भगवतसिंह

- महेन्द्रसिंह
- अरविन्दसिंह

बागौर

नाथसिंह
बागोर की जागीर

मेवाड़ के प्रधानमंत्री

Table-II
भीमसिंह
शिओदानसिंह

- सरदारसिंह (स्वरूपसिंह जी सरदारसिंह जी के गोद गये)
- शेरसिंह
- स्वरूपसिंह

म.अर्जुनसिंह शिवरती मेवाड़ राज्य के संरक्षक

बागोर से गोद आये
बागोर से गोद आये
शिवरती से गोद आये

करजाली

बाघसिंह
करजाली की जागीर

अनूपसिंह
सूरतसिंह

- हिम्मतसिंह
- म. चतुरसिंह बावजी

शिवरती

अर्जुनसिंह
शिवरती की जागीर

Table-II

शिवरती परिवार
अर्जुनसिंह

- शिओदानसिंह
- बहादुरसिंह (धनेरिया)

परिशिष्ट 3 (स) – मेवाड़ का राजवंश एवं राजघरानों की तालिका

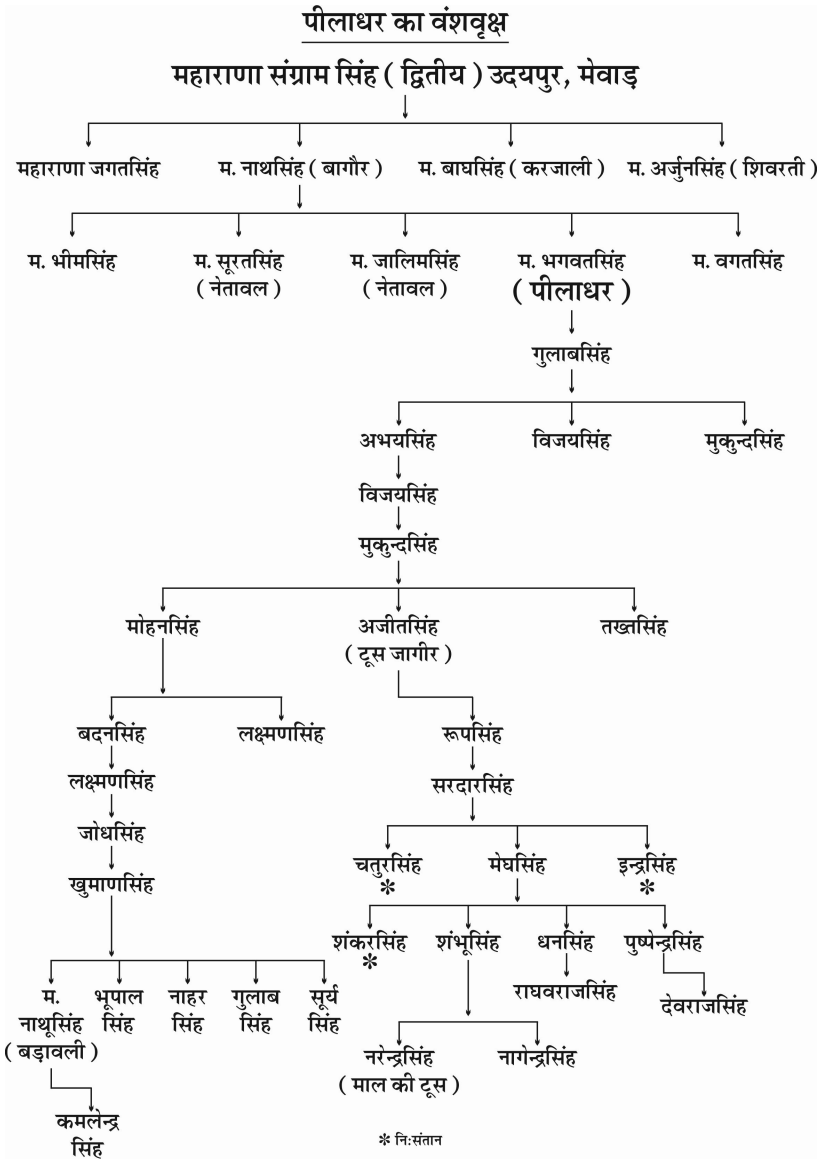

1) लेखक कर्नल वॉल्टर (मेवाड़ रेजीडेन्ट) :– बायोग्राफिकल स्केचीज ऑफ द मेवाड़, उद्धृत – उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग 1, गौ.ही. ओझा, पृ. 969

2) लेखक सी. एस. बेले (सन् 1908 ई.) :– द रूलिंग प्रिंसेस, चीफ्स एण्ड लिडिंग परसोनेजेज़ इन राजपूताना एण्ड अजमेर। यह पुस्तक गर्वनर जनरल के आदेश से ए.जी.जी. जी.एच. ट्रेवरर्स रिपोर्ट (सन् 1879) पर आधारित।

3) **सन्दर्भ** :– डॉ. जी. एल. मेनारिया निदेशक, तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान एवं डॉ. अजातशत्रु सिंह शिवरती निदेशक, शिवरती शोध संस्थान, उदयपुर से प्राप्त उपरोक्त वंशावली।

अध्याय सप्तम

20वीं सदी में मेवाड़ का शासन प्रबन्धन (मेवाड़–ब्रिटिश सम्बन्ध)

अध्याय सप्तम – 20वीं सदी में मेवाड़ का शासन प्रबन्धन
(मेवाड़–ब्रिटिश सम्बन्ध)

7.0 मामा अमान सिंह का योगदान

7.1 रावली दुकान (राजकीय बैंकिंग व्यवस्था) का मामला

7.2 मेवाड़ रियासत की मुद्रा नीति का विवाद

7.3 मामा अमानसिंह : महाराजकुमार भूपाल सिंह जी के गार्डियन

7.4 भूपाल नोबल्स स्कूल की स्थापना (सन् 1923 ई.)

7.5 माण्डल के तालाब विवाद का प्रकरण

7.6 मेहता रामसिंह का घराना

7.7 पुरोहित राम का घराना

7.8 कोठारी केसरीसिंह का घराना

7.9 महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास का घराना

7.10 महाराणा फतहसिंह कालीन मेवाड़ (1884–1930 ई.)

7.11 वीर भारत सभा तथा केसरीसिंह बारहठ की गतिविधियाँ

7.12 बिजोलिया कृषक आन्दोलन

7.13 लोकसंत बावजी महाराज चतुरसिंह जी : मेवाड़ में सांस्कृतिक पुर्नजागरण

7.14 महाराणा भूपालसिंह (सन् 1930–1956 ई.) : आधुनिक मेवाड़ के स्वप्नदृष्टा

7.15 शिवरती घराना

7.16 मेवाड़ के अंतिम महाराणा भगवत सिंह जी

7.17 संत तुल्य दिव्यपुरुष राजर्षि महाराज श्री शत्रुदमन सिंह शिवरती

पाद टिप्पणियाँ

परिशिष्ट – महाराज शत्रुदमन सिंह हस्तलिखित साधक–संजीवनी के कतिपय पृष्ठ

अध्याय : सप्तम

20वीं सदी में मेवाड़ का शासन प्रबन्धन

(मेवाड़–ब्रिटिश सम्बन्ध)

मेवाड़ शासन प्रबन्धन के सूत्रधार –

7.0 मामा अमान सिंह का योगदान –

मामा अमान सिंह मेवाड़ के तीन महाराणाओं क्रमशः महाराणा सज्जनसिंह, महाराणा फतहसिंह एवं महाराणा भूपाल सिंह के प्रारम्भिक जीवन काल तक मेवाड़ के सैन्य एवं प्रशासनिक सेवाओं में उनका महत्वपूर्ण योगदान था। यहाँ उनके समय की घटनाओं का उल्लेख करना प्रासंगिक है।

7.1 रावली दुकान (राजकीय बैंकिंग व्यवस्था) का मामला –

महाराणा सज्जनसिंह जी के गद्दी पर बिराजने से पहले से ही राज का सारे खरचे का पैसा रावली दुकान से आता था और राज का जो रेवेन्यू वसूल होता था वो भी रावली दुकान में जमा होता था। अधिकारियों और कर्मचारियों की तनख़्वाह दो महीने पर मिलती थी। ये स्थिति महाराणा साहब को अखरने लगी। मामाजी से इस बारे में सलाह की तो मामाजी ने सुझाव दिया कि कोई गोठ असाधारण तौर से करने का आदेश फरमा दिया जाए। महाराणा ने कुछ ही दिनों में किसी खुशी में गोठ का आयोजन करने का ऐलान करवा दिया। इस पर रावली दुकान से एतराज हुआ कि यह बजट में नहीं है। इस पर आदेश हुआ कि महाराणा साहब के हुक्म की तामील हो, बजट की बात बाद में देखेंगे। लिहाजा गोठ का आयोजन हुआ। गोठ के बाद हुक्म हुआ कि यह व्यवस्था कब से चल रही

है इसका हिसाब पेश किया जाए। रावली दुकान वालों ने जवाब दिया कि ये व्यवस्था बहुत पुरानी है और इसका रिकॉर्ड कई गाड़ियों में आयेगा। महाराणा साहब ने आदेश फरमाया कि सब रिकॉर्ड को महलों में पेश किया जाए और मामाजी अमानसिंह जी, कविराजा श्यामलदास जी एवं अन्य एक सरदारी, तीन जनों की कमेटी बनाई और हुक्म दिया कि रावली दुकान के हिसाब की जाँच करके रिपोर्ट पेश करें। जाँच में पाया गया कि जो रकम रावली दुकान से रियासत के खर्चे के लिये दी जाती थी उस पर ब्याज लगाया जाता था और जो रकम रियासत के रेवेन्यू की रावली दुकान में जमा होती थी उस पर कोई ब्याज नहीं जोड़ा जाता था। पूरे हिसाब की जाँच करने पर ये मालूम हुआ कि रियासत की बहुत बड़ी रकम रावली दुकान से निकलती है जो किसी तरह भी वसूल नहीं हो सकती है। इस सूरत में रावली दूकान को जब्त कर लिया गया और सम्बन्धित मेहता साहब की जागीर जब्त कर ली गई और उनकी हवेली को हाथियों से तुड़वाया गया और उस परिवार को रियासत से निकाल दिया गया और हवेली की जगह पर एक शिलालेख लगाकर उस पर लिखाया गया कि यह मेहता परिवार हरामखोर है। इस परिवार के किसी भी सदस्य को रियासत में नौकरी नहीं दी जाएगी। मेरे वंश में कोई इस आदेश का उल्लंघन करेगा तो उसको चित्तौड़ मारने तथा गऊवध करने का पाप लगेगा।

7.2 मेवाड़ रियासत की मुद्रा नीति का विवाद –

मेवाड़ रियासत की अपनी ही टकसाल थी जिसमें रियासत के सिक्के तैयार होते थे। महाराणा सज्जनसिंह जी ने मामाजी अमानसिंह जी को जब वे सेक्रेट्री थे तो आदेश दिया कि महाराणा सरूपसिंह जी की यादगार में एक नया सिक्का जारी किया जाए जिसका नाम सरूपसाही

रूपया हो इसकी कीमत 16 आने के बजाय 17 आने रखी जाए और उसमें लेख उर्दू की बजाय नागरीलिपि में हो। उसके एक तरफ चित्रकूट उदयपुर और दूसरी तरफ दोस्ती लंदन लिखा हुआ हो। मामाजी ने महाराणा साहब के आदेशानुसार नये सिक्के का डिजाइन बनवाकर महाराणा साहब को नजर किया और महाराणा साहब की मंजूरी के बाद डाई बनवाकर नमूने के कुछ सिक्के तैयार करवा के महाराणा साहब को नजर किये और महाराणा साहब ने उन सिक्कों को प्रचलन के लिये तैयार करवाना शुरू कर दिया। ये सिक्के जब जारी हुए तो मेवाड़ के अंग्रेज रेजिडेन्ट ने इस पर अंकित ''दोस्ती लंदन'' पर एतराज किया। इस पर मामाजी ने रेजिडेन्ट को मेवाड़ की सन् 1818 की संधि का हवाला देते हुए दोस्ती लंदन को उचित बताया जिस पर रेजिडेन्ट सहमत नहीं हुआ। इस पर मामला ए.जी.जी. के पास गया, लेकिन उसने भी रेजिडेन्ट की राय के साथ अपनी सहमति जताई परन्तु मामाजी उसकी राय से सहमत नहीं हुए और मामला दिल्ली वायसराय के पास गया। वायसराय ने भी रेजिडेन्ट और ए.जी.जी. की राय का अनुमोदन ही किया और लिखा कि ''दोस्ती लंदन'' के लेख पर गवर्नमेन्ट को आपत्ति है, इसीलिये सिक्के का प्रचलन बंद कर दिया जाए। मामाजी वायसराय की राय से सहमत नहीं हुए उन्होंने इंग्लैण्ड की प्रिविकौंसिल में अपील कर दी। प्रिवीकौंसिल ने मामाजी की दलीलों को मानते हुए दोस्ती लंदन को उचित मान लिया और सिक्कों को जारी रखने के आदेश दे दिये। मामाजी उचित बात के लिये संघर्ष करने के लिए हमेशा तैयार रहते थे और अपने चरित्रबल, इष्टबल और पूर्ण निष्ठा के कारण हमेशा अपने उद्देश्य में सफल रहते थे।

7.3 मामा अमानसिंह : महाराजकुमार भूपाल सिंह जी के गार्डियन –

मामाजी अमानसिंह जी ने मेवाड़ की फौज के कमाण्डर इन चीफ के पद से एक जनवरी 1919 के दिन इस्तीफा दे दिया। इसके पश्चात् महाराणा फतहसिंह जी ने मामाजी को महाराज कुँवर श्री भूपालसिंह जी का गार्डियन नियुक्त किया। मामाजी ने महाराजकुमार को राज धर्म की शिक्षा दी और उनको एक आधुनिक प्रगतिशील राजा के रूप में तैयार करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। उनको गीता और रामायण के ज्ञान के गहन भेद समझाये और उन पर आचरण करने की शिक्षा दी।

महाराजकुमार श्री भूपालसिंह जी को महाराणा श्री फतहसिंह जी ने अपनी 75 वर्ष की आयु हो जाने पर 8 अगस्त 1922 को आदेश पारित कर राज का रिजेन्ट बनाकर पूरे इख्तियार प्रदान कर दिये और मामाजी अमानसिंह जी को उनका सलाहकार (एडवाइजर) नियुक्त कर दिया। मामाजी के मार्ग दर्शन में महाराजकुमार राजपाट सुचारू रूप से चलाने लगे।

7.4 भूपाल नोबल्स स्कूल की स्थापना (सन् 1923 ई.) –

महाराजकुमार साहब को रिजेन्सी में सम्पूर्ण अधिकार प्राप्त हो गये थे, इसीलिए राजपूत नोबल्स स्कूल कायम करने का प्रस्ताव रखा जिसकी महाराजकुमार साहब ने सराहना की और फरमाया कि ये काम तो शीघ्रातिशीघ्र करो। मामाजी तो पहले ही इच्छुक थे और उनके जीवन का ध्येय ही राजपूतों में विद्या का प्रचार करना था। अतः उन्होंने अपने सहयोगी ठाकुर राजसिंह जी बेदला आदि को साथ लेकर विद्या प्रचारिणी सभा का गठन करके 2 जनवरी, 1923 को भूपाल नोबल्स हाई स्कूल की नींव रखी और गाँव–गाँव जाकर जागीरदारों के लड़कों को ले पधारे।

मामाजी का ध्येय राजपूत बच्चों को आधुनिक शिक्षा के साथ–साथ उनमें क्षत्रियोचित स्वभाव का विकास करना था। इसके लिए स्कूल में कुश्ती लड़ना, कसरत करना, लाठी, तलवार, छुरी, चाकू, बन्दूक चलाना, जिम्नास्टिक, लेजियम के साथ पीटी और परेड भी करवाई जाती थी। इसके साथ ही हॉकी, फुटबॉल, क्रिकेट, वॉलीबॉल आदि खेलों की अच्छी व्यवस्था थी और फील्ड स्पोर्टस में विभिन्न दौड़ों, ऊँची कूद, लम्बी कूद, गोला फैंकना आदि सिखाये और करवाये जाते थे। दशहरे पर महाराजकुमार और मेवाड़ के सब जागीरदार सरदार पधारते थे और विभिन्न खेलों के टूर्नामेंट के शील्ड कप आदि विजेताओं को महाराजकुमार के हाथ से इनाम बाँटे जाते थे और लाठी तलवार संचालन का प्रदर्शन किया जाता था। यह एक भव्य समारोह था। इस प्रकार मामाजी ने राजपूत लड़कों को संतुलित एवं पूर्ण विकास करने का कार्यक्रम बनाया। यह मामाजी की दूरदृष्टि का परिणाम है।

मामाजी फरमाते थे कि पौधा तो हमने लगा दिया इसके फल आप लोग देखोगे। आज मामाजी के लगाये हुए पौधे ने डीम्ड युनिवर्सिटी का आकार ले लिया है और युनिवर्सिटी भी बन गया।

7.5 माण्डल के तालाब विवाद का प्रकरण –

सन् 1922 ई. में अतिवृष्टि के कारण माण्डल का तालाब टूट गया जिससे B.B. & C.I. रेल्वे की 3 माइल की रेल पटरी बह गई। रेल्वे ने मेवाड़ के प्राईम मिनिस्टर को नोटिस भेजा कि आपके तालाब के टूटने से रेल्वे की सम्पत्ति को नुकसान हुआ है। लिहाजा मेवाड़ रियासत इसकी क्षतिपूर्ति करे। उस समय राय बहादुर मेहता पन्नालाल जी मेवाड़ के प्राईम मिनिस्टर थे। उन्होंने महाराणा फतहसिंह जी साहब को नोटिस के बारे में

जानकारी अर्ज़ की। रिमाइन्डर में लिखा गया कि आप यदि फलां तारीख तक रेल्वे की क्षतिपूर्ति नहीं करेंगे तो रेल्वे इसकी वसूली के लिए वायसराय को लिखेंगे। इसके बाद महाराणा साहब ने मामाजी से एकान्त में सलाह मशविरा किया तो मामाजी ने अर्ज़ किया कि हुजूर ने रेल्वे कम्पनी को रेल्वे लाइन निकालने की इजाजत बक्षी थी। उस समय रेल्वे पर कोई पाबन्दी नहीं लगाकर कम्पनी को खुली छूट दी थी कि वो जहाँ से चाहे रेल्वे लाइन निकाल लें। रेल्वे कम्पनी के सर्वेयर ने सर्वे करके लाइन निकाली थी। उससे पहले ही माण्डल का तालाब मौजूद था। रेल्वे कम्पनी के सर्वेयर को चाहिये था कि रेल्वे लाइन को या तो तालाब के पीछे से निकालते या मौजूदा लाइन में पानी की निकासी का उचित प्रावधान रखते। यह गलती रेल्वे कम्पनी की है। लिहाजा क्षतिपूर्ति रियासत से मांगने का कोई औचित्य नहीं है। रियासत रेल्वे कम्पनी को कोई भुगतान नहीं करेगी। आप चाहे तो वायसराय को लिख सकते हैं। रियासत को इसमें कोई ऐतराज नहीं है।

जब रेल्वे के नोटिस की अवधि समाप्त होने की थी तो मेहता साहब ने महाराणा साहब को अर्ज़ किया कि हुजूर रेल्वे को मुआवज़ा देने का समय समाप्त होने को है सो रकम की मंजूरी का हुक्म बक्षा जाए नहीं तो रेल्वे कम्पनी वायसराय को लिखेगी तो हुजूर की बदनामी होगी। मेहता साहब ने अर्ज़ किया कि अपने तालाब के टूटने से रेल्वे कम्पनी को नुकसान हुआ है, सो मुआवजा तो देना ही पड़ेगा। मेहता साहब ने मजबूरी जताई कि किसी जवाब से मुआवजा टल नहीं सकता है। महाराणा साहब ने नाराज़गी जताते हुए फरमाया कि जनता का पैसा लुटाने के लिये नहीं है। तुम रियासत के दीवान हो और एक कागज़ का जवाब भी नहीं भुगता सकते हो। लिखो मैं जवाब लिखवाता हूँ। महाराणा साहब ने उपरोक्त

वाक्य जो मामाजी ने अर्ज़ किया था मेहता साहब से लिखवा दिया और साथ में यह भी लिखवाया कि रियासत में रेल्वे लाईन निकालने के लिये जो जमीन दी थी उसका कम्पनी से न तो कोई मुआवजा लिया था और न ही कोई रेवेन्यू लिया जाता है। इस पर भी रेल्वे हमसे मुआवजा मांगती है। यह शर्म की बात है उपरोक्त जवाब जाने के बाद रेल्वे कम्पनी चुप हो गई और मुआवजा का मामला समाप्त हो गया।

7.6 मेहता रामसिंह का घराना[1] –

मेवाड़ प्रशासन में योगदान देने वाले प्रमुख घरानों में महाराणा हम्मीर सिंह प्रथम के शासन काल से महाराणा भूपाल सिंह तक मेहता रामसिंह के घराने की भूमिका रही है। यह जाल मेहता के नाम से जाना जाता है। जाल मेहता जालोर के राव मालदेव चौहान का विश्वासपात्र सेवक था। रावल रत्नसिंह के समय सुल्तान अलाउद्दीन ख़िलजी ने चित्तौड़गढ़ पर चढ़ाई कर वह किला एवं मेवाड़ का कितना एक प्रदेश अपने अधीन कर लिया और अपने बड़े शहज़ादे ख़िजरखां को वहां का शासक बनाया। करीब 10 वर्ष तक ख़िजरखां वहां रहा। फिर सुल्तान ने वह प्रदेश सोनगरे मालदेव को दे दिया। सीसोदे का राणा हम्मीर अपना पैतृक राज्य हस्तगत करने का विचारकर मालदेव के अधीनस्थ मेवाड के इलाकों में लूटमार करता रहा। उसे शांत करने के लिए मालदेव ने उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह कर उसे मेवाड़ का कुछ इलाका भी दहेज में दिया और अपने विश्वासपात्र सेवक जाल मेहता को अपनी पुत्री का कामदार बनाकर सीसोदे भेज दिया। तब से मेवाड़ के वर्तमान राजवंश और इस मेहता खानदान के बीच स्वामी–सेवक का सम्बन्ध चला आता है।

महाराणा हम्मीर ने मालदेव के मरने पर उसके पुत्र जेसा से चित्तौड़ का राज्य छीन लिया तभी से मेवाड़ पर गुहिलवंश की सीसोदिया शाखा का अधिकार चला आता है। चित्तौड़ का राज्य प्राप्त करने मे हम्मीर को जाल मेहता से बड़ी सहायता मिली, जिसके उपलक्ष्य में उसने उसे अच्छी जागीर दी और उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाई।

वि.सं. की 19वीं शताब्दी के मध्य में इस वंश में मेहता ऋषभदास हुआ, जो धर्मशील और सहृदय था। उसका पुत्र मेहता रामसिंह हुआ। रामसिंह कार्यदक्ष, नीतिकुशल, बुद्धिमान और स्वामिभक्त था। उसने मेवाड़ में अच्छी ख्याति प्राप्त की और उसके अच्छे गुणों पर रीझकर वि.सं. 1875 श्रावणादि आषाढ़ सुदि 3 (ई.सं. 1819 ता. 25 जून) को महाराणा भीमसिंह ने उसे बदनोर इलाके का अरणा गांव दिया। उक्त महाराणा के राजत्वकाल में मेवाड़ का शासन–प्रबन्ध उसके और अंग्रेजी सरकार दोनों के हाथ में था। प्रत्येक जिले में महाराणा की ओर से तो कामदार और उक्त सरकार की तरफ से चपरासी नियुक्त रहते थे। दोनों मिलकर प्रजा से हासिल उगाहते थे। इस द्वैध–शासन से तंग आकर मेवाड़ की प्रजा ने अंग्रेजी सरकार से शिकायत की तब वि.सं. 1881 (ई.सं. 1828) में मेवाड़ के तत्कालीन पॉलिटिकल एजेन्ट कप्तान कॉब ने शिवदयाल गलूंड्या को, जो उन दिनों मेवाड़ का प्रधान था, शासन की अव्यवस्था का मूल कारण ठहराकर अलग कर दिया और उसके स्थान पर रामसिंह को नियुक्त किया।[2]

मेहता रामसिंह के 5 पुत्र बख़्तावरसिंह, गोविन्दसिंह, ज़ालिमसिंह, इन्द्रसिंह और फ़तहसिंह हुए। तृतीय पुत्र ज़ालिमसिंह को वि.स. 1918 (ई. स. 1861) में महाराणा शंभूसिंह ने अपने पास उदयपुर बुला लिया। ज़ालिमसिंह अपने पिता की विद्यमानता में मेवाड़ के कई जिलों में हाकिम

रहा और अपने राशमी प्रांत में 'माळ' की जमीन में काश्तकारी का सिलसिला जारी रहा एक गांव बसाया, जो उसके नाम पर ज़ालिमपुरा कहलाता है। वि.सं. 1936 (ई.स. 1879) में उसकी मृत्यु हुई। उसके तीन पुत्र अक्षयसिंह, केसरीसिंह और उग्रसिंह हुए।

वि.सं. 1937 (ई.स. 1880) में अक्षयसिंह मांडलगढ़ का हाकिम बना। फिर वि.सं. 1941 (ई.स. 1884) में महाराणा फतहसिंह के राजत्वकाल में वह भीलवाड़ा का हाकिम बना। वि.सं. 1962 (ई.सं. 1905) में उसका देहान्त हुआ। उसके दो पुत्र जीवनसिंह और जसवन्तसिंह हुए। जोधपुर के महाराजा सरदारसिंह के साथ महाराणा (फतहसिंह) की राजकुमारी का विवाह होने पर जसवंतसिंह राजकुमारी का कामदार बनकर जोधपुर भेजा गया। उक्त कुमारी की मृत्यु हो जाने पर महाराणा ने उसे पीछा बुलाकर सहाड़ा जिले का हाकिम किया और इन दिनों वह भीलवाड़े का हाकिम था।

जीवनसिंह समय समय पर कुंभलगढ़, सहाड़ा, कपासन, जहाजपुर, चित्तौड़, आसींद, भीलवाड़ा, मगरा आदि मेवाड़ के अनेक प्रान्तों का हाकिम रहा और जहाँ वह रहा वहाँ की प्रजा उसके अच्छे बरताव से सदा प्रसन्न रही।

उसकी योग्यता एवं प्रबन्ध कुशलता से प्रसन्न होकर महाराणा ने उसे समय समय पर पुरस्कार आदि प्रदान कर उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाई। लगातार 35 साल तक हाकिम का काम करने से उसकी प्रबन्ध सम्बन्धी योग्यता प्रसिद्धि में आई, जिससे मेवाड़ के रेजिडेन्टों तथा अन्य अंग्रेज अफसरों ने भी जिनके साथ रहकर काम करने का उसे सुयोग प्राप्त हुआ है, उसकी योग्यता एवं अनुभव की सराहना की है। उस पर वर्तमान

महाराणा सर भूपालसिंह जी की भी पूर्ण कृपा है और उसको महद्राजसभा का मेम्बर नियुक्त किया।

उसके तीन पुत्र तेजसिंह, मोहनसिंह और चन्द्रसिंह हैं। तेजसिंह ने, जो बी.ए., एल.एल.बी. है, कुछ समय तक सीतापुर में वकालात की। फिर महाराणा फतहसिंह ने वि.सं. 1975 (ई.स. 1918) में उसे कुंभलगढ़ तथा सायरा प्रान्त का हाकिम नियुक्त किया। वि.सं. 1978 (ई.स. 1921) में वह राजकुमार भूपालसिंह जी का प्राइवेट सेक्रेटरी नियुक्त हुआ। वि.सं. 1987 (ई.स. 1930) में उनके महाराणा होने के समय से ही वही उनका प्राइवेट सेक्रेटरी है। उक्त महाराणा ने उसके काम से प्रसन्न होकर उसको सोने का लंगर प्रदान कर सम्मानित किया।

मोहन सिंह प्रयाग विश्वविद्यालय की एम.ए. परीक्षा पास कर कुछ काल तक इलाहाबाद, आगरा व अजमेर में प्रोफेसर रहा। फिर वि.सं. 1978 (ई.स. 1921) में कुंभलगढ़ और सायरे का हाकिम हुआ। मेवाड़ में जब बन्दोबस्त का काम शुरू हुआ उस समय वह सेटलमेन्ट अफसर का मुख्य असिस्टेन्ट नियुक्त हुआ। वि.सं. 1982 (ई.स. 1925) में उसने इंग्लैण्ड जाकर बैरिस्टरी की परीक्षा पास की और लंदन यूनिवर्सिटी से पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त की। राजपूताने में यह पहला व्यक्ति है, जिसने विद्वता सूचक ऐसी उच्च डिग्री प्राप्त की। मेवाड़ में स्काउट संस्था का जन्म उसी के सदुपयोग का फल है। उस समय यह महकमा माल का हाकिम (Revenue officer) था।[3]

7.7 पुरोहित राम का घराना –

पुरोहित राम के पूर्वज अजमेर के सम्राट पृथ्वीराज चौहान के पुरोहित थे। वे पृथ्वीराज के मारे जाने और उसके साम्राज्य पर मुसलमानों

का अधिकार हो जाने के पीछे उसके वंशज हम्मीर तक रणथंभौर के चौहानों के पुरोहित रहे। अलाउद्दीन खिलजी के हाथ में रणथंभौर का राज्य चले जाने पर वहाँ के चौहान जब इटावा, मैनपुरी, गुजरात आदि की तरफ चले गये उस समय उनके पुरोहित भी उनके साथ उधर गये। फिर वि.सं. 1584 (ई.स. 1527) में जब खानवे में बाबर के साथ महाराणा संग्रामसिंह (सांगा) की लड़ाई हुई उस समय राजोर का स्वामी माणिकचन्द चौहान चार हजार सेना सहित महाराणा की सेवा में उपस्थित हुआ। उसके साथ उसका पुरोहित वागीश्वर भी था। माणिकचन्द तथा वागीश्वर दोनों महाराणा की सेना में रहकर बाबर से लड़े और मारे गये। इस सेवा के उपलक्ष्य में माणिकचन्द के वंशजों को मेवाड़ राज्य की ओर से कोठारिये की जागीर मिली। वागीश्वर के वंशज कोठारिये के पुरोहित रहे।[4]

वि.सं. 1593 (ई.स. 1536) में महाराणा रायमल के ज्येष्ठ पुत्र पृथ्वीराज के दासीपुत्र वणवीर ने महाराणा विक्रमादित्य को मार डाला और उसके छोटे भाई उदयसिंह का भी वध करने के लिए धाय पन्ना के, जो खीची जाति की थी, पास गया, परन्तु उसको वणवीर की बुरी नियत की सूचना पहले ही मिल चुकी थी, इसलिए उदयसिंह को वहाँ से निकाल कर उसके बिस्तर पर अपने पुत्र को सुला दिया, जिसे उदयसिंह समझकर वणवीर ने मार डाला। फिर धाय पन्ना उदयसिंह को साथ लेकर कुंभलगढ़ चली गई। वि.सं. 1594 (ई.स. 1537) में वणवीर से अनबन हो जाने के कारण कोठारिये का रावत खान, जो उन दिनों चित्तौड़ में था, कुंभलगढ़ में उदयसिंह से जा मिला और उसने सलूंबर के रावत सांईदास, केलवे के सरदार जागा, बागौर के रावत सांगा आदि सरदारों को बुलाकर वहीं उसका राज्याभिषेक किया। रावत खान पर महाराणा का पूरा विश्वास था, इसलिए उससे ही उसने अपने भरोसे के सेवक लिए, जिनमें वागीश्वर के

पौत्र नरू का द्वितीय पुत्र राम भी था। उसी समय से राम तथा उसके वंशज पुरोहिताई का पुश्तैनी पेशा छोड़कर चित्तौड़ एवं उदयपुर से महाराणाओं की सेवा में रहने लगे और पीछे से महाराणा के दरबार के प्रबन्धकर्ता (Master of Ceremony) रहे।

वि.सं. 1634 मार्गशीर्ष वदि 3 (ई.स. 1577 ता. 29 अक्टूबर) के एक दान–पत्र से विदित है कि उक्त पुरोहित तथा उसके पुत्र भगवान तथा काशी को महाराणा प्रतापसिंह ने ओडा गांव दिया। यह गांव उन्हें महाराणा उदयसिंह ने दिया था, परन्तु गोगून्दा की लड़ाई के समय उसका ताम्रपत्र खो गया, जिससे महाराणा प्रतापसिंह ने उसका नया दानपत्र कर दिया।

7.8 कोठारी केसरीसिंह का घराना[5] –

कोठारी छगनलाल और केसरीसिंह के पूर्वज राजपूत थे, परन्तु पीछे से जैनधर्म ग्रहण करने से उनकी गणना ओसवालामें में हुई। वि.सं. 1902 (ई.स. 1845) में महाराजा सरूपसिंह के समय 'रावली दूकान' (State Bank) कायम हुई और कोठारी केसरीसिंह उसका हाकिम नियुक्त हुआ। वि.सं. 1908 (ई.स. 1851) में वह महकमे 'दाण' (चुंगी) का हाकिम बनाया गया और महाराणा के इष्ट–देव एकलिंगजी के मन्दिर सम्बन्धी प्रबन्ध भी उसी के सुपुर्द हुआ। वह महाराणा का खानगी सलाहकार भी रहा। उसके कामों से प्रसन्न होकर महाराणा ने वि.सं. 1916 में उसे नेतावला गाँव जागीर में दिया और उसकी हवेली पर मेहमान होकर उसका सम्मान बढ़ाया। फिर उसी साल मेहता गोकुलचंद के स्थान पर उसको प्रधान बनाया और बोराव गाँव तथा पैरों में पहनने के सोने के तोड़े प्रदान किये। महाराणा शंभुसिंह की बाल्यावस्था के कारण राज्य प्रबन्ध के लिये मेवाड़ के पोलिटिकल एजेन्ट मेजर टेलर की अध्यक्षता में रीजेन्सी कौन्सिल (पंचसरदारी) कायम

हुई, जिसका एक सदस्य कोठारी केसरीसिंह भी था और माल (Revenue) के काम का निरीक्षण भी उसी के अधीन रहा।

7.9 महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास का घराना –

महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास दधवाड़िया गोत्र का चारण था। उसके पूर्वज रूंण के सांखले राजाओं के 'पोलपात' थे। उनको दधिवाड़ा गांव शासन (उदक) में मिला, जिससे वे दधावड़िये कहलाये। जब सांखलों का राज्य जाता रहा तब वे मेवाड़ के महाराणा की सेवा में जा रहे। उनके साथ उनका पोलपात चारण जैतसिंह भी मेवाड़ में चला गया, जिसको महाराणा ने नाहरमगरे के पास धारता और गोठिपा गांव दिये। जैतसिंह के चार पुत्र महपा, मांडन, देवा और बरसिंह हुए। महाराणा संग्रामसिंह प्रथम ने महपा को ढोकलिया और मांडन को शावनर गाँव दिया, जिससे धारता देवा के और गोठिया बरसिंह के रहा। देवा के वंशज धारता और खेमपुर में है और बरसिंह के गोठिपे में। महपा का पुत्र आसकरण और उसका पुत्र चत्रा हुआ। बादशाह अकबर ने मांडलगढ़ का किला लेकर चित्तौड़ पर हमला किया उस समय ढोकलिया गांव भी शाही खालसे में चला गया, परन्तु कई वर्षों बाद चत्रा दिल्ली गया और जोधपुर के मोटे राजा उदयसिंह के द्वारा अर्ज करवा कर उसने अपना गांव फिर बहाल करा लिया।[6]

वि.सं. 1928 (ई.स. 1871) में महाराणा शंभुसिंह ने श्यामलदास और पुरोहित पद्मनाथ को उदयपुर राज्य का इतिहास लिखने की आज्ञा दी। इन दोनों ने उक्त इतिहास लिखना शुरू किया, परन्तु उक्त महाराणा का देहान्त हो जाने से उसका लिखा जाना रुक गया। महाराणा सज्जनसिंह के समय वह (श्यामलदास) उसका प्रीति–पात्र और मुख्य सलाहकार हुआ।

उक्त महाराणा ने प्रसन्न होकर उसको कविराजा की उपाधि, ताजीम आदि प्रदान कर उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाई और पैरों में सोने के आभूषण पहनने का सम्मान प्रदान किया। महाराणा ने उसको महद्राजसभा का सदस्य भी नियुक्त किया। जब मगरा जिले में भीलों का उपद्रव हुआ उस समय उस (महाराणा) ने अपने मामा महाराज अमानसिंह को ससैन्य उन पर भेजा और उस (श्यामलदास) को भी उसके साथ कर दिया। लड़ाई होने के बाद भील कविराजा श्यामलदास के समझाने और उनका आधा बराड़ (जमीन का महसूल) माफ होने की शर्त पर शांत हो गये।

महाराणा सज्जनसिंह ने विद्या की उन्नति, राज्य का सुधार, सेटलमेन्ट (बन्दोबस्त), जमाबन्दी का प्रबन्ध, महद्राजसभा आदि न्यायालयों की स्थापना, नई नई इमारतें बनाकर शहर की शोभा बढ़ाने और प्रजा को लाभ पहुंचाने आदि अनेक अच्छे काम किये, जिनमें उनका मुख्य सलाहकार वही (श्यामलदास) था। वह विद्यानुरागी, गुणग्राहक, स्पष्टवक्ता, भाषा का कवि, इतिहास का प्रेमी, अपने स्वामी का हितैषी और नेक सलाह देने वाला था। उसकी स्मरण शक्ति इतनी तेज थी कि किसी भी ग्रन्थ से एक बार पढ़ी हुई बात उसको सदा स्मरण रहती थी।

7.10 महाराणा फतहसिंह कालीन मेवाड़ (1884–1930 ई.) –

मेवाड़ में राष्ट्रीय चेतना का उदय –

मेवाड़ सदियों से वीर–प्रसुता भूमि माना जाता रहा है। यहाँ के नागरिकों ने आदर्शों की रक्षा एवं स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये अनेक अवसरों पर अपने प्राण न्योछावर किए। महाराणा प्रताप के त्याग और संघर्ष ने तो न केवल मेवाड़ वरन् समस्त भारत के लिए एक आदर्श स्थापित किया। यहाँ के शासकों ने मध्य युग में तुर्क एवं मुगल बादशाहों से लोहा लिया।

उनके संघर्ष की भावना यहाँ की जनता के लिए सदैव प्रेरणा प्रदान करती रही।[7]

आधुनिक युग में भी मेवाड़ पीछे नहीं रहा। 19वीं सदी के उत्तरार्ध में समस्त भारत में राजनैतिक चेतना की लहर प्रारम्भ हो चुकी थी। आर्य समाज, ब्रह्म समाज, थियोसोफिकल सोसायटी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस आदि की स्थापना शिक्षा का विकास, 1857 की क्रान्ति – ये सभी और इसी प्रकार की अनेक संस्थाओं एवं घटनाओं ने भारतीय नागरिकों को अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जाग्रत किया।[8]

मेवाड़ में राजनैतिक चेतना के उदय और विकास में विशेषतः आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती का महत्वपूर्ण योगदान था।[9] 1883 में उन्होंने उदयपुर की यात्रा की तथा वहाँ 'परोपकारिणी सभा' नामक संस्था की स्थापना की। इस सभा में कुल 23 सदस्य थे जिसमें शाहपुरा के राजाधिराज नाहरसिंह और श्याम जी कृष्ण वर्मा प्रमुख थे इनमें श्याम जी कृष्ण वर्मा आगे चलकर मेवाड़ का प्रधान बने।[10]

मेवाड़ के नागरिकों में क्रान्तिकारी भावनाओं को जाग्रत करने का बहुत कुछ श्रेय श्यामजी कृष्ण वर्मा को है। यह उल्लेखनीय है कि महाराणा फतहसिंह और श्यामजी कृष्ण वर्मा दोनों ही मेवाड़ के आन्तरिक मामलों में ब्रिटिश हस्तक्षेप के कट्टर विरोधी थे। श्याम जी कृष्ण वर्मा की गतिविधियों के प्रति ब्रिटिश सरकार पहले से ही शंकित थी। अतः वहाँ के रेजिडेन्ट और राज्य के ब्रिटिश समर्थक दल ने इस नियुक्ति का तीव्र विरोध किया। इसका परिणाम यह हुआ कि श्यामजी कृष्ण वर्मा का तीव्र विरोध किया। इसका परिणाम यह हुआ कि श्यामजी कृष्ण वर्मा को यह पद त्यागना पड़ा और वे वहाँ से जूनागढ़ के दीवान के पद पर चले

गये।[11] परन्तु 1896 में महाराणा ने पुनः उन्हें मेवाड़ में प्रधान पद पर नियुक्त कर लिया।

ब्रिटिश सरकार को वर्मा की पुनर्नियुक्ति बिलकुल अच्छी नहीं लगी। तदनुसार मेवाड़ के तत्कालीन रैजिडेन्ट कर्नल डब्ल्यू एस. सी. वाइली ने महाराणा पर दबाव डाला कि इस प्रकार के क्रान्तिकारी विचारों वाले व्यक्ति को राजकीय सेवा में नहीं रखा जाय परन्तु महाराणा ने उनके दबाव की पूर्णतः अवहेलना करते हुए श्याम जी कृष्ण वर्मा को मेवाड़ में ही रहने दिया। मेवाड़ में उनकी क्रान्तिकारी कार्यवाहियाँ पूर्ववत चलती रही। परिणामतः ब्रिटिश सरकार श्याम कृष्ण जी वर्मा को सेवामुक्त करने के लिए महाराणा पर निरन्तर दबाव डालती रही। अन्ततोगत्वा श्यामजी कृष्ण वर्मा भारत छोड़कर इंगलैण्ड चले गये। उन्होंने इगलैण्ड में भी क्रान्तिकारी गतिविधियाँ जारी रखी।[13] इंग्लैण्ड में श्यामजी कृष्ण वर्मा ने 'इंडियन सोशियोलोजिस्ट' नामक एक मासिक पत्र प्रकाशित किया और 'इण्डियन होम रूल लीग' की स्थापना की तथा हरबर्ट स्पेन्सर, राणा प्रताप और स्वामी दयानन्द के नाम पर तीन छात्र– वृत्तियाँ प्रारम्भ की। ये उन विद्यार्थियों के लिए थी जो इंग्लैण्ड में अपनी पढ़ाई को आगे जारी रखने के इच्छुक थे और भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति सहानुभूति रखते थे।[14]

इसी प्रकार मध्य मेवाड़ में स्वदेशी आन्दोलन भी प्रारम्भ हो चुका था। स्वामी गोविन्द गिरी के नेतृत्व में प्रारम्भ किये गये इस आन्दोलन में जनता ने विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार किया तथा स्वदेशी वस्त्रों को ही पहनने का निश्चय किया। आन्दोलनकारियों की गतिविधियों से ब्रिटिश सरकार चिन्तित हो उठी और 1908 में ब्रिटिश सरकार ने समस्त देशी

राज्यों को आदेश प्रसारित किये कि वे अपने राज्यों में स्वदेशी आन्दोलन को पूर्ण रूप से कुचल दें।

7.11 वीर भारत सभा तथा केसरीसिंह बारहठ की गतिविधियाँ –

यह सभा भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन की क्रान्तिकारी विचार धारा की एक कड़ी मानी जा सकती है। राजस्थान में इसकी एक गुप्त संगठन के रूप में स्थापना हुई। इस संस्था के प्रमुख कार्यकर्त्ता शाहपुरा के केसरीसिंह बारहठ, जोरावर सिंह बारहट, प्रताप सिंह बारहट, भूपसिंह, खरवा के राव गोपालसिंह, अर्जुनलाल सेठी तथा रामनारायण चौधरी थे।[15] केसरीसिंह बारहठ और राव गोपालसिंह इस संस्था के सक्रिय कार्यकर्ता थे तथा उनका राजघरानों से अच्छा सम्पर्क था। राजस्थान के अनेक शासकों ने भी इस संस्था को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग प्रदान किया।[16] जोधपुर के महाराज जसवन्तसिंह, ईडर के कर्नल प्रताप सिंह, बीकानेर के महाराज गंगासिंह और बड़ोदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड़, वीर भारत सभा के सदस्य थे, कोटा के महाराव उम्मेदसिंह यद्यपि वीर भारत सभा के सदस्य तो नहीं थे परन्तु वह क्रान्तिकारियों से सहानुभूति रखते थे। उपरोक्त सभी शासकों ने अनेकों क्रान्तिकारियों को गुप्त रूप से अपने राज्य में सेवाएं दे रखी थी। महाराणा फतहसिंह को भी इस संस्था के प्रति बड़ी सहानुभूति थी।[17]

वीर भारत सभा के संचालन में केसरीसिंह बारहट तथा उनके परिवार का प्रमुख योगदान था। केसरीसिंह बारहट जाति से चारण थे तथा मेवाड़ के शाहपुरा में उन्हें एक छोटी सी जागीर प्राप्त थीं। अपनी प्रखर बुद्धि और योग्यता से केसरी सिंह शीघ्र ही महाराणा फतहसिंह के सम्पर्क में आ गया तथा महाराणा ने उन्हें अपने सलाहकार के पद पर नियुक्त कर

लिया।[18] यद्यपि 1899 में वे कोटा के महाराजा उम्मेद सिंह के निमन्त्रण पर मेवाड़ छोड़ कर वहाँ चले गये, परन्तु इसके उपरान्त भी उनका महाराणा और मेवाड़ से सम्पर्क यथावत बना रहा था। 1903 में जब महाराणा ब्रिटिश सरकार द्वारा बाध्य किए जाने पर दिल्ली दरबार में सम्मिलित होने के लिए उदयपुर से प्रस्थान कर चुके थे तो केसरी सिंह ने मार्ग में उन्हें 13 दोहे (चेतावनी रा चुंगट्या) लिख कर दिये जिसमें मेवाड़ के पूर्व के महाराणाओं के गौरव और देश प्रेम आदि की अभिव्यक्ति की गई थी। इन दोहों का महाराणा पर यह प्रभाव पड़ा कि वे उस विशाल दरबार में सम्मिलित नहीं हुए और उदयपुर लौट आये।

कोटा में रहते हुए भी केसरीसिंह ने वहां एक गुप्त क्रान्तिकारी संगठन की स्थापना की जिसमें बंगाल सिक्रेट सोसायटीज की भांति युवकों को राष्ट्रीय सेवा के लिये प्रशिक्षित किया जाता था। यह संगठन पूँजीपतियों तथा धनिक वर्ग के व्यक्तियों को लूटने और उनकी हत्या करने तक में भी संकोच नहीं करता था। इस प्रकार की कार्यवाहियों द्वारा प्राप्त धन से यह संगठन शस्त्र आदि खरीदता था। साथ ही साथ उस धन का उपयोग ऐसे साहित्य के प्रकाशन पर भी किया जाता था जिसके माध्यम से जनता में ब्रिटिश विरोधी भावनाएँ जागृत हो तथा राष्ट्रीय आन्दोलन को अधिक से अधिक जनता का समर्थन प्राप्त हो सके।

23 दिसम्बर 1912 को वाइसराय लार्ड हार्डिंग्ज पर प्रसिद्ध क्रान्तिकारी रासबिहारी बोस के नेतृत्व में दिल्ली के चान्दनी चौक में बम फेंका गया, जिसमें हार्डिंग के सिर में हल्की सी चोट लगी तथा उसका एक अंगरक्षक मारा गया।[19] रास बिहारी बोस के साथ इस षडयन्त्र में केसरीसिंह बारहट के भाई जोरावरसिंह तथा भूपसिंह भी सम्मिलित थे।[20]

ब्रिटिश सरकार को केसरीसिंह की क्रान्तिकारी गतिविधियों पर कई वर्षों से सन्देह था अतः उन्हें 21 मार्च 1914 को बिना अभियोग के बन्दी बना लिया गया। सरकार को उनके पास कुछ ऐसे दस्तावेज प्राप्त हुए जिनमें वीर भारत सभा तथा कोटा के गुप्त क्रान्तिकारी संगठन की गतिविधियों का विवरण था।[21] अतः सरकार द्वारा केसरीसिंह के समस्त परिवार के सदस्यों के नाम वारेन्ट जारी कर दिये गये। केसरीसिंह पर सरकार उलटने के प्रयास का आरोप लगाकर 20 वर्ष की सजा सुना दी गई। इसके पश्चात उन्हें बिहार के हजारीबाग कारागृह में भेज दिया गया।

कारागृह में केसरीसिंह ने अन्न न लेने की प्रतिज्ञा की तथा निरन्तर 28 दिन बिना अन्नजल के व्यतीत किये। जेल अधिकारियों द्वारा पानी में थोड़ा सा चावल का मांड मिलाकर रबड़ की नली द्वारा उनके पेट में डाला जाता था। उस अवधि में उन्हें कालकोठरी से बाहर भी नहीं निकाला गया।

प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति पर युद्ध में मित्र राष्ट्रों की विजय के उपलक्ष में ब्रिटिश सरकार ने भारतीय कैदियों की सजाओं में कुछ छूट के आदेश दिये जिसके अन्तर्गत केसरीसिंह भी बन्दी गृह से छूट गये।[22] इसके पूर्व ही ब्रिटिश सरकार के इशारे पर शाहपुरा राजाधिराज नाहरसिंह ने उनकी सारी जागीर जब्त कर ली थी। इन्हीं परिस्थितियों में केसरीसिंह अज्ञातवास में चले गये, जहां घोर कष्टों का सामना करते हुए दर–दर भटकते रहे। अन्त में देश भक्ति का कार्य करते हुए अज्ञातवास में ही 1939 में उनका स्वर्गवास हो गया।

वीर भारत सभा के अन्य सदस्यों को भी ब्रिटिश सरकार द्वारा अनेक यातनाएँ दी गई। केसरीसिंह के पुत्र कुँवर प्रतापसिंह बरेली जेल में

अधिकारियों से संघर्ष करते हुए शहीद हुए। खरवा के ठाकुर गोपालसिंह पर बनारस षडयन्त्र में भाग लेने का आरोप लगाया गया तथा उन्हें गद्दी च्युत करके कारागृह में नजरबन्द कर दिया गया। अर्जुनलाल सेठी को भी बन्दी बनाकर सरकार द्वारा नजर बन्द कर दिया गया।

7.12 बिजोलिया कृषक आन्दोलन –

बिजोलिया उदयपुर से उत्तर पूर्व में 112 मील दूर बून्दी की सीमा पर एक ऊंचे पहाड़ी स्थान पर बसा हुआ है। इसको ऊपरमाल या उत्तम शिखर भी कहते हैं। यह मेवाड़ राज्य का एक प्रथम श्रेणी का जागीरी ठिकाना था। जहाँ का जागीरदार 'राव' कहलाता था।[23]

1897 में बिजोलिया जागीर के कृषकों ने ठिकानों के अत्याचारों, विभिन्न करों तथा लागतों के भयंकर बोझ के विरुद्ध आवाज उठाई। उसी वर्ष एक दिन वहां के समस्त किसान गिरधरपुरा गांव में गंगाराम धाकर के पिता के मृत्यु भोज में एकत्रित हुए तथा उन्होंने निश्चय किया कि वे बेगार और लागतों के विरुद्ध महाराणा को शिकायत करेंगे। तद्नुसार कृषकों के दो प्रतिनिधि नान जी पटेल एवं ठाकरी पटेल किसानों की कष्ट गाथा सुनाने के लिये उदयपुर गये।[24]

दीर्घकाल तक उदयपुर में दौड़–धूप और परिश्रम के पश्चात् महाराणा ने बिजोलिया के कृषकों की कष्ट गाथा को सुना और महकमा खास के सहायक माल हाकिम को किसानों की लागतों और बेगार सम्बन्धी शिकायतों की जांच करने के लिये बिजोलिया भेजा। हाकिम 6 महिने तक बिजोलिया में ठहरे और उन्होंने पूर्ण जाँच के पश्चात् ठिकाने के विरुद्ध निर्णय दिया, परन्तु महाराणा ने इस पर अधिक ध्यान नहीं दिया। केवल एक दो साधारण लागतों को कम करने के आदेश दे दिये।

इसके उपरान्त 1899 के भीषण दुर्भिक्ष से कृषक जनता और भी व्याकुल हो गई।[25]

1903 में वहां के सामन्त द्वारा कृषकों पर चंवरी नामक एक नया टैक्स लगाया गया। यह नया कर केवल आर्थिक दृष्टि से ही प्रजा पर एक बड़ा और असहनीय भार नहीं था वरन् एक दृष्टि से घोर अपमानजनक भी था। जो भी पिता अपनी कन्या का विवाह करता वह तेरह रुपये ठिकाने में जमा कराता और वर महलों में जाकर, जब तक वहां के सामन्त को अभिवादन कर उनके समक्ष नतमस्तक नहीं होता, कन्या की विदाई नहीं हो सकती थी।[26] कृषकों ने इसके विरोध में दो वर्ष तक अपनी कन्याओं के विवाह बन्द कर दिये तथा वहां के सामन्त के पास जाकर 'चंवरी' टैक्स हटाने का अनुरोध किया, किन्तु उन्होंने टैक्स नहीं हटाया फलस्वरूप कृषक बिजोलिया छोड़कर ग्वालियर की ओर चल पड़े। इस पर वहां के राव कृष्णसिंह बड़े चिन्तित हुये और उन्होंने कृषकों से क्षमा माँगी और उन्हें मनाकर पुनः ले आये।

सन् 1906 में राव कृष्णसिंह के देहावसान पर पृथ्वीसिंह बिजोलिया की गद्दी पर बैठे। उन्होंने किसानों पर कई प्रकार के नये कर लगाये तथा पुराने करों में भी वृद्धि की। कृषक वर्ग ऐसा नहीं चाहता था परन्तु जब उनकी पुकार को वहां के सामन्त ने नहीं सुना तो कृषकों के निश्चयानुसार वहाँ का सम्पूर्ण कृषि योग्य क्षेत्र उस वर्ष बिना जोता–बोया छोड़ दिया। स्थिति यहां तक गंभीर हो गई कि कृषकों ने भूराजस्व भी देने से इन्कार कर दिया।[27]

प्रारंभ में इस आन्दोलन का नेतृत्व साधु सीताराम दास कर रहे थे।[28] परन्तु इसी बीच 1915 में जब वे चित्तौड़ में प्रथम बार विजयसिंह

पथिक से मिले तो पथिक के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर साधु सीताराम ने उन्हें आन्दोलन का नेतृत्व संभालने का अनुरोध किया। पथिक ने इस अनुरोध को सहर्ष स्वीकार कर लिया। बिजोलिया पहुँच कर पथिक ने एक सेवा समिति नामक संस्था बनाई जिसके माध्यम से वे जनता में जागृति के भाव भरने लगे। इस प्रकार सम्पूर्ण बिजोलिया में नवीन जागरण और संगठन का सूत्रपात हुआ। एक वर्ष के बाद ही 1916 में वहां के किसानों ने साधु सीताराम की अध्यक्षता में एक किसान पंच बोर्ड की भी स्थापना की।

1916 में प्रथम महायुद्ध (1914–1918) के लिए ब्रिटिश सरकार के आदेश से वहाँ के सामन्त द्वारा किसानों से युद्ध ऋण और चन्दा बलात वसूल किया जाने लगा। इस पर विजय सिंह पथिक से प्रेरणा पाकर कृषकों ने युद्ध ऋण नहीं दिया और सामन्त को किसी भी प्रकार का सहयोग देने से इन्कार कर दिया। इस प्रकार से वहां के कृषकों ने पथिक के नेतृत्व में आन्दोलन आरंभ किया। उन्होंने ठिकाने की आज्ञाओं की अवहेलना करना अथवा बेगार न देना, अदालत तथा पुलिस का बहिष्कार करना तथा पंचायत के माध्यम से समस्त निर्णय करवाने का निश्चय किया। कृषकों के निर्णय की यह प्रतिक्रिया हुई कि वहाँ का सामन्त कृषकों पर क्रूर दमन करने लगा। कृषकों से बलपूर्वक चन्दा वसूल किया जाने लगा तथा मना करने पर उनके साथ मारपीट की गई, अथवा जेल में ठूंसा गया,[29] फिर भी दमन चक्र द्वारा किसानों की क्रान्तिकारी भावनाओं को दबाया नहीं जासका वरन उनमें और तीव्रता आ गई। स्थिति का लाभ उठाकर पथिक ने मेवाड़ राज्य तथा ब्रिटिश सरकार पर प्रभाव डालने के उद्देश्य से देश के प्रसिद्ध समाचार पत्रों का प्रचारार्थ सहयोग प्राप्त किया। कानपूर का 'प्रताप', प्रयाग का 'अभ्युदय', कलकत्ते का 'भारत मित्र' तथा

पूना का 'मराठा' बिजोलिया आन्दोलन के विस्तृत समाचार छापने लगे जिससे आन्दोलन और उग्र बन गया और सम्पूर्ण राष्ट्र बिजोलिया आन्दोलन से परिचित हो गया।[30]

ब्रिटिश सरकार बिजोलिया आन्दोलन की भावना से अत्यधिक भयभीत हो गई। उन्हें यह शंका होने लगी कि बिजोलिया आन्दोलन की यह भावना कहीं सम्पूर्ण भारत में नहीं फैल जाये। अतः उन्होंने महाराणा पर दबाव डाला कि वे इस आन्दोलन का शीघ्रातिशीघ्र दमन कर दे। ऐ. जी.जी. होलेन्ड ने महाराणा को सूचित किया कि, ''मेवाड़ तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों में बोल्शेविक घुस आये हैं तथा रूसी क्रान्ति के आधार पर भारत में भी सशस्त्र क्रान्ति करना चाहते हैं।''

इस आन्दोलन को कुचलने के उद्देश्य से मेवाड़ सरकार ने दमन कारी साधनों का अनुसरण किया। माधोसिंह के नेतृत्व में एक सैन्य दल भेजा गया जिसने हजारों किसानों को गिरफ्तार कर लिया। पथिक को गिरफ्तार करने के लिये काफी प्रयत्न किये गये परन्तु वे बच निकले और उसके तुरन्त बाद ही उनका काम माणिक्यलाल वर्मा ने सम्भाल लिया।[31] महाराणा फतहसिंह की आन्दोलनकारियों के साथ पूर्ण सहानुभूति थी अतः उन्होंने अपने सैन्य दल को गुप्त आदेश दे रखे थे कि पथिक को गिरफ्तार न करें।[32] 1919 में पथिक बिजोलिया से वर्धा चले गये, जहां उन्होंने 'राजस्थान केसरी' पत्र निकाल कर देशी राज्यों में व्याप्त अत्याचारों और दमनों को संसार के सम्मुख प्रकट किया।

अन्त में ए.जी.जी. के हस्तक्षेप के परिणाम स्वरूप ठिकाने के जागीरदारों और बिजोलिया किसानों के मध्य एक समझौता सम्पन्न हुआ। तदनुसार किसानों की अधिकांश मांगें स्वीकार कर ली गई। जितनी भी

अन्यायपूर्ण लागतें थी उन्हें माफ कर दिया गया तथा अधिकांश बेगार समाप्त कर दी गई। यह भी निश्चय किया गया कि किसानों के विरुद्ध चलने वाले समस्त मुकदमें वापस ले लिये जायेंगे। इस प्रकार 1922 में बिजोलिया आन्दोलन सफलतापूर्वक समाप्त हुआ।

7.13 लोकसंत बावजी महाराज चतुरसिंह जी[33] : मेवाड़ में सांस्कृतिक पुर्नजागरण –

लोकसंत महाराज चतुर सिंह जी बावजी मर्यादा पुरूषोत्तम रामचन्द्र के पवित्र वंश मेवाड़ राजवंश में योग की अलख जगाने वाले बप्पा रावल की परम्परा के संत थे और मेवाड़ की युवरानी भक्त शिरोमणी मीराबाई की भक्ति से ओतप्रोत थे। मीरां ने जिस भक्ति की लहर को आरम्भ किया, उसे महाराणा प्रताप की पत्नी अजबदे ने आगे बढ़ाया और वल्लभ कुल के तिलकायत गोस्वामी से ब्रह्म सम्बंध लिया। इस प्रकार शौर्य और अध्यात्म से जागृत मेवाड़ के गुहिलोत राजवंश में 19वीं शताब्दी में एक राज राजेश्वर संत महायोगी महाराज चतुर सिंह जी बावजी का जन्म हुआ। उन्होंने मेवाड़ में सवा सौ साल पहले अध्यात्मिक क्रांति के साथ ही राजनीति समस्याओं और जनजागृति के लिए जनभाषा मेवाड़ी का प्रयोग कर एक नए युग का सूत्रपात किया।

बावजी चतुर सिंह जी का जन्म मेवाड़ के महाराणा फतह सिंह जी शिवरती के बड़े भाई और करजाली के जागीरदार महाराज सूरत सिंह जी व उनकी पत्नी कृष्ण कंवर के घर माघ कृष्णा चतुर्दशी संवत् 1936, तद्नुसार 9 फरवरी 1880 को हुआ। मेवाड़ राजवंश के से सम्बंधित भाइपा में करजाली–शिवरती परिवार के इतिहास पुरूषों में लोकप्रिय संत महाराज चतुर सिंह जी बावजी का नाम जन–जन में व्याप्त है। बावजी राजपरिवार

के ऐश्वर्य को त्याग कर जीवन पर्यन्त आध्यात्मिक चेतना में लगे रहे और इसे उन्होंने सरस, सरल और मातृभाषा मेवाड़ी में अपने उपदेश जन–जन तक संप्रेषित किये। इसी कारण उन्हें योगेश्वर (योगीराज) कहा जाता है। शासन और सामंतीय व्यवस्था के गुण–अवगणु से राज्य की प्रजा को अपने काव्य और दर्शन के ग्रंथों के माध्यम से अवगत करवाया और समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन किया। इसी कारण उन्हें कई बार मेवाड़ का विवेकानंद कहकर सम्बोधित किया गया।

इस प्रकार बावजी चतुरसिंह के प्रथम गुरु गुमानसिंह जी लक्ष्मणपुरा थे और उन्हें से उन्हें साधना और योगसिद्ध दोनों प्राप्त हुई। अब बावजी ने अपना आश्रम नऊवा में एक कुटिर बना कर आरम्भ किया और अपना अधिक समय साधना में लगाया। वर्तमान में वहां उनका समाधि स्थल और स्मारक है। आपको आत्म साक्षात्कार संवत् 1978 में हुआ। इन्होंने योगेश्वर गुमान सिंह जी पाए आध्यात्मिक ज्ञान को जन–जन में प्रचारित करने के लिए मेवाड़ की राजधानी उदयपुर के निकट सुखेर गांव में आश्रम सुखधाम की स्थापना की। वर्तमान में यह आश्रम उदयपुर से निकल रहे राष्ट्रीय राज मार्ग संख्या–8 पर स्थित है। इस स्थान का अब हवा मगरी के नाम से जाना जाता है।[34]

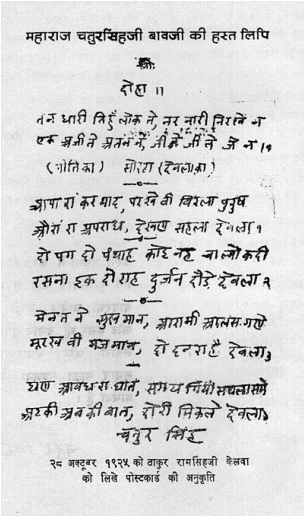
महाराज चतुरसिंहजी बावजी की हस्त लिपि

दोहा ॥

नन भाति निहुँ लोक ने, नर नारी निरखे न
एक अभी ने अतन में, औ में जी ने जे न ।१

(गोतिका) सोरठा (देखलाऊ)

आपा रो कर माह, परने की विश्वास पुरुष
औरां रा अपराध, देखण सहला देखला १

दो पग दो पंथाह कोइ नह चालो करी
रसना इक दो राह दुर्जन दौड़े देखला २

मेनत ने भुल मान, आरामी आलस गणे
मूरख की भज मान, दो दन रा है देखला ३

घण आवधरा धांत, समय गिंदी भचनासमे
आरकी अब की बात, होरी निकले देखला ४

चतुर सिंह

२८ अक्टूबर १९२५ को ठाकुर रामसिंहजी केलवा
को लिखे पोस्टकार्ड की अनुकृति

आज से सौ वर्ष पूर्व महामारी के दौर में आपने जनता के हित के लिए कई राहत कार्य करवाए। आपने जैन शास्त्र, काश्मीर शैव सिद्धान्त के ग्रंथों, इस्लाम की मूल पुस्तक कुरान शरीफ, ईसाइयत के मूल ग्रंथ बाइबल का भी अध्ययन किया। मेवाड़ी भाषा के प्रचार और विस्तार के साथ उसमें साहित्य सृजन का प्रारम्भिक श्रेय बावजी चतुरसिंह जी को जाता है। उन्होंने गीता, योगसूत्र, सांख्यकारिका, मार्कण्डेयकृत चंद्रशेखर स्रोत पर मेवाड़ी भाष में टीका लिखी। आपने चतुर चिंतामणी, समान बत्तीसी, मानवचित्र रामचरित, अनुभव प्रकाश, लेख संग्रह आदि ग्रंथों का सृजन किया। बावजी की शोध ग्रंथ व रचनाओं पर शोधार्थी शोध के रूप में उपयोग लेते हैं। बावजी की रचनाएं आज के परिप्रेक्ष्य में उपयोगी है। महिलाओं, दलितों, किसानों, नशामुक्ति आदि पर आपने सरल रचनाएं मेवाड़ी भाष में सृजित की। उन्होंने वेद, पुराण, उपनिषद्, महाकाव्यों आदि को मानव जीवन में उतारने पर बल दिया, जिससे की आज का युवा सही मार्ग प्रशस्त कर सके। बावजी ने आज की कुरीतियों के ऊपर सवा सौ साल पहले दारू (मदिरा) पर रचना 'दारू री रीत' जिससे उन्होंने अपने काल में नवयुवकों को नशे से दूर रहने का संदेश दिया जो आज भी प्रासंगिक है।[35]

दारू री दोय सदा शुरीती।

मरया पछे नरकं में पड़नो, जीता जीव फजिती।

जद शिशो पी मेट दी, मद पिवा री गाळ।

वो मादवी शिशोद अब, पिवे शिशा ढाल।

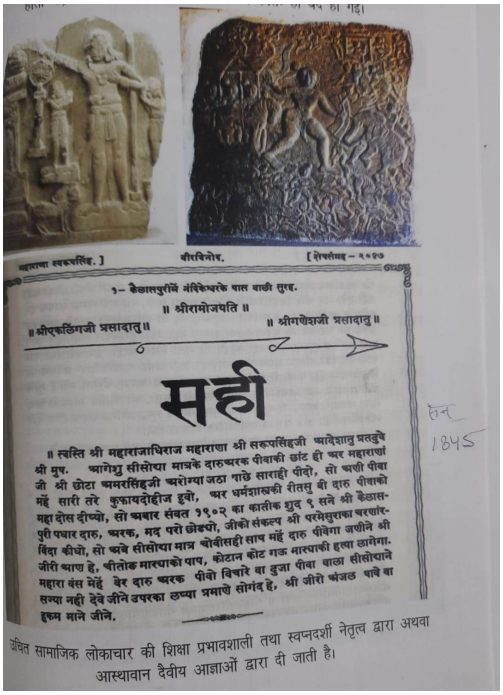

महाराणा स्वरूपसिंह.] वीरविनोद. [शेषांशम् – १०२७

१– कैलासपुरीमें नंदिकेश्वरके पास वाली गुफा.

॥ श्रीरामोजयति ॥

॥ श्रीएकलिंगजी प्रसादातु ॥ ॥ श्रीगणेशजी प्रसादातु ॥

सही

॥ स्वस्ति श्री महाराजाधिराज महाराणा श्री सरूपसिंहजी आदेशातु प्रतत्रुषे श्री मुष. आगेथु सीसोद्या मात्रके दारुअरक पीवाकी छांट ही अर महाराणां जी श्री छोटा अमरसिंहजी अरोग्या जठा पाछे साराही पीदो, सो अणी पीवा महें सारी तरे कुफायदोहीज हुवो, अर धर्मशास्त्रकी रीतसु बी दारु पीवाको महा दोस दीध्यो, सो अबार संवत १९०२ का कातीक शुद ९ सने श्री कैलास-पुरी पधार दारु, अरक, मद परो छोड्यो, जीको संकल्प श्री परमेसुराका चरणार-विंदा कीधो, सो अबे सीसोद्या मात्र चोवीसही साप महें दारु पीवेगा जणीने श्री जीरी आण हे, चीलोक मारवाको पाप, कोटान कोट गऊ मारवाकी हत्या लागेगा. महारा वंस मेंहें वेर दारु अरक पीवो विचारे वा दुजा पीवा वाला सीसोद्याने सग्या नही देवे जीने उपरका लख्या प्रमाणे सोगंद हे, श्री जीरी अंजळ पावे वा हुकम माने जीने.

उचित सामाजिक लोकाचार की शिक्षा प्रभावशाली तथा स्वप्नदर्शी नेतृत्व द्वारा अथवा आस्थावान दैवीय आज्ञाओं द्वारा दी जाती है।

उनकी नवचेतना को जगाने वाली अमर पंक्तियां हैं, जो युगों युगों तक मानव के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती रहेगी। बावजी की शिक्षाओं से प्रेरित नाथद्वारा निवासी भूरी बाई नामक एक महिला हुई थी जो निरक्षर थी। उन्होंने सहज भक्ति, सहज ज्ञान, सहज वैराग्य, सहज व्यवहार की मार्ग चुना। भूरी बाई की काली पोथी और उनके आध्यात्मिक चैतन्य से प्रेरित होकर तत्कालीन आचार्य रजनीश जैसा दार्शनिक भी उनके साधना केन्द्र अलख आश्रम नाथद्वारा में रहे। जिसका उल्लेख रजनीश ने अपने ग्रंथों में किया। वस्तुतः भूरी बाई संत शिरोमणि मीरा बाई, सहजो बाई, गवरी बाई, रूबिया की तरह से लोकसंत के रूप में विख्यात थे।

7.14 महाराणा भूपालसिंह (सन् 1930–1956 ई.)[36] : आधुनिक मेवाड़ के स्वप्नदृष्टा –

महाराणा फतहसिंह के उत्तराधिकारी महाराणा भूपालसिंह मेवाड़ के आधुनिकीकरण तथा सर्वांगीण विकास के स्वप्नदृष्टा थे। उन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति और भारतीय संविधान के लागू होने के पूर्व ही मेवाड़ रियासत में

प्रजातान्त्रिक व जनप्रतिनिध्यात्मक शासन प्रणाली लागू कर दी थी। इस हेतु उन्होंने अपने पूर्वजों द्वारा स्थापित मूल्यों के आधार पर मेवाड़ में प्रथम बार संविधान लागू कर शासन प्रारम्भ किया।

भारतीय संविधान निर्माण की प्रक्रिया के दौरान संविधान निर्मात्री समिति के अध्यक्ष प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के साथ मास्टर बलवन्त सिंह जी मेहता

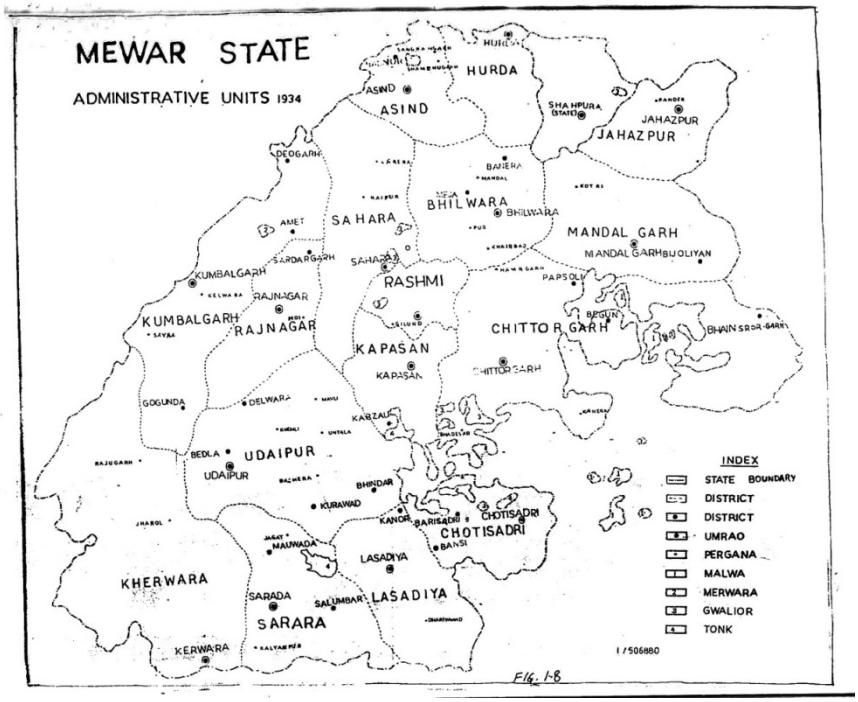

महाराणा भूपालसिंह द्वारा उदयपुर रियासत के प्रथम संविधान एवं उसके साथ ही स्थापित महाराणा प्रताप विश्वविद्यालय के उद्घाटन पर दिये गए भाषण जो कि भारत की स्वाधीनता और आधुनिक भारत के संविधान के निर्माण के पूर्व भारत की 564 रियासतों को एकीकृत भारत में सम्मिलित करने के लिए पं. जवाहर लाल नेहरू व सरदार वल्लभ भाई पटेल के किए गए देश की आजादी के लिए प्रयास से प्रभावित होकर मेवाड़ राज्य को अखण्ड भारत में इसलिए सम्मिलित करना चाहा कि तत्कालीन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के शीर्ष नेताओं ने महाराणा प्रताप के स्वाधीनता के लिए किए गए संघर्ष की सफलता के संदर्भ में दिया गया। उक्त भाषण का अंश निम्नानुसार है –

हम आज प्रताप की 407वीं जयन्ती 5 जून 1947 के इस शुभ अवसर पर हिन्दूआ सूर्य वंशज महाराणा प्रताप के शाश्वत गौरव की स्मृति में प्रताप विश्वविद्यालय स्थापित करने जा रहे हैं, जिसके शौर्य पूर्ण कार्यों से भारत का इतिहास प्रेरणास्पद रहा है।

हम समस्त राजपूत कुल के शासक परस्पर एक ही वंश से गूथें हुए हैं, जो इस देश के निवासियों की परम्पराओं भाषा संस्थाओं की एकरूपता का परिणाम है। आधुनिक काल में भारत ने अपनी स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया, जिसमें हमें सफलताएं मिली परन्तु ज्वलंत समस्या इस वक्त यह है कि देश की अखण्डता एवं राष्ट्रीय एकता को कैसे संरक्षित व सुदृढ़ किया जाए। इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। मैं देश के समस्त राजकुल परिवारों, सामन्तों एवं शासन से जुड़े लोगों से अपील करता हूँ कि दिल्ली में एक मजबूत व स्थायी केन्द्रीय सरकार बनी रहे, अभी तक जिन राजा, नवाबों ने भारत संघ में मिलने की अभी तक

स्वीकृति नहीं दी है। मैं उनसे भी अनुरोध करता हूँ कि वे भारत संघ के लिए बनायी गयी विधायिका में सम्मिलित होकर राष्ट्रीय एकीकरण के लिए संघर्षरत्त जननायकों को सम्बल देंवे। यदि भारत जीवित व अस्तित्व में रहता है तो ही हमारा अस्तित्व रहेगा। हम संगठित रहते हैं तो मजबूत राष्ट्र बना सकेंगे। यदि पृथक–पृथक रहेंगे तो हमारा अस्तित्व संकट में होगा। यदि भारत विश्व शक्ति के रूप में अस्तित्व में जीता रहता है, तो हम सभी जीवित रहेंगे। यदि भारत असफल रहता तो हमारी मृत्यु निश्चित है।

मेवाड़ के क्षत्रिय राजपूत कुलीन असंख्य नर–नारियों तथा अन्य जातियों के लोगों ने राष्ट्र की अस्मिता, गौरव, गरिमा के लिए त्याग बलिदान दिया है जिसका इतिहास सदैव हमें अपनी मातृभूमि की सुरक्षा के लिए प्रेरित करता है। अतः हमने मेवाड़ की जनता को शासन में विधिक स्वतन्त्रता देने हेतु संवैधानिक प्रशासनिक व्यवस्था हेतु कानून का राज्य स्थापित करने के लिए इस संविधान को लागू किया है। मेवाड़ का यह नया संविधान उत्तरदायी सरकार के सिद्धान्तों अनुसार बनाया व लागू कर दिया है। जिसमें न्यायपालिका, कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका के तीनों ही अंग स्वतन्त्र रहेंगे। इनमें शक्ति संतुलन बनाये रखने के प्रजातांत्रिक अंकुश का प्रावधान रखा गया है।

1950 में राजस्थान के मुख्यमंत्री जयनारायण व्यास के कार्यकाल में वाणिज्य, उद्योग, खान एवं भूविज्ञान विभाग के मंत्री के रूप में उस वक्त के राज प्रमुख महाराजा मानसिंह द्वारा बलवन्त सिंह मेहता शपथ ग्रहण करते हुए। उस वक्त केवल 9 मंत्री थे जिनमें केवल एक उपमंत्री अमृतलाल यादव थे।

सन् 1950 में राजस्थान के मुख्यमंत्री जयनारायण व्यास के कार्यकाल में वाणिज्य, उद्योग, खान एवं भूविज्ञान विभाग के मंत्री के रूप में उस वक्त के राज प्रमुख महाराजा मानसिंह द्वारा बलवन्त सिंह मेहता शपथ ग्रहण करते हुए। उस वक्त केवल 9 मंत्री थे जिनमें केवल एक उपमंत्री अमृतलाल यादव थे

महाराज प्रमुख महाराणा भूपाल सिंह[37] जी ने भारत की देशी रियासतों के भारत संघ में विलीनीकरण के अवसर पर महाराणा प्रताप के स्वाधीनता एवं अखण्ड भारत के स्वप्न पूरा होते देखकर उन्होंने सरदार पटेल, महात्मा गांधी एवं पं. जवाहरलाल नेहरू इत्यादि के राष्ट्रीय एकीकरण में योगदान को समर्थन दिया। इसका अनुकरण देश की अन्य रियासतों के शासकों ने भी किया। इस दृष्टि से महाराणा भूपाल सिंह भारत के इटली के एकीकरण के महान नायक मैजिनी, गेरी बाल्डी और राजा विक्टर इमेन्यूअल की भांति इतिहास में याद किए जाऐंगे। इस बाबत् महाराणा भूपाल सिंह जी ने भारतीय संविधान के निर्माण एवं 26 जनवरी 1950 के लागू होने के 4 वर्ष पूर्व 23 मई 1947 को मेवाड़ रियासत में उस

वक्त प्रथम संविधान बनवाकर उसे 5–6 जून 1947 को लागू किया था। इसे राजकीय गजट में भी प्रकाशित किया।

वर्तमान राजस्थान राज्य का निर्माण 30 मार्च 1948 से प्रारम्भ होकर 1956 तक एकीकरण की प्रक्रिया में था। इस वक्त तत्कालीन महाराणा श्री भूपाल सिंह जी ने मेवाड़ में संवैधानिक व्यवस्था को लागू कर प्रथम बार मेवाड़ राज्य का संविधान महाराणा प्रताप की 407वीं जयन्ती के अवसर पर लागू किया, जो 26 जनवरी 1956 तक यथावत रहा। (स्मरण रहे कि मेवाड़ राज्य की इस घोषित संविधान के अवसर पर इस संविधान में उल्लेखित स्वतन्त्रता के पूजारी प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रताप के सूर्यवंशीय कुलीन परम्परा के निर्वाहण की मेवाड़ के इतिहास के त्याग, गौरव, गरीमा और सनातन धर्म संस्कृति विषयक मूल्यों के संरक्षण में सदियों पूर्व यहां की जनता और सामन्तों तथा राज परिवार के महान बलिदान को चिर स्थाई रखने के प्रतीक प्रताप के स्वाधीनता, सार्वभौमिकता, संस्कृति, सांस्कृति अखण्डता की स्मृति में तथा प्रताप विश्वविद्यालय की स्थापना कर इसकी घोषणा की)

मेवाड़ में महाराणा भूपालसिंह द्वारा घोषित प्रथम संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों और इसकी विशेषताओं पर प्रभाव ड़ाला। जो इस प्रकार है –

मेवाड़ के संविधान की विशेषता[38] –

खण्ड प्रथम, अनुच्छेद 1 – उक्त संविधान में विधि विषयक संवैधानिक प्रशासन की व्यवस्था का उल्लेख किया गया है।

अनुच्छेद 2 – परमेश्वर श्री एकलिंगजी को सार्वभौमिक राजा मानकर उनको समस्त शक्तियाँ प्रदान की गई। (जैसे वर्तमान में राष्ट्रपति

व संसद को) मेवाड़ के महाराणा को दीवान/श्रीजी से सम्बोधित किया। (जैसे वर्तमान में प्रधानमंत्री को)

अनुच्छेद 3 – इस अनुच्छेद में श्रीजी की शक्तियों का विस्तार से उल्लेख्य है।

अनुच्छेद 4 – मेवाड़ के संविधान में तथा विश्वविद्यालय की स्थापना उसके लिए वित्तीय प्रबन्धन उससे सम्बन्धित शैक्षणिक संस्थाओं, शिक्षा के उद्देश्यों, प्रबन्धक और उसके संवैधानिक ढाँचे का उल्लेख हुआ है। (स्मरण रहे कि देश में प्रथम बार मेवाड़ के संविधान में आर्य धर्म और संस्कृति को शिक्षा प्रणाली का मूल आधार माना गया है।) प्रताप विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम हिन्दी रखा गया तथा लिपि देवनागरी को चुना। अंग्रेजी भाषा को द्वितीय श्रेणी का दर्जा दिया गया। श्रीजी को प्रताप विश्वविद्यालय के कुलाधिपति की शक्तियाँ दी गई, जो प्रो – चांसलर और दो अन्य वाईस चांसलर की नियुक्ति की शक्तियाँ रखता है। प्रताप विश्वविद्यालय का संचालन एक समिति द्वारा होगा। जिनमें श्रीजी (कुलाधिपति) कुलपति एवं उनके द्वारा दो अन्य नामित शिक्षाविदों सहित सदस्य होंगे, इसमें से परिषद के सदस्यों के लिए प्रावधान था कि वे 2.00 लाख वार्षिक अनुदान इस विश्वविद्यालय को देंगे।

अनुच्छेद 5 – इस विश्वविद्यालय से सम्बन्धित संस्थाओं की सूची दी गई। माफीदार वर्ग (ब्राह्मण, वैरागी, साधु, धार्मिक एवं देवभूमि पर आश्रित) के बच्चों की शिक्षा, भोजन व आवास निःशुल्क रहेगा। (स्मरण रहे कि मेवाड़ ने अपने पूर्वजों की धर्म, संस्कृति व सनातन परम्परा के निर्वाहन के तहत गरीबों, अनाथों व पिछड़े वर्ग के लिए निःशुल्क शिक्षा, आवास व भोजन की जो कल्पना की गई है जो आज की हमारी नवीन शिक्षा नीति

का आधार रहा है) मेवाड़ के संविधान के अनुच्छेद 5 में यह भी दर्शाया गया है कि जब भी शिक्षण संस्थाओं के खर्च की आवश्यकता पड़े तो चित्तौड़ के आस–पास 1000 एकड़ भूमि को विश्वविद्यालय के अनुदान के लिए दी जाए, और आर्थिक एवं वित्तीय दृष्टि से सम्बल होने के उपरान्त इस प्रताप विश्वविद्यालय को भारत के गौरव चित्तौड़ में स्थानान्तरित किया जाए। विश्वविद्यालय के देय धन, अनुदान इत्यादि पर किसी भी प्रकार का आयकर नहीं लिया जाएगा। संविधान के अनुच्छेद 5 में धार्मिक एवं सांस्कृतिक अनुदान से सम्बन्धित एक ट्रस्ट गठन की व्यवस्था है जो मेवाड़ की भू–सम्पदा, धनराशि विश्वविद्यालय के लिए देय है ट्रस्ट इसका प्रबन्धन करेगी।

अनुच्छेद 6 – में चित्तौड़ के प्रबन्धन का उल्लेख हुआ है।

संविधान के खण्ड 3, अनुच्छेद 7 – शासन प्रबन्धन के लिए मंत्री मण्डलीय और उसके पदाधिकारियों की वेतन भत्ते का प्रावधान रखा है।

अनुच्छेद 8 – इस संविधान में विधायिका का गठन और उसकी शक्तियों का वर्णन है।

अनुच्छेद 9 – विधान परिषद के गठन की व्यवस्था है।

अनुच्छेद 10 – विधायिका को भंग करने की शक्तियाँ दी गई है।

अनुच्छेद 11, 12 – राजस्व व उसके प्रबन्धन का लेखा–जोखा रखने की व्यवस्था है।

मेवाड़ संविधान के खण्ड 4 अनुच्छेद 13 – में नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लेख हुआ है।

मेवाड़ संविधान के खण्ड 5 व अनुच्छेद 14 – में मेवाड़ में सुरक्षा, पुलिस प्रबन्धन, सैन्य परम्परा, कानून की पालना का विवरण है।

अनुच्छेद 15 – विदेश नीति।

अनुच्छेद 16 – नियोजन एवं विकास।

अनुच्छेद 17 – आपातकालीन दशाओं का उल्लेख है।

मेवाड़ संविधान के खण्ड 6 अनुच्छेद 18 – मेवाड़ में न्यायिक शक्तियों का विस्तार से उल्लेख हुआ है। न्याय की दृष्टि से इस संविधान में उल्लेख है कि **उदयपुर नगर में राज्य की हाईकोर्ट** होंगी। उदयपुर में स्थापित हाईकोर्ट में किन्हीं दो अथवा अधिक उमरावों के झगड़ों का निपटारा किया जाएगा। राज्य और उमरावों के झगड़ों का निपटारा भी हाईकोर्ट द्वारा किया जाएगा।

मेवाड़ संविधान के खण्ड 2 के अनुच्छेद 2, 3, 4 से सम्बन्धित प्रक्रिया और विवादों का फैसला भी हाईकोर्ट में होगा। इसी प्रकार हाईकोर्ट को बंदी प्रतिक्षण याचिका और MANDAMUS, CERTEORARI QUO-WARRANTO, निषेधाज्ञा की प्रक्रिया का निस्तारण किया जाएगा। इसी प्रकार उदयपुर में स्थित हाईकोर्ट में विधान परिषद से सम्बन्धित मामलों का निस्तारण होगा। इसी प्रकार सभी मामलों में हाईकोर्ट (अपीलांट) की शक्तियाँ होंगी (वैधानिक, न्यायिक एवं कार्यपालिका सम्बन्धित) इसमें न्याय प्रणाली, न्यायाधीशों की नियुक्तियाँ, उनकी शक्तियाँ एवं वेतन भत्ते का स्पष्ट उल्लेख है।

मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति श्रीजी द्वारा होंगी जो कि न्यायिक कमीशन के सदस्यों की सिफारिश की अनुशंसा के आधार पर होगी।

मेवाड़ हाईकोर्ट समस्त न्यायपालिकाओं के सर्वोच्च शक्तियों के ऊपर होगी।

अनुच्छेद 19 – में हाईकोर्ट में अन्तिम अपील का प्रावधान है।

अनुच्छेद 20 – में एडवोकेट जनरल की शक्तियाँ दी गई है।

मेवाड़ संविधान के खण्ड 7 अनुच्छेद 21 – प्रशासनिक अधिकारियों, कर्मचारियों के चयन, वेतन भत्ते, शक्तियाँ आदि का उल्लेख है। साथ ही **अनुच्छेद 22** – में पब्लिक सर्विस कमीशन का प्रावधान है।

मेवाड़ संविधान के खण्ड 8 अनुच्छेद 23 – संवैधानिक शब्दावली यथा गवर्नमेण्ट ऑफ मेवाड़ एक्ट, हाईकोर्ट, लैण्ड हॉल्डर्स, लेजिसलेटिव अस्मेबली, एडल्ड, श्रीजी, श्री बावजी राज (बालिग) आदि वैधानिक धारणाओं का अर्थ की व्याख्या है।

मेवाड़ संविधान के खण्ड 9 अनुच्छेद 24 – मेवाड़ सरकार का उल्लेख है।

मेवाड़ संविधान के खण्ड 10 अनुच्छेद 25 – संविधान में संशोधन का प्रावधान है।

मेवाड़ के संविधान के धारा 5 भाग 2 सेक्शन 7 अनुच्छेद 4 में जिसका उल्लेख हुआ है[39] वह निम्न है –

1) चार्ट 1 – महाराणा प्रताप विश्वविद्यालय से सम्बन्धित संस्थाओं की सूची दी गई है – आयुर्वेदिक कॉलेज, आयुर्वेदिक डिस्पेन्सरी, आयुर्वेदिक रसायनशाला, अस्पताल, मेवाड़ राज्य का पुरातात्त्विक विभाग, सरस्वती पुस्तकालय एवं संग्रहालय, संस्कृत महाविद्यालय, महाराणा भूपाल कला, विज्ञान व विधि महाविद्यालय जिन सभी

संस्थाओं को **महाराणा भूपाल के नाम से संबोधित किया जाएगा।** उपरोक्त सभी संस्थाओं और शिक्षाओं से सम्बन्धित संस्थाओं को प्रताप विश्वविद्यालय में समायोजित किया जाए तथा उसके समस्त स्टाफ, सम्पदा, नियुक्ति के नियम, वेतन भत्ते जिसके लिए मेवाड़ राज्य उत्तरदायी होंगे।

2) प्रताप विश्वविद्यालय की परिसम्पत्तियों एवं उसके वित्तीय स्त्रोतों का उल्लेख हुआ है। जो प्रोपर्टी इसमें उल्लेखित है वह उस वक्त देय अनुदान 37 लाख 45 हजार नकद और इसके अतिरिक्त विश्वविद्यालय से सम्बन्धित चल अचल सम्पत्तियाँ इसके अंग होंगी।

3) चित्तौड़ एवं उसके आस–पास की भूमि सम्पदा का वर्णन है।

4) इसमें ब्राह्मण वर्ग के शिक्षार्थियों के लिए निःशुल्क शिक्षा, आवास व भोजन का प्रावधान किया गया है।

5) विश्वविद्यालय को देय अनुदान का उल्लेख है जो आयकर से मुक्त होगा।

6) महाराणा/श्रीजी भूपाल सिंह जी द्वारा दिया गया अनुदान 1.50 लाख, महाराणी का अनुदान 1.00 लाख, सरस्वती भण्डार का अनुदान 50 हजार कुल तीन लाख उस वक्त घोषित किया गया। 20.00 लाख प्रतिवर्ष राज्य सरकार द्वारा प्रताप विश्वविद्यालय को दिया जाएगा।

7) प्रताप स्मारक ग्रंथमाला के लिए प्रतिवर्ष के हिसाब से आगामी तीन वर्ष के खर्च हेतु प्रसिद्ध विधिवेत्ता, शिक्षाविद् श्री के. एम. मुंशी द्वारा फण्ड देने की घोषणा हुई जो उस समय

वे भारतीय विद्या भवन बम्बई के अध्यक्ष थे, उनकी संचित सम्पदा को प्रताप विश्वविद्यालय के खाते में जमा करने की घोषणा की।

7.15 शिवरती घराना –

मेवाड़ महाराणा संग्राम सिंह जी (द्वितीय)[40] के चार पुत्र हुए जिसमें महाराणा जगत सिंह जी जो मेवाड़ महाराणा बने। द्वितीय महाराज नाथसिंह जी को बागौर ठिकाना दिया गया। तीसरे महाराज बाघ सिंह जी को करजाली और चौथे पुत्र महाराज अर्जुन सिंह जी को शिवरती ठिकाना दिया गया। उन्हीं के वंशधर महाराज दलसिंह जी के बड़े पुत्र महाराज गजसिंह जी और दूसरे पुत्र महाराज सूरतसिंह जी को करजाली गोद पधारे और तीसरे पुत्र महाराणा फतहसिंह जी जो मेवाड़ के महाराणा बने।

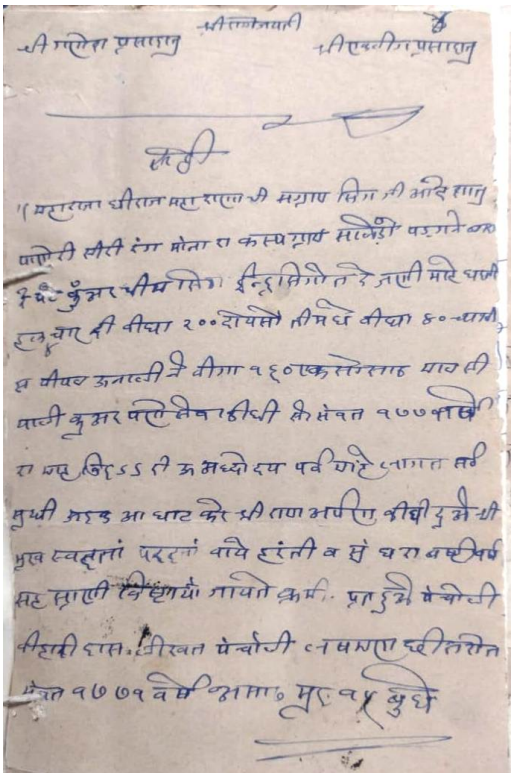

ताम्र पत्र की प्रति शिवरती घराने के कुल पुरूष महाराणा संग्राम सिंह द्वितीय द्वारा पाणेरी श्री रंगा मोता को सालेड़ा ग्राम, परगना बाठेड़ा के

कुंवर भीमसिंह इन्द्रसिंगोत के ठिकाने से हल चार (200 बीघा) भूमिदान उदक आघात कर दी (वि.सं. 1771 वर्ष आषाढ़ सुदी 15 बुधवार) हस्ताक्षर प्रधान पंचोली बिहारीदास ताम्रपत्र लेखक पंचोली लक्ष्मण छितरोत

मेवाड़ राज दरबार में महाराणा के भाई पुत्रों कि विशेष भूमिका रही है। इस संदर्भ में 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में महाराणा फतह सिंह जी (1884–1930 ई) के शासन काल से शिवरती ठिकाने का महत्व अपने चरमोत्कर्ष पर था। इस ठिकाने की भूमिका महाराणा भूपाल सिंह जी (1930–1955 ई.) के राज्य काल तक बनी रही। महाराणा फतह सिंह जी के शासन काल में महाराज गज सिंह जी का उत्तराधिकारी उनके छोटे भाई महाराज सूरत सिंह जी के ज्येष्ठ पुत्र महाराज हिम्मत सिंह जी हुए। महाराज हिम्मत सिंह जी के चार पुत्र – महाराज शिवदान सिंह जी, महाराज प्रताप सिंह जी, महाराज हमेर सिंह जी, मेजर महाराज उदय सिंह जी हुए।

महाराज शिवदान सिंह जी शिवरती –

शिवरती घराने के वंशधर महाराज शिवदान सिंह जी जो टोंक नवाब के दो हिन्दु जागीरदारों (सामन्त) में से एक थे।[41] आप स्वतन्त्र भारत के राजस्थान राज्य के नाथद्वारा विधान सभा क्षेत्र के स्वतन्त्र पार्टी के पहले निर्दलीय विधायक रहे। वर्तमान में उन्हीं के वंशधर मेजर महाराज राघवराज सिंह शिवरती हैं।

महाराज प्रताप सिंह जी शिवरती –

शिवरती घराने के वंशधर महाराज प्रताप सिंह जी के ज्येष्ठ पुत्र भगवत सिंह जी मेवाड़ महाराणा भूपालसिंह जी के गोद पधारे और मेवाड़ के महाराणा बने।

मेजर महाराजा उदयसिंह जी शिवरती –

महाराणा भूपाल सिंह जी के राज्य काल में मेजर महाराज उदय सिंह जी[42] का मेवाड़ राज दरबार में अहम भूमिका रही। 22 अप्रैल 1939 को महाराज कुमार भगवत सिंहजी की बीकानेर राजघराने की पुत्री से सगाई का दस्तूर प्राप्त हुआ। इस उपलक्ष्य में महाराणा ने शिवरती ठिकाने के भाई – पुत्रों को भी उच्च सम्मान प्रदान करते हुए महाराज शिवदान सिंह जी, महाराज प्रताप सिंह जी, महाराज हमेर सिंह जी तथा मेजर महाराज उदय सिंह जी को राज दरबार में बैठक प्रदान करते हुए सिरोपाव स्वीकृत किए। राज दरबार की बड़ी ओल में बत्तिसों सरदार अंतर्गत महाराणा भूपाल सिंह जी ने निम्न प्रकार बैठकें प्रदान कर इनका सम्मान बढ़ाया।

1) महाराज प्रताप सिंह जी को थाणा नीचे (बाद)

2) महाराज हमेर सिंह जी को भगवानपुरा नीचे (बाद) अठाणा की बैठक

3) मेजर महाराज उदय सिंह जी को महाराज हमेर सिंह जी नीचे (बाद) संग्रामगढ़ की बैठक।

महाराणा ने तीनों भ्राताओं को दरीखाने का बीड़ा सम्मान भी प्रदान किया। मेजर महाराज उदय सिंह जी शिवरती एक मृदुभाषी, सरल, सादगी व सद्भावी सैनिक अधिकारी थे। वे अपनी योग्यता के बल पर मेजर पद तक पदौन्नत हुए। महाराज उदय सिंह जी का जन्म 1914 ई. उदयपुर में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा उदयपुर में होने के पश्चात् उन्हें उच्च शिक्षा के लिए मेयो कॉलेज, अजमेर भेजा गया। 25 वर्ष कि आयु में आपने मेवाड़ स्टेट फोर्सेज में कमीशंड अधिकारी (लेफ्टिनेंट) के रूप में सेवा प्रारंभ की। 1942 में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान आपकी नियुक्ति अफगानिस्तान बॉर्डर के दरार – चिनार ओर दरार खेबर व दक्षिणी अफ्रीका में रही। इसी दौरान आपके साथ मेजर बिजयनाथ पुरोहित, हनुमंत सिंह जी घोड़च एवं मेजर रघुनाथ सिंह जी चावड़ा आदि थे। रेजिडेंट मेवाड़ ने महाराणा भूपाल सिंह जी से पूछा कि मेवाड़ जनरल की सलामी किसे दी जाए तो महाराणा के कहने से महाराज उदय सिंह जी शिवरती को **''रॉयल जनरल ऑफ मेवाड़''** की सलामी दी गई।[43]

1948 ई. में मेवाड़ स्टेट के विलीनीकरण वृहद राजस्थान की रियासतों की सेनाओं का भी एकीकरण होकर इसका मुख्यालय जयपुर किया गया। महाराज कैप्टन उदय सिंह जी ''सज्जन इंफेंट्री'' में थे, इनका ट्रांसफर उदयपुर से ''ब्रजराज इंफेंट्री'' कोटा में हो गया। कैप्टन महाराज उदय सिंह जी को बूंदी स्टेट का कमांडर नियुक्त किया गया। सैन्य अनुशासन के संदर्भ में मेजर उदयसिंह ने मेवाड़ का नाम रोशन किया। कोटा के बाद महाराज उदय सिंह जी का स्थानांतरण बीकानेर स्टेट में हुआ, सूरतगढ़ जहां मेजर पद पर कार्यरत रहकर आप सेवानिवृत्त हुए। वर्ष 1962 में 48 वर्ष की अल्पायु में ही आप परमेश्वर महाराज

एकलिंगनाथजी की सेवा में लीन हो गए। आपके पुत्रों में महाराज यागवेंद्र सिंहजी ,महाराज शत्रुदमन सिंह जी एवं मधुसूदन सिंह जी रहे है।

अक्सर इतिहास में एक चुप्पी देखने को मिलती है कि आजादी के पूर्व स्वतंत्रता आंदोलन में मेवाड़ राजपरिवार के योगदान को इतिहास में न्यून संज्ञा दी जाती रही है। इन खोई हुई कड़ियों को जोड़ने का कार्य मेवाड़ महाराणा के भाई मेजर महाराज उदय सिंह जी शिवरती के माध्यम से किया गया। महाराज उदय सिंह जी ने मेवाड़ तथा महाराणा भूपाल सिंह जी की प्रतिष्ठा को बढ़ाने में महत्ता योगदान दिया।

7.16 मेवाड़ के अंतिम महाराणा भगवत सिंह जी –

मेवाड़ महाराणा भूपाल सिंह जी के कोई उत्तराधिकारी नहीं होने से शिवरती परिवार के महाराज प्रताप सिंह जी के बड़े पुत्र भगवत सिंह जी को गोद लिया गया। महाराणा भूपाल सिंह के मरणोपरान्त मेवाड़ के अंतिम महाराणा भगवत सिंह जी को बनाया गया। उदयपुर को विश्व में पर्यटन के क्षेत्र में पहचान दिलाने का श्रेय भगवत सिंह जी को जाता है सर्वप्रथम भगवत सिंह जी ने पीछोला में स्थित एक महल जग निवास पैलेस था जो सफेद पत्थरों से निर्मित है को होटल में परिवर्तित किया। जो कालान्तर में लेक पैलेस के नाम से जाना जाता है और आपकी ही वजह से पूरे विश्व के पर्यटक उदयपुर को निहारते हैं।

भगवत सिंह जी को राजस्थान क्रिकेट का भीष्म पितामह कहा जाता है। राजस्थान में सर्वप्रथम क्रिकेट खेल को बढ़ावा देने का श्रेय आप ही को जाता है। आप ही के नेतृत्व में राजपूताना क्रिकेट संघ का गठन हुआ जो आगे चल कर राजस्थान क्रिकेट संघ (RCA) के नाम से जाना गया, जिसके पहले अध्यक्ष भगवत सिंह जी स्वयं थे। क्रिकेट जगत की सबसे

प्रसिद्ध प्रतियोगिता ''रणजी ट्रॉफी'' में आपके नेतृत्व में राजस्थान 1960 से लेकर 1966 तक लगातार उपविजेता रहा। राजस्थान से हिन्दुस्तान के प्रसिद्ध टेस्ट खिलाड़ी रूसी सुरति, विजय मांजरेकर, सलीम दुर्रानी, विनु मांकड, हनुमन्त सिंह बांसवाड़ा, के. एम. रूंगटा, सूर्यवीर सिंह बांसवाड़ा, अर्जुन नायडु, राजसिंह डूंगरपुर, सौपान देसाई, बसन्त रंजने, एस. पी. गुप्ते आदि खेलते थे।

भगवत सिंह जी मेवाड़ विश्व हिन्दू परिषद् के पहले अध्यक्ष रह चुके हैं, साथ ही संगीत व इतिहास को पूरे विश्व में बढ़ाने का श्रेय आपको ही जाता है।

7.17 संत तुल्य दिव्यपुरुष राजर्षि महाराज श्री शत्रुदमन सिंह शिवरती –

''प्रारंभ ही ईश्वर है, और अंत भी ईश्वर है'' – शत्रुदमन सिंह

''ईश्वर ही अन्तिम सत्य है'' – शत्रुदमन सिंह

श्रीमद् भगवद् गीता के अनुसार योगियों की यात्रा उस समय तक जन्म जन्मांतर तक चलती है, जब तक कि वह परंपरा में न समा जाए। जन्म की आवाजाही का छुटकारा इसी प्रकार संभव है। वह आत्मा विलीन किसी **''श्रीमंता गेहे''** श्री संपन्न परिवारों में जन्म लेकर अपने साधनाक्रम को निरंतरता देता रहता है। इसी संदर्भ में मेवाड़ राजवंश के शिवरती राजघराने के महाराज श्री शत्रु दमन सिंह जी को एक दिव्य पुरुष के रूप में देखा जाता है।

आपश्री का जन्म उस मेवाड़ के राजवंश में हुआ, जिसने माटी की रक्षार्थ अपने शरीर तक को सदियों तक अनवरत न्यौछावर कर दिया। इस

वंश का पिछले चौदह सौ वर्षों का इतिहास यही स्पष्ट करता है। ऋषि हारीत के दिशा निर्देशों में पला – बढ़ा यह राजवंश बप्पा रावल, हम्मीर, कुंभा, महाराणा प्रताप सिंह, राजसिंह जैसे कीर्ति पुरुषों की श्रृंखला से सुशोभित है। इसी क्षत्रिय वंश में कई सिद्धों, संतों एवं शास्त्रीय वचनों को अपने जीवन में उतारने वाले अध्यात्ममार्गियों का भी आविर्भाव हुआ। संत शिरोमणि मीरा बाई, लोकसंत महाराज चतुर सिंह जी बावजी एवं उसी परम्परा का निर्वहन करने वाले महाराज श्री शत्रुदमन सिंह को एक संकेतक के रूप में गिना जा सकता है। ये वे महापुरुष हैं, जिनके चरण भले ही सांसारिक रिश्तों, कर्त्तव्यों के मार्ग पर चलते रहे, किन्तु उनका अंतःकरण सदा शिव हरि या सत्य की खोज में लगा रहा।

सद्ग्रंथ मार्ग संकेत है, आध्यात्मिक जीवन के सोपानों पर आगे बढ़ने का ग्रंथों के सत्य जब मानवीय चरित्र में उतरते हैं, तभी उन ग्रंथों एवं गुफाओं की महिमा फलवती कही जाती है। करजाली एवं शिवरती वंश के लोकसंत महाराज श्री चतुर सिंह जी बावजी के ग्रंथ **''अलख पच्चीसी''** का यह दोहा इसी सत्य को उजागर करता है –

कागद कीड़ी रे जस्यो, वी में वेद पुराण।

वी में अक्खर एक नी, ऊधा अलख पछाण।।

वेद और पुराण का महत्त्व आध्यात्मिक उड़ान में मात्र एक चोटी के समान है, क्योंकि उसमें परमात्मा नहीं है। परमात्मा तो अपने बल से साधक स्वयं अपने में प्रकट करता है। महाराज श्री शत्रुदमन सिंह जी की आध्यात्मिक ऊँचाई को देख पाना तो केवल सिद्ध संतों से ही संभव है, तथापि जन मानस में उनके जीवन के कुछ प्रतिबिम्ब हैं, जो उनकी

आध्यात्मिक गहराई की ओर संकेत करते हैं। कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं –

- 21 सितम्बर, 1945 से 23 फरवरी, 2021 के बीच इस धरती के पवित्र भाग मेवाड़ की भूमि पर शिवरती घराने में अपनी जीवन यात्रा पूरी करने वाले यह यात्री रिश्ते में स्वर्गीय महाराणा भगवत सिंह जी के काका साहब के पुत्र के पुत्र अर्थात् आपस में भाई थे। आप एकलिंगनाथ जी की भक्ति में इस सीमा तक समर्पित थे कि जब भी मेवाड़ में रहते, प्रति सोमवार एकलिंगनाथ की चौखट पर एक सेवक के रूप में उपस्थिति दिया करते थे। यह यात्रा क्रम आपने आजीवन निभाया। महाराज के रूप में उनको सामान्य जन आदर देता था, किन्तु उनका अंतर्मन तो एकलिंगनाथ के अकिंचन सेवक के रूप में ही रमता रहता था। ठिकाने का नाम भले ही शिवरती है, किन्तु असली शिव में रत रहने वाले शिवरती तो महाराज शत्रुदमन सिंह ही थे। षड़ रिपुओं का दमन कर आपने अंतःस्थल में **''शिव''** को सिंचित किया था, अर्थात् अपने नाम को **शत्रु–दमन** करने वाले सिंह के रूप में सार्थक किया था। राजपरिवार में जन्म लेने के कारण उनके राजसी दायित्त्व निवर्हन में भी जन कल्याण हेतु उनका **''शिव''** जागृत रहा करता था।

- भगवान शिव के प्रति आप अपनी कृतज्ञता प्रकट करने हेतु हर सोमवार व शिव रात्रि के दिन आप अपने साधना कक्ष से श्री एकलिंगनाथ जी के लगभग 20 किलोमीटर दूर मन्दिर तक पैदल यात्रा किया करते थे। **''शिव''** का रूप और **''शिव''** के नाम का अन्तर्योग अहर्निश चलता रहता था।

- भारत के कई तीर्थों विशेषतः द्वादश ज्योर्तिलिंगों सोमेश्वर, मल्लिकार्जुन, महाकालेश्वर, औंकारेश्वर, केदारेश्वर, भीमेश्वर, विश्वेश्वर, त्रयम्बकेश्वर, वैद्यनाथ, नागेश्वर, रामेश्वर, धुश्मेश्वर महादेव के पवित्र मंदिरों की यात्रा आप दो बार कर चुके थे। नेपाल के पशुपतिनाथ के अतिरिक्त **कैलाश मानसरोवर** तथा **बाबा अमरनाथ** की यात्रा एवं परिक्रमा भी आप दो बार कर चुके थे। यद्यपि आपने गृहस्थाश्रम नहीं छोड़ा तथापि आप व्यक्तिगत जीवन में किसी सन्यासी से कम नहीं थे।

- आपके सुपुत्र डॉ. अजातशत्रु सिंह एक बार साधना कक्ष के समीप से गुजर रहे थे। उन्होंने सुना कि श्री दाता हुकुम (आपके पिताश्री) किसी से चर्चा कर रहे थे। सहज जिज्ञासावश अजातशत्रु सिंह जी के पांव ठिठक गए। भीतर कौन होगा, इस ऊहापोह में वे कुछ क्षण रूके। पिताश्री की सुनाई दे रही चर्चा किससे हो रही है! जानने का यह विचार जब स्थिर हुआ, तब आपने द्वार खटखटाया। भीतर स्थित महाराज के पदचाप सुनाई दिए। द्वार खुला। पुत्र ने झांक कर देखा कि कक्ष में पिताश्री के अलावा कोई नहीं था। सहज रूप से आपने पूछ लिया। ''दाता हुकम! अभी आप किसी से चर्चा कर रहे थे। वे कौन थे ? ''परमात्मा'' ————————! यह सुनकर पुत्र के पांव जम गये। पुत्र समझ गया कि पिताश्री किसी अन्य स्तर पर अपनी बात कह रहे हैं। अजातशत्रु जी बिना उत्तर दिये पिता जी को प्रणाम कर लौट गए। उस दिन अजातशत्रु जी ने किसी दिव्य संत के कक्ष में फैली सुगंध का अनुभव किया तथा पिताश्री और परमात्मा के बीच के संवादों के बीच व्यवधान डालने का दोष–बोध का भाव लेकर भारी मन से प्रत्यागमन किया।''

- पूज्य शत्रुदमन सिंह जी ने अपने जीवन के बीस वर्ष, गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित श्री रामसुखदास जी द्वारा लिखित **''साधक संजीवनी''** – **भगवद् गीता** पर अपनी ओर से टीका लिखी। इस टीका ग्रंथ में गीता का अनुवाद, समीक्षा तथा श्लोकों पर अपनी टिप्पणियां लिखी। यह सम्पूर्ण सृजन 2694 पृष्ठों का है। इस ग्रंथ की 9 पंजीकाएं निर्मित हुई है, जो सुरक्षित हैं। इसको हस्तलिखित करने में महाराज साहब को बीस वर्ष लगे (2001–2021)। इसके अलावा आप द्वारा रामचरित मानस, सुंदरकांड, हनुमान चालीसा, दुर्गा सप्तशती, गायत्री चालीसा, सती चालीसा, शनि चालीसा आदि ग्रंथों को भी हस्तलिखित रचना की।

  सुना जाता है कि यदि गीता के अठारह अध्यायों को कोई लिख ले, तो उसकी मृत्यु निश्चित रूप से हो जाती है। महाराज शत्रुदमन सिंह जी के साथ भी यही हुआ। गीता पर लिखी टीका के समापन के बाद ही आपने नशवर शरीर छोड़ दिया। देवलोकगमन के पश्चात पूरे शिवरती व निवासरत तितरड़ी ग्राम की सभी स्कूलें, दुकानें उनके सम्मान में बंद की गई। ग्राम वासियों व राजपरिवार के सदस्य व उनके परिवार ने उनका अंतिम संस्कार उनकी कुटिया से लेकर राजपरिवार के लिए निर्धारित आयड़ स्थित महासतियाजी परिसर में राजवंशीय परंपरा के अनुसार किया गया।

- आपश्री ने अभिव्यक्ति की एक प्रतीकात्मक विद्या पर भी पर्याप्त श्रम किया है। वैयक्तिक द्वंद्व, अंतःकरण शुद्धि की दिशा के प्रयत्नों में आने वाली बाधाओं, सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याओं, आपसी कलह और कुंठाओं को कार्टून विधा के माध्यम से उकेरने का

सफल प्रयास किया। आपके समसामयिक विषयों पर आधारित कार्टून देश की कई प्रतिष्ठित पत्रिकाओं, समाचार पत्रों एवं साहित्यिक प्रतिवेदनों में स्थान बना चुके हैं। **''दमन कार्टूनिस्ट''** के नाम से आप प्रसिद्ध थे।

- आप के इस आध्यात्मिक चिंतन से प्रभावित होकर बिलाड़ा से बाला सतीमाता संत चेन कंवर बाई सा मिलने पधारे। इसके अलावा नेपाल से एक साधु (ईश्वर के रूप में) पंडित सिद्धेश्वर महाराज आप से मिलने पधारे। ऐसे कई उदाहरण हैं जीवन में कि कई साधु–संत–महात्मा, आध्यात्मिक आत्माएं आपसे मिलने पधारे।

आशा है कि यह परिवार उसी परंपरा पर अडिग रहते हुए उपनिषदिक संस्कृति में आध्यात्मिक धर्म, लोक शिक्षा का प्रकाश फैलाते रहेंगे। आप को इन पंक्तियों से श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं –

समय के दर्पण में कभी धूमिल न होंगी आपकी तस्वीर ।।

एक अद्भुत व्यक्तित्व, जिनकी अनुपस्थिति हमें सदैव खलती रहेंगी।।

उद्यमिता, कर्तव्यपरायणता और मिलान सारिता से परिपूर्ण आपका जीवन दर्शन हमें सदैव प्रेरित करता रहेगा।।

पाद टिप्पणियाँ –

1) गौरीशंकर हीरचन्द ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, द्वितीय खण्ड, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, पृ. 826–831

2) उपरोक्त, वही, पृ. 827–829

3) उदयपुर राज्य का इतिहास, द्वितीय खण्ड, पृ. 829–31

4) उपरोक्त, वही, पृ. 834–35

5) गौरीशंकर हीरचन्द ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, द्वितीय खण्ड, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, पृ. 838

6) उपरोक्त, वही, पृ. 840–42

7) फोरिन सीक्रेट, आई, मई 1912, नं. 11–15 रा. अ.

8) (क) फोरिर पोलिटिकल सीक्रेट, आई, अक्टूबर 1857 नं. 506 रा. अ.

(ख) फोरिन पोलिटिकल सीक्रेट आई, अगस्त 1857 नं. 506 रा. अ.

(ग) पद्यमि सीता रमैया – कांग्रेस का इतिहास पृ. 5–12

9) (क) इन्द्रविद्या वाचस्पति–आर्य समाज का इतिहास भाग–1, पृ. 133

(ख) के.एस.सक्सेना – राजस्थान में राजनैतिक जन जागरण, पृ. 46

10) (क) एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट ऑफ राजपूताना 1893–94

(ख) के. एस. सक्सेना जन जागरण, पृ. 46

11) (क) एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट ऑफ राजपूताना स्टेट्स–1894–95 पृ. 4

(ख) कोठारी – जीवन चरित्र, पृ. 65

12) (क) के. ए. सक्सेना – पोलिटिकल मुवमेन्ट, पृ. 119

(ख) मनमथ नाथ गुप्त – भारत में सशस्त्र क्रान्ति का रोमांचकारी इतिहास, पृ. 21–22

13) (क) होम पोलिटिकल डिपोजिट अक्टूबर 1909 नं. 16 रा. अ.

(ख) के. एस. सक्सेना जन जागरण पृ. 52

14) (क) फोरिन पोलिटिकल इन्टरनल बी, जुलाई 1916 नं. 136–137 रा. अ.

(ख) सक्सेना – विजयसिंह पथिक, पृ. 97

15) रामनारायण चौधरी – आधुनिक राजस्थान का उत्थान, पृ. 22–23

16) सक्सेना – विजयसिंह पथिक, पृ. 97

17) हरिप्रसाद अग्रवाल – आजादी के दीवाने, पृ. 7

18) (क) सेडिशन कमेटी रिपोर्ट, पृ. 143, रा.रा.अ. बीकानेर

(ख) हरिप्रसाद अग्रवाल – राजस्थान आजादी के दीवाने, पृ. 34–35

19) हरिप्रसाद अग्रवाल – राजस्थान आजादी के दीवाने, पृ. 34–35

20) पृथ्वीसिंह महता – हमारा राजस्थान, पृ. 313

21) (क) ''दि प्रताप कानपुर'' दिनांक 22–3–1920 फाईल नं. 13 रा.रा. अ. बीकानेर

(ख) हरिप्रसाद अग्रवाल – राजस्थानी आजादी के दीवाने, पृ. 9

22) लक्ष्मी अग्रवाल, महाराणा फतहसिंह जी और उनका काल (1884–1930 ई.), पृष्ठ 92–104

23) (क) सक्सेना – बिजोलिया आन्दोलन, पृ. 42–43

(ख) हिस्ट्री ऑफ महाराणा फतहसिंह पृ. 107 स.भ.पु. उदयपुर (ह.ल.)

24) (क) फोरिन इन्टरनल, मार्च 1900 नं. 190 – 208 रा. अ.

(ख) एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट ऑफ राजपूताना स्टेट्स–1899–1900, नं. 119

25) सक्सेना – बिजोलिया आन्दोलन, पृ. 46

26) (क) सक्सेना – विजयसिंह पथिक, पृ. 128

(ख) फोरिन पोलिटिकल सीक्रेट, आई, नं. 596 पी ऑफ 1922–23, रा. अ.

27) फाईल नं. 31/ए 1921–22, मेवाड़ राज्य महकमा खास, रा.रा.अ. बीकानेर

28) (क) फोरिन पोलिटिकल सीक्रेट आई, नं. 956 पी ऑफ 1922–23 रा. अ.

(ख) रामनारायण चौधरी–आधुनिक राजस्थान का उत्थान, पृ. 66–67

29) सक्सेना – बिजोलिया आन्दोलन, पृ. 97

30) फाईल नं. 33/एम.डब्ल्यू.आर. – माणिक्यलाल वर्मा की सेवाएँ, रा. रा. अ. बीकानेर

31) पृथ्वीसिंह महता, हमारा राजस्थान, पृ. 329

32) प्रमोद – बिजोलिया आन्दोलन, पृ. 24

33) महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), अलख पचीसी, भट्ट, श्याम सुन्दर एवं नौशालिया प्रेरणा (सम्पादक), प्रणव प्रकाशन, फतहपुरा उदयपुर, मकर संक्राति, विक्रम संवत् 2079

34) महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), मानवमित्र राम चरित्र, प्रकाशक – महाराणा मेवाड़ पब्लिकेशन ट्रस्ट प्रकाशन, जन्म शती वर्ष 1980 ई.

35) महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), अनुभव प्रकाश, प्रकाशक – महाराणा मेवाड़ पब्लिकेशन ट्रस्ट प्रकाशन, जन्म शती वर्ष 1980 ई.

36) वीरविनोद (दो भाग), ले. कविराजा श्यामलदास (1885 ई.)

37) उदयपुर राज्य का इतिहास (दो भाग), ले. गौरीशंकर हीराचंद ओझा (1928 ई.)

38) टॉड कृत राजपूत जातियों का इतिहास, अनुवादक एवं संपादक – डॉ. देवीलाल पालीवाल (1994 ई.)

39) मेवाड़ का राज्य – प्रबन्ध ले. श्यामस्वरूप कुलश्रेष्ठ (1941 ई.)

40) ओझा, गो. ही., उदयपुर राज्य का इतिहास , भाग–2

41) पुरोहित संग्रह, बैठक की डायरी, 1939 ई., पृष्ठ 28

42) बहिडा, महाराणा भूपाल सिंह जी, पृष्ठ 386

43) निजी जानकारी : शिवरती एवं पुरोहित परिवार

परिशिष्ट :– महाराज शत्रुदमन सिंह हस्तलिखित साधक–संजीवनी के कतिपय पृष्ठ

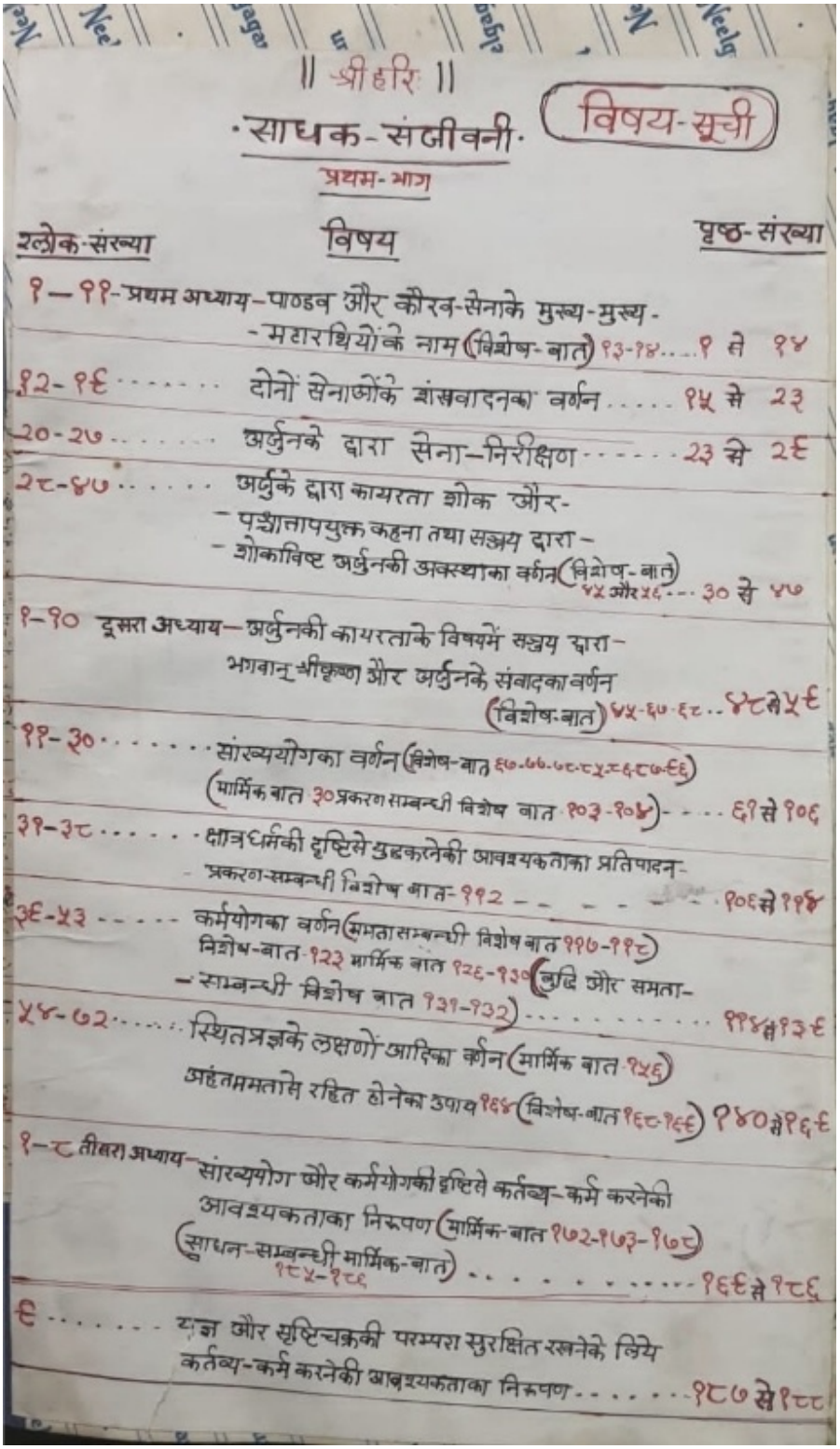

॥ श्रीहरिः ॥

·साधक-संजीवनी· (विषय-सूची)

प्रथम-भाग

श्लोक-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१–११	प्रथम अध्याय–पाण्डव और कौरव-सेनाके मुख्य-मुख्य-महारथियोंके नाम (विशेष-बात) १३-१४	१ से १४
१२-१९	दोनों सेनाओंके शंखवादनका वर्णन	१५ से २३
२०-२७	अर्जुनके द्वारा सेना–निरीक्षण	२३ से २९
२८-४७	अर्जुनके द्वारा कायरता शोक और-पश्चात्तापयुक्त कहना तथा सञ्जय द्वारा-शोकाविष्ट अर्जुनकी अवस्थाका वर्णन (विशेष-बात) ४५ और ४६	३० से ४७
१–१०	दूसरा अध्याय–अर्जुनकी कायरताके विषयमें सञ्जय द्वारा-भगवान् श्रीकृष्ण और अर्जुनके संवादका वर्णन (विशेष-बात) ४५-६७-६८	४८ से ५९
११-३०	सांख्ययोगका वर्णन (विशेष-बात ६७-७७-७८-८५-८६-८७-९९) (मार्मिक बात ३० प्रकरण सम्बन्धी विशेष बात १०३-१०४)	६१ से १०६
३१-३८	क्षात्रधर्मकी दृष्टिसे युद्धकरनेकी आवश्यकताका प्रतिपादन-प्रकरण-सम्बन्धी विशेष बात-११२	१०६ से ११४
३९-५३	कर्मयोगका वर्णन (समता सम्बन्धी विशेष बात ११७-११८) विशेष-बात १२३ मार्मिक बात १२६-१३० (बुद्धि और समता-सम्बन्धी विशेष बात १३१-१३२)	११४ से १३९
५४-७२	स्थितप्रज्ञके लक्षणों आदिका वर्णन (मार्मिक बात १५६) अहंतममतासे रहित होनेका उपाय १६४ (विशेष-बात १६८-१६९)	१४० से १६९
१–८	तीसरा अध्याय–सांख्ययोग और कर्मयोगकी दृष्टिसे कर्तव्य-कर्म करनेकी आवश्यकताका निरूपण (मार्मिक-बात १७२-१७३-१७८) (साधन-सम्बन्धी मार्मिक-बात १८५-१८६)	१६९ से १८६
९	यज्ञ और सृष्टिचक्रकी परम्परा सुरक्षित रखनेके लिये कर्तव्य-कर्म करनेकी आवश्यकताका निरूपण	१८७ से १८८

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

॥ श्रीकृष्णः शरणम् ममः ॥
॥ श्री अर्जुनाय नमः ॥
॥ श्री माँ सरस्वतीनमः ॥
॥ महर्षि वेदव्यासाय नमः ॥

* जो शंखके मुखवाले हैं, भूतगण आदिके द्वारा सेवित हैं, कैश और जामुनके फलोंका बड़े सुन्दर ढंगसे भक्षण करनेवाले हैं, शोकका विनाश करनेवाले हैं, और भगवती उमाके पुत्र हैं, उन विघ्नेश्वर गणेशजीके चरणकमलोंमें मैं प्रणाम करता हूँ।

† योगीलोग ध्यान द्वारा अभूत मनसे किसी निर्गुण और निष्क्रिय परम ज्योतिको देखते हैं तो देखते रहें, पर हमारे लिये तो यमुना के तटपर जो कोई नील तेज दौड़ रहा है, वही नेत्रोंमें चिरकालतक चकाचौंध पैदा करता रहे।

‡ अहो! अब मैं सम्पूर्ण जगतमें स्फुरित होनेवाले निरंजन, अजन्मा और पुराण पुरुषका चिन्तन करता हूँ, तब मेरे हृदयमें अञ्जनसमूह के समान काले वर्णवाला कोई गोपबालक बलात् स्फुरित होने लगता है।

* जिनके पास न विद्या है, न धन है, न कोई सहारा है, जिनमें न कोई गुण है, न वेद-शास्त्रोंका ज्ञान है; जिनको संसारके लोगोंने पापी समझकर त्याग दिया है, ऐसे भक्त भी जिन शरणागतपालक प्रभुकी शरण लेकर सन्त बन जाते और मुक्त हो जाते हैं, उन विश्वविख्यात गुणोंवाले अमन्दात्मा यदुनाथ भगवान् श्रीकृष्णको मैं प्रणाम करता हूँ।

†† जिन करुणासिन्धु भगवान्‌की करुणासे, लेशमात्रसे बालक ध्रुवने अपनी इष्ट वस्तुको प्राप्त करके श्रेष्ठ पुरुषोंके लोकको प्राप्त किया, दरिद्र सुदामाने लक्ष्मीको प्राप्त किया, अजामिल आदि पापियोंने मुक्तिको प्राप्त किया और गोवर्धन पर्वत भी पूज्य बन गया, उन शरणागत भक्तोंको अभीष्ट वस्तु देनेवाले शरण्य भगवान् माधवका मैं नित्य भजन करता हूँ।

⊗ जो वासुदेवजीके पुत्र, दिव्यरूपधारी, कंस एवं चाणूरका नाश करनेवाले और देवकीजीके लिये परम आनन्दस्वरूप हैं, उन जगद्गुरु भगवान् श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ।

× भगवान् श्रीकृष्ण और मनुष्योंमें श्रेष्ठ अर्जुनको तथा सरस्वती और वेदव्यासजीको नमस्कार करके फिर महाभारतका कथन करना चाहिये।

॥ श्री गणेशाय नमः ॥ (1)

श्रीमद्भगवद्गीता (सानुवाद - संजीवनी हिन्दी-टीकासहित)

गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजम्॥ *
ध्यानाभ्यासवशीकृतेन मनसा तन्निर्गुणं निष्क्रियं
ज्योतिः किञ्चन योगिनो यदि परं पश्यन्ति पश्यन्तु ते।
अस्माकं तु तदेव लोचनचमत्काराय भूयाच्चिरं
कालिन्दीपुलिनोदरे किमपि यन्नीलं महो धावति॥ †
यावन्निरञ्जनमजं पुरुषं पुराणं
संचिन्तयामि निखिले जगति स्फुरन्तम्।
तावद् बलात् स्फुरति हन्त हृदन्तरे मे
गोपस्य कोऽपि शिशुरञ्जनपुञ्जमञ्जुः॥ ‡
न विद्या येषां श्रीर्न शरणमपीषन्न च गुणः
परित्यक्ता लोकैरपि कलिनयुक्ताः श्रुतिजडाः।
शरण्यं यं तेऽपि प्रसृतगुणमाश्रित्य सुजना
विमुक्तास्तं वन्दे यदुपतिमहं कृष्णममलम्॥ *
यस्य श्रीकरुणार्णवस्य करुणालेशेन बालो ध्रुवः
स्थैर्यं प्राप्य समाप्तधाम समगाद्ब्रह्मीप्यनिन्द्यश्रियम्।
याता मुक्तिमजामिलादिपतिताः शैलोऽपि पूज्योऽभवत्
तं श्रीमाधवमाश्रितेष्टदमहं नित्यं शरण्यं भजे॥ ††
वासुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम्।
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम्॥ ⊗
नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥ ×

ॐ -- ॐ -- ॐ

अथ प्रथमोऽध्यायः

अवतरणिका—

पाण्डवोंने बारह वर्षका वनवास और एक वर्ष अज्ञातवास समाप्त होने पर जब प्रतिज्ञाके अनुसार अपना आधा राज्य माँगा, तब दुर्योधनने आधा राज्य तो क्या, तीखी सुईकी नोक-जितनी जमीन भी बिना युद्धके देनी स्वीकार नहीं की। अतः पाण्डवोंने माता कुन्तीकी आज्ञाके अनुसार युद्ध करना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार [illegible]

श्रीमद्भगवद्गीता

श्लोक-४१

* जैसे परीक्षामें अनेक विषय होते हैं और उन विषयोंमेंसे किसी विषयमें कम और किसी विषयमें अधिक नम्बर मिलते हैं, उन सभी विषयोंके नम्बरोंको मिलाकर कुल जितने नम्बर आते हैं, उनसे परीक्षाफल तैयार होता है। ऐसे ही प्रत्येक मनुष्यके किसी विषयमें पुण्य अधिक होते हैं और किसी विषयमें पाप अधिक होते हैं, और कुल मिलाकर जितने पाप-पुण्य होते हैं, उनके अनुसार उसको जन्म मिलता है। अगर अलग-अलग विषयोंमें सबके पुण्य-पाप समान होंगे, तो सबको बराबर अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति मिलती, पर ऐसा होता नहीं। इसलिये सभीके पुण्य-पापोंमें अनेक प्रकारका तारतम्य रहता है। यही बात सत्त्वादि गुणोंके विषयमें भी समझनी चाहिये।

परिशिष्ट भाव— चौथे अध्यायमें भगवान्‌ने कहा है कि चारों वर्णोंकी रचना मैंने गुणों और कर्मोंके विभागपूर्वक की है—'गुणकर्मविभागशः' (४/१३) और यहाँ कहते हैं कि चारों वर्णोंके कर्म स्वभावसे उत्पन्न हुए तीनों गुणोंके द्वारा विभक्त किये गये हैं—'स्वभावप्रभवैर्गुणैः'। चौथे अध्यायमें तो चारों वर्णोंके पैदा होनेकी बात है और यहाँ चारों वर्णोंके कर्मोंकी बात है। इसपर कहते हैं चौथे अध्यायमें भगवान्‌ने बताया कि चारों वर्णोंका जन्म पूर्वजन्मके गुणकर्मोंके अनुसार हुआ है और यहाँ बताते हैं कि जन्मके बाद चारों वर्णोंके अमुक-अमुक कर्म होने चाहिये, जिनके अनुसार उनकी आगे जाति होगी।

—x—

श्लोक-४२

सम्बन्ध— अब भगवान् ब्राह्मणके स्वाभाविक कर्म बताते हैं।

शमः "मनका निग्रह करना;	आर्जवम् "शरीर, मन आदिमें सरलता रखना;	आस्तिक्यम् "परलोक और आदिके अस्तित्वका भाव रखना—
दमः "इन्द्रियोंको वशमें करना;	ज्ञानम् "वेद, शास्त्र आदिका ज्ञान होना;	एव "(ये सब-के-सब) ही
तपः "धर्मपालनके लिये कष्ट सहना;	विज्ञानम् "यज्ञविधिको अनुभवमें लाना	ब्रह्मकर्म, स्वभावजम् "ब्राह्मणके स्वाभाविक कर्म हैं।
शौचम् "बाहर-भीतरसे शुद्ध रखना;		
क्षान्तिः "दूसरोंके अपराधको क्षमा करना;	च "और	

दृष्टिसे किसी भी वर्ण, आश्रम, देश, वेश आदिका कोई भी मनुष्य सर्वथा पुण्यात्मा या पापात्मा नहीं हो सकता।

पुण्य-पाप समान होनेपर जो मनुष्य बनता है, उसमें भी अगर देखा जाय तो पुण्य-पापोंका तारतम्य रहता है अर्थात् किसीके पुण्य अधिक होते हैं और किसीके पाप अधिक होते हैं। ऐसे गुणोंका विभाग भी है। कुल मिलाकर सत्त्वगुणकी प्रधानतावाले ऊर्ध्वलोकमें जाते हैं, रजोगुणकी प्रधानतावाले मध्यलोक अर्थात् मनुष्यलोकमें आते हैं और तमोगुणकी प्रधानतावाले अधोगतिमें जाते हैं। इन तीनोंमें भी गुणोंके तारतम्यसे अनेक तरहके भेद होते हैं।

सत्त्वगुणकी प्रधानतासे ब्राह्मण, रजोगुणकी प्रधानता और सत्त्वगुणकी गौणतासे क्षत्रिय, रजोगुणकी प्रधानता और तमोगुणकी गौणतासे वैश्य, तमोगुणकी प्रधानतासे शूद्र होते हैं। यह तो सामान्य रीतिसे गुणोंकी बात बतायी। अब इनके अवान्तर तारतम्यका विचार करते हैं—रजोगुण प्रधान मनुष्योंमें सत्त्वगुणकी प्रधानतावाले ब्राह्मण हुए। इन ब्राह्मणोंमें भी जन्मके भेदसे ऊँच-नीच ब्राह्मण माने जाते हैं और परिस्थितिरूपसे कर्मोंका फल भी कई तरहका आता है अर्थात् सब ब्राह्मणोंकी एक समान अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति नहीं आती। इस दृष्टिसे ब्राह्मणोंमें भी तीनों गुण मानने पड़ेंगे। ऐसे ही क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र भी जन्मसे ऊँच-नीच माने जाते हैं और अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति भी कई तरहकी आती है। इसलिये गीतामें कहा गया है कि तीनों लोकोंमें ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है, जो तीनों गुणोंसे रहित हो (इसी अध्यायका चालीसवाँ श्लोक)।

अब मनुष्येतर योनिवाले पशु-पक्षी आदि हैं, उनमें भी ऊँच-नीच माने जाते हैं; जैसे गाय आदि श्रेष्ठ माने जाते हैं और कुत्ता, गधा, और सूअर आदि नीच माने जाते हैं। कबूतर आदि श्रेष्ठ माने जाते हैं और कौआ, चील आदि नीच माने जाते हैं। इन सबको अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति भी एक समान नहीं मिलती। तात्पर्य है कि ऊर्ध्वगति, मध्यगति और अधोगतिवालोंमें भी कई तरहके जाति-भेद और परिस्थिति-भेद होते हैं।

—x—

श्लोक-४२

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥ ४२॥

व्याख्या— शमः—मनको जहाँ लगाना चाहें, वहीं लग जाय और जहाँसे हटाना चाहें, वहाँसे हट जाय—इस प्रकार मनके निग्रहको शम कहते हैं।

दमः—जिस इन्द्रियसे जब जो काम करना चाहें, तब वह काम कर लें और जिस इन्द्रियको जहाँसे हटाना चाहें, तब वहाँसे हटा लें—इस प्रकार इन्द्रियोंको वशमें करना दम है।

तपः—गीतामें शरीर, वाणी और मनके तपका वर्णन आता है (सत्रहवें अध्यायका चौदहवाँ, पन्द्रहवाँ और सोलहवाँ श्लोक), अतः तपको तो इन्हीं बातोंमें

अध्याय अष्ठम

शोधकार्य की उपलब्धियां, सारांश एवं भावी शोध हेतु सुझाव

अध्याय अष्ठम – शोधकार्य की उपलब्धियां, सारांश एवं भावी शोध हेतु सुझाव

8.0 मेवाड़ राज्य की भौगोलिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि

8.1 मेवाड़–महाराणा का सामन्तों से सम्बन्ध

8.2 दिल्ली दरबार और महाराणा फतहसिंह (1903 ई.)

8.3 द्वितीय दिल्ली दरबार (1911 ई.)

8.4 भावी शोध हेतु सुझाव

परिशिष्ट 1 – मेवाड़ के महाराणा एवं उनके शासन के प्रमुख जागीरदार / ऐतिहासिक पुरूष

परिशिष्ट 2 – मेवाड़ के राजपुरोहितों की वंशावली

परिशिष्ट 3 – पानेरी घराने का सजरा

परिशिष्ट 4 – मेवाड़ रियासत का संविधान

परिशिष्ट 5 – नक्शा जागीरात राज्य मेवाड़ वि.सं. 1907 (ई.सन् 1850)

परिशिष्ट 6 – महाराणा फतहसिंह कालीन मेवाड़ रेजीडेन्ट्स सन् 1884 से 1930 तक की सूची

परिशिष्ट 7 – महाराणा फतहसिंह कालीन भारत के गवर्नर जनरल एवं वायसराय सन् 1884 से 1930 तक की सूची

परिशिष्ट 8 – ठिकाना परसाद (रियासत मेवाड़) की वंशावली

परिशिष्ट 9 – महाराणा भूपालसिंह जी का राज्यारोहण दरबार का दृश्य

परिशिष्ट 10 – मेवाड़ महाराणा के शिविर (कैम्प) की बैठक व्यवस्था

परिशिष्ट 11 – महाराज साहब श्री शिवदानसिंह जी की तस्वीर मय लवाजमा वि.सं. 1994

परिशिष्ट 12 – दसरावा का दरीखाना को तरीको

शोधकार्य की उपलब्धियां, सारांश एवं भावी शोध हेतु सुझाव

8.0 मेवाड़ राज्य की भौगोलिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि –

प्राचीन समय में मेवाड़ क्षेत्र भिन्न–भिन्न समय में अलग–अलग नामों से जाना जाता है। ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी के आस–पास इसे शिविजनपद कहा जाता था। आठवीं–दसवीं शताब्दी से वाग्वट्, मेदपाट और मेवाड़ नामक तीन नामों का उल्लेख प्राप्त होता है। किन्तु मेवाड़ नामक नाम सर्वाधिक प्रचलित रहा है। 19वीं शताब्दी से इस प्रदेश को उदयपुर राज्य भी कहा जाने लगा था। यदि यही मेवाड़ क्षेत्र वर्तमान समय में भारतीय गणतन्त्र के राजस्थान राज्य का उदयपुर संभाग कहलाता है एवं संभाग में सम्मिलित निम्नलिखित जिले हैं – यथा उदयपुर, चित्तौड़ तथा भीलवाड़ा प्राचीन मेवाड़ राज्य के मुख्य भाग थे। शेष दो जिले डूंगरपुर तथा बांसवाड़ा मेवाड़ क्षेत्र की भौगोलिक सीमा में नहीं आते।

राणा अमरसिंह प्रथम के समय में ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो गई थी कि मेवाड़ केवल चावण्ड के पहाड़ी प्रदेश तक सीमित रह गया। किन्तु राणा संग्राम सिंह द्वितीय (1717–1734 ई.) तक मेवाड़ की सीमा पूर्ण बढ़ती रही। इस समय में मेवाड़ राज्य उत्तर–पूर्व में देवली, उत्तर में नसीराबाद के पास तक, पश्चिम–उत्तर तथा पश्चिम में जोधपुर, सिरोही, पश्चिम–दक्षिण में ईडर राज्य के कुछ भाग, दक्षिण में डूंगरपुर, बांसवाड़ा व प्रतापगढ़ राज्य, दक्षिण–पूर्व और दक्षिण में भानपुरा, बुंदी, कोटा तथा उत्तर–पूर्व में जयपुर राज्य की सीमा तक फैला हुआ था। किन्तु 18वीं सदी के पूर्वार्द्ध से मेवाड़ पर मराठों के अतिक्रमण, चौथ तथा सहायता के बदले में प्रदेश के कई गांव एवं परगने अन्य राजपूत शासकों व मराठा

सरदारों द्वारा अधिकृत कर लिए जाने के कारण परिस्थिति पुनः परिवर्तित होने लगी। इस दबाव के परिणामतः घनघौर वन के साथ ही प्रदेश को भूमि की हानि उठानी पड़ी। इसका विवरण निम्न प्रकार से प्राप्त है –

क) राणा जगत सिंह द्वितीय (1734–1751 ई.) के राज्यकाल में राज्य के पूर्वी–पश्चिमी भाग में स्थित रामपुरा का परगना जयपुर शासक सवाई माधवसिंह प्रथम ने मल्हार राव होल्कर को दे दिया था। यह परगना राणा संग्राम सिंह द्वितीय ने 1729 ई. में माधवसिंह को जागीर के रूप में दिया था। किन्तु जयपुर के उत्तराधिकार युद्ध में होल्कर की सामरिक सहायता के बदले में 8,56,985 रू. वार्षिक आय वाला यह परगना जिसका निश्चित क्षेत्रफल ज्ञात नहीं है।

ख) राणा जगतसिंह के पौत्र राणा राजसिंह द्वितीय (1754–1761 ई.) ने चम्बल नदी के निकट स्थित वनखेड़ा, वारड़ा, हिंगलाजगढ़, जामुनिया और बुहड़ 60 लाख रूपया वार्षिक उपज वाले परगने होल्कर के रहन रखे थे। किन्तु पूर्ण राशि चुकता नहीं होने के कारण 1763 ई. में होल्कर द्वारा इन पर स्थायी अधिकार कर लिया गया। इन परगनों का कृषि उत्पादन की दृष्टि से आर्थिक महत्व था। मेवाड़ राज्य को इन परगनों के चले जाने से भूमि के साथ–साथ आर्थिक लाभ से भी वंचित होना पड़ा था।

ग) राणा अरिसिंह (1761–1773 ई.) का शासन काल मेवाड़ में गृह युद्ध तथा जागीरदार – विद्रोह का युग रहा था। राणा ने अपना पक्ष प्रबल करने के लिए कोटा के मुसाहिब झाला जालिम सिंह को चिताखेड़ी की जागीर तथा जोधपुर के शासक महाराणा विजय सिंह को राज्य के उत्तर–पश्चिम में स्थित 80 लाख रूपया वार्षिक

उत्पादन का गोरवाड़ा परगना जागीर में प्रदान किया था। जो कभी मेवाड़ में पुनः सम्मिलित नहीं किया जा सका था।

घ) राणा हम्मीर सिंह के शासन काल (1773–1778 ई.) में माधव राव सिन्धिया ने 1774 ई. में 13,725 रू. वार्षिक उत्पादन के 48 गांव बेंगू जागीर से, 31,451 रू. वार्षिक उत्पादन के 36 गांव, सिंगोली परगने से तथा 3,651 रू. वार्षिक उत्पादन के 18 गांव, भीचोर परगने से लिए थे। इसी प्रकार अहिल्या बाई होल्कर ने भी इसी काल में 10,000 रू. वार्षिक आय वाले 29 गांवों के मोरवण तथा नन्दवास नामक दो परगने के साथ निम्बाहेड़ा को चौथ की बकाया राशि के बदले में स्थाई रूप से अधिकृत कर लिया था।

ड) राणा भीमसिंह के राज्य काल (1778–1828 ई.) में सिन्धिया ने फौज खर्च के बदले राज्य के दक्षिणी–पूर्व में जावद व जीरण नामक क्षेत्र 1788 ई. में और 1800 ई. में अपनी स्व. पत्नि गंगा बाई की छतरी बनाने तथा उसकी व्यवस्था व्यय के बदले में 10 गांव वाला गंगापुर का परगना अपने ग्वालियर राज्य के अन्तर्गत ले लिया था। इस प्रकार फौज खर्च के बदले में झाला जालिम सिंह द्वारा 1802 ई. में जहाजपुर का परगना मेवाड़ से अलग कर दिया गया था जो कि ब्रिटिश–मेवाड़ संधि के पश्चात् तत्कालीन पोलिटिकल एजेन्ट कर्नल टॉड ने 1819 ई. में पुनः मेवाड़ को दिलवाया था।

च) राणा स्वरूप सिंह के शासन (1842–1861 ई.) काल में राज्य की उत्तरी सीमा में रहने वाली मेर और मीणा नामक उपद्रवी जातियों की व्यवस्था और सैनिक छावनी की आवश्यकता हेतु अंग्रेज सरकार

ने मेवाड़ का मेरवाड़ा क्षेत्र स्थाई रूप में अजमेर रेजिडेन्सी के अधीन कर दिया था।

1845 ई. में मेवाड़ के मेरवाड़ा क्षेत्र को अजमेर में मिलाने के पश्चात् मेवाड़ राज्य की सीमा 23.49 से 25.28 उत्तर अक्षांश और 73.1 से 75.49 पूर्व देशान्तर के मध्य फंसी हुई थी। इसका क्षेत्रफल 12,691 वर्गमील अथवा 20,304 वर्ग किलोमीटर था। इस परिधि के उत्तर में अजमेर – मेरवाड़ा व शाहपुरा (फूलिया), पश्चिम में जोधपुर व सिरोही, दक्षिण – पश्चिम में ईडर, दक्षिण में डूंगरपुर, बांसवाड़ा व प्रतापगढ़ राज्य, पूर्व में नीमच, निम्बाहेड़ा तथा कोटा बूंदी राज्य, उत्तर–पूर्व में जयपुर राज्य की सीमाओं से लगी हुई थी। राज्य के 10 गांवों का गंगापुर परगने का भू–भाग सिन्धिया के ग्वालियर राज्य में और 29 गांवों का नन्दवास परगने का क्षेत्र होल्कर के इन्दौर राज्य में स्थित था।

8.1 मेवाड़–महाराणा का सामन्तों से सम्बन्ध –

मेवाड़ के इतिहास में प्रारम्भ से ही सामन्तों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। समय–समय पर महाराणाओं द्वारा उन्हें जागीरें दी जाती थी तथा उनसे अपेक्षा की जाती थी कि वे युद्ध के समय अपने सैन्य दलों के साथ महाराणा को सहयोग प्रदान करें। महाराणा अमरसिंह द्वितीय (1698–1710) ने जागीरों के वार्षिक राजस्व के आधार पर सामन्तों को तीन प्रमुख श्रेणियों में विभाजित कर दिया था। प्रथम श्रेणी के सामन्त 'सोहल' कहलाते थे, द्वितीय श्रेणी के 'बत्तीसा' तथा तृतीय श्रेणी में 'गोल' के सरदार सम्मिलित थे। शनैः शनैः सामन्तों की संख्या में वृद्धि अथवा कमी होती रही और महाराणा फतहसिंह के काल तक पहुँचते–पहुँचते प्रथम श्रेणी के सामन्तों की संख्या 16 से बढ़कर 27 हो गई; वहीं द्वितीय

श्रेणी के सामन्तों की संख्या 32 से घटकर 31 रह गई। 'गोल' के सामन्तों की कोई निश्चित संख्या नहीं थी, परन्तु इनकी संख्या भी समय–समय पर बढ़ती ही रही।

वैसे तो महाराणा और सामन्तों के सम्बन्ध स्वामी और सेवक के थे, परन्तु महाराणा राजसिंह (1653–1680) के पश्चात् मेवाड़ में दुर्बल शासकों का युग प्रारम्भ हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि वहाँ के सामन्त स्वेच्छाचारी बन गये और प्रायः महाराणाओं की आज्ञाओं का उल्लंघन करने लगे।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी से 1818 की सन्धि के पश्चात् भी सामन्तों के व्यवहार में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया। कर्नल जेम्स टॉड ने सामन्तों से महाराणा के सम्बन्ध सुधारने के लिए अथक प्रयास किए जिससे 4 मई 1818 में महाराणा भीमसिंह (1778–1818) के राज्य काल में प्रथम कौलनामे पर सामन्तों के हस्ताक्षर करवाए। महाराणा स्वरूपसिंह के समय में महाराणा और सामन्तों के बीच विवाद मिटाने के लिए ब्रिटिश सरकार की आज्ञा से तत्कालीन पोलिटिकल एजेन्ट जॉर्ज लॉरेन्स ने पुराने कौलनामे के आधार पर 1854 में 30 शर्तों का एक नया कौलनामा तैयार किया। परन्तु इस कौलनामे से भी सामन्त सन्तुष्ट नहीं हुए। जिससे ब्रिटिश सरकार ने उसे रद्द कर दिया। महाराणा शम्भूसिंह और सज्जनसिंह ने सामन्तों के साथ उदारतापूर्ण सम्बन्धों की स्थापना की। महाराणा सज्जनसिंह ने तो 1878 में सामन्तों की इच्छानुसार उनके साथ कलम–बन्दी भी की।

महाराणा फतहसिंह के सिंहासनारूढ़ होते ही उसके और सामन्तों के सम्बन्धों में पुनः परिवर्तन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई। उन्होंने अपने पूर्व के

महाराणाओं की समन्वय की नीति को परिवर्तित कर दिया यहां तक कि ठिकानों के छोटे–मोटे मामलों में भी अपना प्रभुत्व जमाने के लिए उन्होंने हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया। प्रथम श्रेणी के सामन्तों को जो अधिकार और कर्त्तव्य उनके ठिकानों में थे, तथा जिनमें महाराणा किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं कर सकते थे उनको भी उन्होंने स्वीकार नहीं किया। सामन्तों के छटून्द–चाकरी, नजराना–शुल्क, तलवार–बन्दी, राजदरबार में शिष्टाचार, दीवानी, फौजदारी–मुकदमे, उत्तराधिकारी के मामले आदि में सदैव मतभेद की स्थिति उत्पन्न हो जाती थी जिनमें महाराणा प्रायः स्वयं के निर्णय को प्राथमिकता दिलवाने का प्रयास करते थे।

फलतः महाराणा और सामन्त दोनों ही 1878 की कलमबन्दी की शर्तों की उल्लंघन करने लगे, कई सामन्त महाराणा के आदेशों की अवज्ञा करने लगे यहाँ तक कि उन्होंने दशहरा और अन्य त्यौहारों के अवसर पर उदयपुर जाकर महाराणा की चाकरी करना और नजराना देना भी बन्द कर दिया। इसके प्रत्युत्तर में महाराणा ने दृढ़ रख अपनाया तथा सामन्तों को अपने नियन्त्रण में करने और उनको दबाने की नीति अपनाई जिससे उनकी प्रभुता बनी रहे। इससे सामन्तों का धैर्य टूट गया और उन्होंने अपनी सम्पूर्ण शिकायतों को 53 परिच्छेद में विभाजित कर 1898 में एक ज्ञापन के रूप में महाराणा को प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् 1899 में गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया के समक्ष भी इसी प्रकार का ज्ञापन पेश किया गया। उस ज्ञापन की निम्नांकित मुख्य बातें थीं –

ठिकानों के दिवानी और फौजदारी अधिकारों में महाराणा का हस्तक्षेप, सीमा विवादों को निपटाने में अनियमितता, पूर्व महाराणाओं द्वारा सामन्तों को दिये गये सम्मान सूचक चिन्हों का प्रयोग न करने देना, सामन्तों की समस्याओं का निराकरण महकमाखास द्वारा जानबूझ कर देर

से करना, 'नजराना' और 'तलवारबन्दी' शुल्क और अधिक मात्रा में लिया जाना, पट्टों के नवीनीकरण की समस्या, लगान, सिंचाई, सेना, शिकार, नमक, चूंगी, व्यापार आदि पर कर लगाना, नमक का मुआवजा समय पर प्राप्त नहीं होना, जागीरों में अल्पायु उत्तराधिकारी के मामलों में अनावश्यक हस्तक्षेप, महाराणा जो ऋण मांगते थे उसका भुगतान करने पर भी समस्या का समाधान नहीं, दशहरा और अन्य अवसरों पर चाकरी की समस्या, राजकीय कार्यों में सामन्तों से विचार विमर्श नहीं करना, 1878 की कलमबन्दी की शर्तों का उल्लंघन, सामन्तों के परम्परागत अधिकारों पर कुठाराघात और महाराणा सज्जनसिंह द्वारा निर्मित सामन्तों की समिति आमन्त्रित नहीं करना आदि।

यह स्वाभाविक ही था कि जिस प्रकार मेवाड़ का सामन्तवर्ग महाराणा के विरूद्ध हो रहा था उसी प्रकार महाराणा भी अपने सामन्तों से सन्तुष्ट नहीं थे। अतः उन्होंने भी अपनी ओर से ब्रिटिश सरकार को इन सामन्तों के व्यवहार के विरूद्ध शिकायत की। महाराणा ने सामन्तों पर आक्षेप लगाये कि वे परम्परानुसार न राज्य की चाकरी करते हैं न पूरा 'छटून्द' ही देते हैं। उनका व्यवहार ऐसा है जिससे महाराणा के सम्मान और प्रतिष्ठा को आघात पहुँचता है, वे राज्य की वृद्धि और उन्नति के कार्यों में भी मदद नहीं करते। इसके अतिरिक्त महाराणा ने यह भी कहा कि ये सामन्त कर्त्तव्य विमुख होकर आलस्य और विलासतापूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं। ब्रिटिश सरकार ने इस विषय में तटस्थता की नीति का पालन करना उचित समझा और इसे आन्तरिक मामले की संज्ञा देकर सहायता करने से इनकार कर दिया।

महाराणा फतहसिंह के शासन काल में सामन्तों से सम्बन्धित मुख्य प्रश्न शाहपुरा, द्वारा मेवाड़ से पृथक होने का प्रयास, देलवाड़ा उत्तराधिकारी

विवाद, आमेट तथा मेजा के मध्य क्षतिपूर्ति विवाद तथा जवास उत्तराधिकारी विवाद थे।

8.2 दिल्ली दरबार और महाराणा फतहसिंह (1903 ई.) –

महाराणा फतहसिंह ने अपने व्यक्तित्व की स्वतन्त्रता और ब्रिटिश सरकार से समानता का सबसे अधिक प्रदर्शन देहली में आयोजित दो दरबार समारोहों के समय किया था। लॉर्ड कर्जन द्वारा 1 जनवरी 1903 को महारानी विक्टोरिया के उत्तराधिकारी एडवर्ड सप्तम के ब्रिटिश सम्राट बनने के उपलक्ष में दिल्ली में एक विशाल दरबार का आयोजन निर्धारित किया गया। इसके द्वारा कर्जन सम्पूर्ण भारत के राजा महाराजाओं तथा नरेशों को दिल्ली में एकत्र करके ब्रिटिश सार्वभौम सत्ता के प्रति भारतीयों की राजभक्ति का विराट प्रदर्शन करवाना चाहता था। तदनुसार उसने भारत के समस्त राजाओं को उस दरबार में सम्मिलित होने के लिये आमंत्रित किया। परन्तु प्रारंभ से ही उसने अनुभव किया कि मेवाड़ के महाराणा, जो कि सम्पूर्ण भारत में राष्ट्रीयता के प्रतीक माने जाते हैं, उस समारोह में सम्मिलित नहीं होगे। महाराणा फतहसिंह को जब दिल्ली दरबार में सम्मिलित होने का निमंत्रण प्राप्त हुआ तो उन्होंने अपने बड़े भाई गजसिंह की मृत्यु का कारण बतला कर उपस्थित होने में असमर्थता प्रकट की। अतः 15 नवंबर 1902 को लॉर्ड एवं लेडी कर्जन ने उदयपुर की यात्रा। तथा महाराणा को इस आश्वसन पर तैयार कर लिया कि उन्हें अन्य नरेशों की अपेक्षा सर्वोच्च स्थान दिया जावेगा।

उक्त आश्वासन को ध्यान में रखते हुये महाराणा फतहसिंह दिल्ली दरबार में सम्मिलित होने के लिये 31 दिसम्बर को उदयपुर से रवाना हुये। परन्तु जब वे दिल्ली पहुँचे तो उन्हें पता चला कि कर्जन के स्पष्ट

आश्वासन के उपरान्त भी उनका स्थान सर्वप्रथम न रखकर हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा और कश्मीर से नीचे रखा गया है अतः वे अपनी और पुत्र की बीमारी का बहाना बना कर रेल के डिब्बे से भी बाहर नहीं निकले और पुनः उदयपुर लौट गये।

वास्तव में महाराणा के 1903 के दरबार में सम्मिलित न होने का प्रश्न बड़ा जटिल और विवाद पूर्ण है। इसके सम्बन्ध में गौरीशंकर हीराचन्द ओझा की मान्यता है कि उदयपुर से दिल्ली तक की लम्बी रेल यात्रा के कारण वृद्ध महाराणा को ज्वर हो गया और इसी कारण से उन्होंने समारोह में भाग नहीं लिया। पृथ्वीसिंह महता और तेजसिंह कोठारी की मान्यता है कि महाराणा को दिल्ली पहुँचने पर आभास हुआ कि समारोह में उनका स्थान हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा और कश्मीर के राजाओं के पश्चात् रखा गया है अतः उन्होंने मेवाड़ के सम्मान को ध्यान में रखते हुए दिल्ली स्टेशन से ही उदयपुर लौटने का निश्चय कर लिया। इसके अतिरिक्त हरिप्रसाद अग्रवाल का विचार है कि शाहपुरा के केसरीसिंह बारहठ द्वारा रचित राजस्थानी कविता ''चेतावनी का चुंगट्या'' का महाराज के ऊपर गहरा प्रभाव पड़ा। ऐसा अनुमान है कि वह कविता महाराणा को चित्तौड़, निकलने के पश्चात् प्राप्त हुई यदि उदयपुर में ही प्राप्त हो जाती तो संभवतः उनकी दिल्ली यात्रा का कार्यक्रम स्थगित ही कर दिया जाता।

अमरसिंह की धारणा है कि महाराणा फतहसिंह दिल्ली दरबार में नहीं जाना चाहते थे किन्तु उन्हें जाने के लिये विवश कर दिया गया। वे दरबार समारोह समय से पहले दिल्ली पहुँचे परन्तु किसी भी राजकीय उत्सव में सम्मिलित नहीं हुए और न शाही जूलूस में ही भाग लिया। महाराणा अपने खेमे में ही रहे और कहते रहे कि उन्हें पेचिश की शिकायत है।

विभिन्न इतिहासकारों द्वारा दिये गये अनुमानों और मतों तथा व्यक्तिगत साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर यही निष्कर्ष निकलता है कि महाराणा की यह अपेक्षा थी कि ब्रिटिश सरकार द्वारा उन्हें भारत के समस्त राजाओं में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया जावेगा। परन्तु वहाँ पहुँच कर जब उन्हे ज्ञात हुआ कि उनका स्थान हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा तथा कश्मीर के राजाओं से भी नीचे रखा गया था तो उन्होंने स्वयं की रुग्णता का बहाना लेकर उस समारोह का पूर्ण बहिष्कार किया।

8.3 द्वितीय दिल्ली दरबार (1911 ई.) –

1910 में एडवर्ड सप्तम की मृत्यु के पश्चात् उनका लड़का जार्ज पंचम गद्दी पर बैठा। इससे पूर्व ब्रिटेन के किसी भी सम्राट अथवा साम्राज्ञी ने भारत यात्रा नहीं की थी। जार्ज पंचम ही ऐसा प्रथम सम्राट था जो भारत भ्रमण पर आया। उसके इस भ्रमण उपलक्ष में 12 दिसम्बर 1911 को दिल्ली में द्वितीय दरबार का आयोजन किया गया और भारत के समस्त शासकों को दरबार में सम्मिलित होने का एक बार पुनः निमंत्रण दिया गया। जब महाराणा फतहसिंह को यह निमंत्रण प्राप्त हुआ तो उन्होंने 1903 की भाँति ही अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न उठाया। अपने प्रतिवेदन में महाराणा ने उल्लेख किया कि वे किसी भी स्थिति में अन्य देशी नरेशों से निम्न स्थान ग्रहण नहीं करेंगे। महाराणा ने यह भी सुझाव दिया कि यदि उनकी माँग को स्वीकार नहीं किया जा सके तो उन्हें किसी अन्य अवसर पर सम्राट के समक्ष उपस्थित होने की अनुमति दी जाये तथा उक्त समारोह से उन्हें मुक्त रखा जावे।

महाराणा के प्रस्ताव के सन्दर्भ में ए. जी. जी. कोलवीन ने भारत सर कार के विदेश विभाग को सूचित किया कि यद्यपि वह महाराणा की स्थिति

से अत्यन्त सहानुभूति रखता है परन्तु उनको समारोह से मुक्त रखे जाने का सुझाव ब्रिटिश राजभक्ति की कमी के कारण है। दिल्ली उपस्थिति से मुक्त रखा जाना महाराणा की समस्त कठिनाइयों का एक सरल उपाय है, किन्तु फिर भी इसके लिये सिफारिश करने में मैं असमर्थ हूँ। क्योंकि यदि उन्हें दरबार में उपस्थित होने से मुक्त कर दिया जाता है तो यह एक उदाहरण बन जायेगा तथा उनका अनुसरण करके प्रत्येक राजा ब्रिटिश दरबार में अपने स्थान व क्रम से असन्तुष्ट होने का आधार लेकर उपस्थित होने से मुक्त होना चाहेगा। अतः मैं यह राय देता हूं कि महराणा को शाही दरबार में उपस्थिति से मुक्त न रखे जाने की सूचना के साथ साथ यह आश्वासन दिया जाय कि दरबार में उन्हें विशिष्ट पद दिये जाने पर विचार किया जायेगा। अतः ब्रिटिश सरकार ने महाराणा को सूचित किया कि उन्हें विश्वास रखना चाहिये कि बैठकों तथा समारोहों के अवसर पर मेवाड़ घराने के पद व प्रतिष्ठा का पूरा ध्यान रखा जायेगा। यदि इसके उपरान्त भी समुचित कारणों के न होने पर भी, महाराणा दरबार में उपस्थित होने में असमर्थ रहते हैं तो उनके साथ सख्त कार्यवाही की जायेगी।

परन्तु महाराणा इस बात पर अटल थे कि जब तक उन्हें भारत के राजाओं में सर्वश्रेष्ठ पद नहीं दिया जायेगा तब तक वे जुलूस में सम्मिलित नहीं होंगे और न ही नजराना पेश करेंगे। अतः उन्होंने पुनः ब्रिटिश सरकार को पद एवं स्थान के निर्धारण में सावधानी पूर्वक विचार करने को लिखा।

महाराणा के इस तर्क की पुष्टि करते हुए रेजीडेंट जे.एल.केई. ने ए. जी.जी. कोलवीन को सूचित किया कि 'महाराणा की गरिमा व पद का प्रश्न 1903 के दरबार की अपेक्षा 1911 के दरबार में बहुत बड़ा है। अतः महाराणा के मस्तिष्क में अपने पद व प्रतिष्ठा सम्बन्धित जो प्रश्न उठे हैं वे

पूर्व से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।' यद्यपि ब्रिटिश सरकार ने महाराणा के इन तर्कों को प्रारंभ में स्वीकार नहीं किया परन्तु जब उसे यह ज्ञात हुआ कि महाराणा इस व्यवस्था के अतिरिक्त किसी प्रकार भी दरबार में उपस्थित नहीं होंगे तो विवश होकर यह निर्णय लिया कि सम्राट एवं सामाज्ञी के शालीनगढ़ रेलवे स्टेशन पर पहुँचने पर स्वागत में महाराणा को मैसूर, हैदराबाद, बड़ौदा और कश्मीर के शासकों से आगे रखा जायेगा तथा उन्हें नजराना पेश करने से मुक्त रखा जायेगा। महाराणा को शाही दरबार के शामियानों में सम्राट के अन्य सहायकों के साथ स्थान दिया जायेगा। उनके लिये एक नये पद 'रूलिंग चीफ इन वेटिंग' का भी सृजन किया गया। अतः सम्राट के दिल्ली आगमन पर वे स्टेशन पर उतरे तो सर्वप्रथम महाराणा का परिचय कराया गया और उनसे मिलाया गया। वहाँ तत्कालीन वाइसराय लार्ड हार्डिंग्ज और कई भारतीय नरेशों से भी उनकी भेंट हुई।

शाही दम्पति से परिचय की बात तो महाराणा की प्रतिष्ठा के अनुकूल हो गई परन्तु जुलूस के समय उनका हाथी बड़ौदा के हाथी के पीछे रखा गया। अतः महाराणा जुलूस में सम्मिलित नहीं हुऐ। उन्होंने अक्समात तबियत खराब होने का बहाना और दरबार में उपस्थिति होने में अपनी असमर्थता प्रकट की। इसके उपरान्त भी जब तक दरबार चलता रहा वे दिल्ली में ही रहे।

2 जनवरी को महाराणा ने देहली से उदयपुर के लिये प्रस्थान किया। इस प्रकार से उन्होंने एक रूप से 1911 के दरबार का भी बहिष्कार ही किया।

महाराणा के ब्रिटिश गवर्नमेन्ट द्वारा आयोजित 1903 और 1911 के शाही दरबारों में सम्मिलित न होने से ब्रिटिश सरकार बहुत क्षुब्ध हुई, यहां तक कि उनके राजनैतिक अधिकारियों ने महाराणा को कठोरतम सजा के रूप में गद्दी च्युत करने की योजना बना ली। इस प्रश्न पर राजपूताना के ए.जी.जी. कोल्विन ने गम्भीरता पूर्वक विचार किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि कुछ भी दण्ड दिया जाय परन्तु महाराणा को गद्दी से अपदस्थ नहीं किया जा सकता। क्योंकि सम्पूर्ण राजपूताना के शासकों के हृदयों में उनके लिये उच्च स्थान है। यदि उनको दण्ड दिया जायेगा तो ब्रिटिश सरकार को सम्पूर्ण राजपूत जाति से टक्कर लेनी पड़ेगी।

अतः ब्रिटिश सरकार ने उनके विरूद्ध कोई कदम नहीं उठाया। स्वयं सम्राट ने उनकी प्रतिष्ठा तथा मान मर्यादा का विचार करके उन्हें जी.सी. आई.ई. (नाईट ग्रान्ड कमान्डर आफ दी ईमीनेन्ट आर्डर आफ दी इन्डियन एम्पायर) की उपाधि से सम्मानित किया।

प्रथम आंग्ल–मराठा युद्ध और सालबही सन्धि (1782) के बाद महादाजी सिन्धिया उत्तर भारतीय राजनीति का सर्वमान्य शक्तिशाली सर्वमान्य नायक था। इसी अवधि में मेवाड़ की राजनीति में शक्तावतों और चुण्डावतों के मध्य मेवाड़ प्रशासन में अपनी प्रभुता और प्रभाव बनाने के लिये परस्पर संघर्षरत थे। इस कारण मेवाड़ महाराणा राज्य के सामन्तों और जागीरदारों के कुलीन शत्रुता का शिकार हो चुका था। इसी कारण भीण्डर का मोहकम सिंह शक्तावत और सलूम्बर रावत भीमसिंह चुण्डावत के मध्य संघर्ष झाला जालमसिंह कोटा ने मध्यस्था की और एक समझौता दोनों के मध्य हुआ था किन्तु सलूम्बर के रावत भीमसिंह चूणडावत उस समझौते का पालन नहीं किया इस कारण मेवाड़ में शक्तावतों और चूण्डावतों की प्रतिस्पर्धा में मराठा नेता महादाजी सिन्धिया ने सैन्य

कार्यवाही कर दी। अर्थात मेवाड़ की राजनीति में मराठों का हस्तक्षेप और आक्रमणों का सिलसिला प्रारम्भ हो गया।

अभी तक मेवाड़ के इतिहास में राजपूत वर्ग के महान त्याग, शौर्य एवं बलिदान की ही महिमा का चित्रण पढ़ने एवं इतिहास लेखन के विधिशास्त्र के आधारभूत तत्वों तक सीमित रहा है। प्रस्तुत शोधकार्य का यह निष्कर्ष निम्न बिन्दुओं में उल्लेखनीय है –

1) मेवाड़ के शासन प्रबन्ध में प्रारम्भिक काल से ही राज्य के महत्वपूर्ण पदों पर सेवाकार्य करने वालों में सेन्यसेवाओं में ब्राह्मण (पाणेरी, पालीवाल, बड़वा) वैश्य (बोलिया घराना, भामाशाह कावड़िया घराना, मेहता चील जी घराना, मेहता बच्छावत, कोठारी) कायस्थ, चारण जनजातीय वर्ग में भील–गरासिया, मीणा, मेर–मेवों की अहम भूमिका थी। उदाहरणार्थ जब मेवाड़ की राजधानी नागदा थी तब स्थानीय बाह्य घरानों के जोशी, मेहता, पानेरी, पालीवाल, नागदा के इत्यादि नाम जातिय वर्गों ने अरबों, तूर्कों व मुगल, मराठा आक्रमणों के दौरान राजपूत वर्गीय जागीरदार सामन्तों के साथ प्रथम पंक्ति में शौय बलिदान दिया था, इसी कारण बप्पारावल, खुमाणरावल जैत्रसिंह, समरसिंह एवं रावल रतनसिंह के समय नागदा – दिवेर भूताला, चित्तौड़ में राज्य की सुरक्षार्थ युद्धों में बलिदान दिया, जिनके स्मारक नागदा एकलिंगजी, चीरवा घाटा, दीवेर तथा चित्तौड़ में देखे जा सकते हैं। उपलब्ध ताम्रपत्रों, अभिलेखों, शिलालेखों के साथ जनश्रुतियों व स्थानीय ब्राह्मणों के परिवारों से लिये गये साक्षात्कार से यह प्रमाणित हो चुका है कि ऐसी गैर राजपूतवर्ग के विभिन्न ब्राह्मण व उनकी उपजातियों को उनकी राज्य की सेवार्थ धार्मिक एवं सैन्य सेवा के लिये गांव के गांव की भूमि स्थानीय समुदायों को पीढ़ी दर पीढ़ी तक भोग उपभोग प्रदान की जाती रही और ऐसे भूदान पत्रों–पट्टों, परवानों,

शिलालेखों के युद्ध व दुष्काल में विलुप्त होने के बाद भी राज्य के पूर्ववर्ती शासकों द्वारा दत्त प्रदत भूदान में प्रदत कर मुक्त भूमि का नवीनीकरण समय समय पर होता रहा।

मैनें ऐसे सैंकड़ों ताम्रपत्रों, शिलालेखों, सती स्तम्भों, सुरह लेखें को मेवाड़ के राजकीय व निजी शोध संस्थानों में देखे तथा उनमें से कुछ नमूनों के तौर पर प्रकाशित एवं अप्रकाशित ताम्र पत्रों को यथा स्थान प्रत्येक अध्याय के अन्त में परिशिष्टों में दर्शायें है जिनमें चित्तौड़ की तलहटी के सेंती में पाणेरी को देय ताम्रपत्र, ग्राम, गवारड़ी, खेरोदा, बड़गांव मेनार, घासा गांव गुड़ला, नागदा आहड़ परगनों में पुरोहित, पालीवाल चीरवा के नागदा–मेनारिया–पाणेरी घरानों को ताम्रपत्रों में महाराणा रायमल मोकल, उदयसिंह, प्रताप, अमरसिंह प्रथम, जगतसिंह, राजसिंह, जयसिंह, एवं अमरसिंह द्वितीय, भीमसिंह, जवानसिंह, महाराणा संग्राम सिंह के द्वारा जारी प्रमाणित ताम्रपत्रों की सूची एवं उनका विवरण प्रस्तुत किया है।

2) सम्पूर्ण शोध कार्य से यह प्रमाणित होता है कि उत्तर भारत की राजनीति और मेवाड़ मराठा आक्रमणों के दौरान महादजी सिन्धिया के सेनानायकों में सदाशिव राव तथा मल्हार बारले, मराठा पेशवा बालाजी बाजी राव का भाई सदाशिव भाऊ मराठा कालीन विदेश विभाग के विभागाध्यक्ष थे और समस्त आंग्ल–मराठा एवं मराठा–राजपूतों के सम्बन्धों में प्रशासनिक सलाहकार थे। पेशवा का भाई सदाशिव भाऊ महादजी सिन्धिया का दीवान था।

3) महाराणा अमरसिंह द्वितीय से महाराणा भीमसिंह के शासन काल तक सम्पूर्ण मेवाड़ आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से उतना अधिक शक्तिशाली और सम्पन्न नहीं था जितना कि महाराणा राजसिंह के शासन

काल तक था। यह भी सिद्ध हुआ कि 1707 ई. से 1720 ई. तक दिल्ली में मुगल साम्राज्य औरंगजैब की मृत्यु के बाद छिन्न–भिन्न हो गया था। इस कारण राजस्थान के समस्त राजपूत नरेश मुगलों की अधीनता से मुक्त होने के पक्ष में थे। परन्तु मराठों ने अटक से कटक तक अपने साम्राज्य को फैलाने का प्रयास किया। इसी कारण महादजी सिन्धिया के सेनानायकों और पेशवा के भाई सदाशिव भाऊ ने 1761 ई. के पानीपत के तृतीय युद्ध के पूर्व दिल्ली, आगरा, पंजाब पर आक्रमण किए किन्तु मराठों की इस युद्ध में न केवल पराजय हुई बल्कि उनका सम्पूर्ण भारत में प्रभाव समाप्त प्रायः हो गया था क्योंकि ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने आंग्ल मराठा युद्ध के दौरान मराठों को परास्त कर उत्तर भारत में भी अपना प्रभुत्व स्थापित किया।

सन् 1788 ई. में मेवाड़ का मराठों के विरूद्ध प्रतिरोध चरम सीमा पर था किन्तु दरबार में गुटबन्दी और परस्पर गृहयुद्ध के कारण हड़किया खाल की लड़ाई में पराजय का सामना करना पड़ा। इस समय राजस्थान के समस्त राजपूत राजाओं ने मराठों के विरूद्ध भले ही युद्ध किया हो परन्तु हड़किया खाल युद्ध में पराजय के कारण मराठों का मेवाड़ पर हस्तक्षेप प्रारम्भ हुआ।

शक्तावत चूण्डावत गुटबन्दी मेवाड़ में मराठा हस्तक्षेप प्रशासन में रक्तपात प्रधान सोमचन्द गांधी की हत्या मेवाड़ के गृहयुद्ध में मराठा आक्रमण 1772 ई. से 1795 ई. तक महादजी सिन्धिया का देवगढ़ भीलवाड़ा से नाथद्वारा आगमन अगस्त 1789 ई. यहां नाथद्वारा में महाराणा का प्रतिनिधि व जालमसिंह उसे अगवानी में आए।

सितम्बर 1791 ई. में मेवाड़ मराठा समझौता 60 लाख में तय 10 सैन्य दल से शक्ति बाबत् छूट दी थी। 10 लाख देवगढ़ से व 1 लाख बनेड़ा से वसूलना था अम्बाजी डूंगरिया को नियुक्त किया गया। कर वसूली का कार्य कठिन समझ महादजी व महाराणा के मध्य नाहर मगरा में भेंट हुई झाला जालमसिंह प्रधान शाह सतीदास देलवाड़ा का कल्याण सिंह झाला महाराणा के साथ था। अन्त में चित्तौड़ में सेंथी में महाराणा व महादजी मिले। अम्बाजी ईग्ले के प्रयासों से रावत भीमा से समझौता कर चित्तौड़ खाली किया नवम्बर 1791 महादजी ने अम्बाजी ईग्ले को मेवाड़ में प्रशासक नियुक्त कर पुनः चला गया। मेवाड़ के प्रशासन में मराठा ब्राह्मणों में देशस्थ ब्राह्मण व शैणवी ब्राह्मण दो दल का योगदान था। इनकी एक ही शाखा से मुख्य नायक था रघुनाथ मल्हार कुलकर्णी जो कि इतिहास में अम्बा व चिटनीस कृष्णोबा चीटनीस व गोपाल भट्ट के नाम से लोकप्रिय थे। इसी अवधि में लकवा दादा नारायण, जीवाजी, बालाजी, पींगले प्रमुख थे तत्कालीन मराठा कालीन मौलिक अभिलेखों से ज्ञात होता है कि महादाजी सिन्धिया की सम्पूर्ण सैन्य बल के नायक जीवाजी बल्लाल और जीवा दादा बक्शी थे। ये सभी समस्त मराठा दरबार शैणवी ब्राह्मण थे।

दीवान मोजीराम बोलिया द्वारा मराठा सेन्य शक्ति का प्रतिरोध राजमहल में मराठा नायक बालेराव व उदयकंवर को बन्दी बनाकर रखा। झाला जालम सिंह द्वारा मराठा नेता बालेराव व अन्य को मुक्त कराया गया। चेजाघाटी का 5 दिन तक सन् 1803 का युद्ध झाला जालिम सिंह शक्तावत व लावासरदारगढ़ की सेना ने चूण्डावत नेतृत्व महाराणा से संघर्ष किया रामपुरा के शासक खींची बलवन्त सिंह भी पहुँचा। महाराणा की अस्थिर नीति से उसने मराठों से समझौता किया जालिम सिंह से सम्बन्ध बनाये रखा। झाला जालमसिंह ने चेजाघाटी युद्ध में मराठों का सहयोग

कर मेवाड़ के द्वारा पकड़े मराठा नेताओं को मुक्त कराया फलतः उसे युद्ध खर्च हेतु परगना जहाजपुर मिला वहां उसने विष्णु सिंह शक्तावत को कीलेदार रखा।

यदि इस अवधि में राजस्थान के समस्त राजपूत राजाओं ने संगठित होकर मराठा आक्रमणों के विरूद्ध एकमत होकर युद्ध किया होता और अपनी जातीय शत्रुता से हट कर भारत में हिन्दु साम्राज्य की स्थापना का प्रयास किया होता तो निश्चय ही मुगल साम्राज्य के पतन का लाभ उठाकर भारत में मेवाड़ के झण्डे के नीचे हिन्द साम्राज्य स्थापित हो सकता था।

इस शोध कार्य से यह भी प्रमाणित हुआ कि जिस प्रकार मुगल साम्राज्य के अन्तिम कमजोर शासक शाहआलम द्वितीय और उसके पूर्ववर्ती और पश्चवर्ती शासक राजधानी दिल्ली में दल बन्दियों से ग्रसित थे क्योंकि वहाँ शासन में सत्ता के लिए ईरानी–तुरानी, शिया–सुन्नी, मुस्लिम–हिन्दू वर्गों में प्रतिस्पर्धा थी। स्वयं वजीर के पद के लिए अवध का नवाब और दक्षिण में हैदराबाद के निजाम के मध्य शत्रुता थी। जिसका लाभ अहमदशाह अब्दाली ने 1755 ई. से 1761 ई. तक उठाया और दिल्ली पर अफगानों का अधिकार हो गया। ठीक उसी प्रकार मेवाड़ में भी मेवाड़ के महाराणा अरिसिंह द्वितीय के समय से महाराणा भीमसिंह के समय तक दरबार में दल बन्दी थी। यहाँ शक्तवात–चुण्डावत वर्गों में निरन्तर मतभेद और शत्रुता बनी रही। इस कारण मेवाड़ में महाराणा की पद गरिमा शक्ति और उसका अधिकार नाममात्र का रहा। प्रधान पद प्राप्ति के लिए वैश्य वर्ग में मेहता (चील जी मेहता), मेहता (बच्छावत) घराने में वैमनस्य था तो इसका लाभ अन्य वर्ग के महत्वाकांक्षी पदाधिकारी उठा रहे थे। यह ज्ञात हुआ कि मेवाड़ के संक्रमणकालीन अवधि में ब्राह्मण वर्ग का शक्तिशाली

और बुद्धिमान तथा सुयोग्य व्यक्ति ठाकुर अमरचन्द बड़वा को प्रधान का पद प्राप्त हुआ जिसने मराठों को न केवल मेवाड़ की सीमा से निष्कासित किया बल्कि उसने उदयपुर राजधानी की सुरक्षा के लिए मजबूत परकोटे और द्वार बनवाए जिन पर तोपें लगवाई गई और उसने मराठा आक्रमणों से राज्य की रक्षा की। महाराणा की दुर्बल मानसिकता के कारण शक्तावतों, चुण्डावतों ने अपने पक्षधर व्यक्ति को प्रधान पद पर नियुक्त करने का क्रम जारी रखा परिणाम यह हुआ कि इस अवधि में प्रधान सोमचन्द गांधी की हत्या हो गई और उसके बाद भी प्रधान पद सामन्तों के स्वार्थ का एक उपकरण बन गया था। यह भी देखा गया कि मराठा आक्रमणों का शिकार स्वयं महाराणा भीमसिंह की सुन्दर कन्या कृष्णाकुमारी के विवाह का प्रकरण 10 वर्षों तक उलझा रहा क्योंकि कृष्णाकुमारी के विवाह को लेकर जयपुर, जोधपुर के शासकों ने मराठा होल्कर–सिन्धिया और अमीरखां पिण्डारी की सहायता मांगी। इस कारण समस्त राजपूताना मराठा आक्रमणों, उनके आतंक, लूटपाट का मैदान बन गया। अन्ततः समस्त राजपूत राजाओं ने मराठा–पिण्डारी आक्रमणों के विरूद्ध सन् 1818 ई. में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के साथ सहयोग और सहायता की सन्धि की। इस शोध से यह सिद्ध होता है कि मेवाड़ सन् 1791 ई. से 1818 ई. तक मराठों का संरक्षित राज्य बन गया और सन् 1818 ई. से 1947 ई. तक यानि राजस्थान की रिसायातों के एकीकरण और उनके भारत संघ में मिलने तक मेवाड़ समस्त देशी राज्यों की तरह ब्रिटिश सम्प्रभुता के अन्तर्गत चला गया। जो सदियों पूर्व मेवाड़ की चली आ रही स्वाधीनता, स्वाभिमान और गौरव गरिमा केवल मात्र ऐतिहासिक दस्तावेजों का ही अंग बन गया।

8.4 भावी शोध हेतु सुझाव –

1) मैनें सम्पूर्ण शोध कार्य के दौरान यह अनुभव किया कि भविष्य में मेरे शोध कार्य के अतिरिक्त राजस्थान के ठिकानों एवं एतिहासिक घरानों की पुरालेखीय सामग्री पर अलग से शोध कार्य किया जा सकता है।

2) इसी क्रम में यह अनुभव किया गया कि मेवाड़ शासन प्रबन्ध गैर राजपूत वर्ग पर अलग से शोध कार्य किया जा सकता है इस हेतु अभिलेखागारों, निजी संग्रहालयों में तथा व्यैक्तिक पारिवारिक घरानों में अप्रकाशित सामग्री उपलब्ध है।

3) इसी तरह मेवाड़ शासन में आधार स्तम्भ प्रधान रहे हैं इस दृष्टि से अलग अलग वर्गों के प्रधानों में यथा बड़वा घराना (सनाढ्य) महत्वपूर्ण रहा है इस विषय पर अमरचंद बड़वा उसके व्यक्तित्व और कृतित्व पर पृथक से शोध कार्य की आवश्यकता है क्योंकि यह परिवार महाराणा सांगा के समय से अंतिम महाराणा भूपाल सिंह तक मेवाड़ के प्रशासनिक पदों पर रहते हुए सैन्य और अन्य प्रशासनिक उत्तरदायित्व की अहम् भूमिका अदा की। वर्तमान में इस परिवार के निजी अभिलेख प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान उदयपुर में सेवानिवृत उपनिदेशक डॉ. राजेन्द्र नाथ पुरोहित के पास उपलब्ध है जो मूल्यवान है।

4) इसी तरह मेवाड़ के शक्तावत घराना जिनमें भीण्डर, बानसी, बोहेड़ा पर शोध किया जा सकता है।

5) मेवाड़ के जागीरदारों में सलूम्बर के चुण्डावत, बेगू, आमेट, देवगढ़, मेझा आदि पर अप्रकाशित शोध सामग्री उपलब्ध है अतः इस श्रेणी के सामन्तों के योगदान पर शोध की नितान्त आवश्यकता है।

6) मेवाड़ के राजपरिवार से सम्बन्धित बागोर घराना– इसका वंशधर नेतावल – पीलादर तथा करजाली घराना एवं शिवरती घराना महत्वपूर्ण रहे हैं और अभी भी इन घरानों के कुलीन परिवार के निजी संग्रहालयों में अमूल्य शोध सामग्री उपलब्ध है जिसका शोध की दृष्टि से महत्व है।

7) इसी प्रकार जैन वर्ग में बोलिया घराना, मेहता (बच्छावत), मेहता (चीलजी), कोठारी, भामाशाह कावड़िया के परिवार पर पृथक से शोध कार्य किया जा सकता है।

परिशिष्ट – 1

मेवाड़ के महाराणा एवं उनके शासन के प्रमुख जागीरदार/ऐतिहासिक पुरूष

शासक का नाम	प्रधान	पुरोहित	प्रमुख जागीरदार तथा ऐतिहासिक घरानें
राजा अपराजित सन् 661 ई.	वैरी सिंह जी (देखें कुण्डा ग्राम की प्रशस्ति)		सन् 568 ई. में गुहिल वंश की स्थापना। सन् 606 ई. में मेवाड़ के गुहिल वंश के पूर्वज शिलादित्य हुआ।
बाप्पा रावल सन् 734–753 ई.	नरेश जी जोशी (देखें चीरवा ग्राम की रावल समरसिंह कालीन प्रशस्ति)	ऋषि हारित	सन् 734 ई. में बाप्पा रावल का राज्यारोहण (मेवाड़ में गुहिल राजवंश का संस्थापक बाप्पा रावल)। चित्तौड़ पर राज्य करने वाले मौर्य वंशी राजा मान को हरा कर चित्तौड़ राज्य जीता। बाप्पा रावल के सहयोगी दो भील – बिल्ला व देवा भील, जिन्होंने चित्तौड़ राज्यारोहण के समय बिल्ला ने अपने अंगूठे के खून से बाप्पा रावल का राजतिलक किया। सिन्धुपति महाराज चचदेव का चित्तौड़ आगमन एवं बाप्पा रावल का चचदेव को पुनः सिन्धुपति बनाना।
अल्लट (आलू) सन् 951–953 ई.	प्रधान मम्मट (देखें आहड़ ग्राम सारणेश्वर मन्दिर की प्रशस्ति)		अल्लट के समय मन्त्री परिषद् की जानकारी मिलती है। अमात्य मम्मट, सन्धि विग्रहिक – दुर्लभ राज, अक्षपटलिक – मयूर एवं समुद्र था। बन्दीपति (मुख्य भाट) – नाग, भिषगाधिराज – रूद्रादित्य था। अल्लट के समय निर्मित वराह मन्दिर में शिलालेख लगा हुआ था। इसमें अल्लट की माता महाराणी महालक्ष्मी एवं राजा अल्लट व उसके पुत्र नरवाहन इत्यादि की नामावली है। इस

			लेख का सूत्रधार अग्रट है। इस लेख से ज्ञात होता है कि आहड़ 10वीं शताब्दी में भारत का प्रसिद्ध व्यापारिक नगर था। जहाँ गुजरात (लाट), कर्नाट (कर्नाटक), टक्क देश (पंजाब) इत्यादि देश के विभिन्न प्रान्तों से व्यापारी एवं उद्योगपति आते थे। (आहड़ प्रशस्ति में मेवाड़ राज्य के मंत्रियों की सूची मिलती है)
नरवाहन सन् 972–973 ई.	(देखें कदमाल ग्राम का ताम्र पत्र)		कदमाल के ताम्र पत्र में गुहिल वंश के शासकों की वंशावली मिलती है।
कर्णसिंह प्रथम (रणसिंह) देखें एकलिंग माहातम्य 1) रावल शाखा चित्तौड़ 2) सिसोदिया राणा	चौहड़ सिंह देखें घाटा वाली माता का लेख (पिण्डवाड़ा, आबू मार्ग)		कर्णसिंह से दो शाखाऐं चली। 1) डूंगरपुर की रावल शाखा एवं 2) चित्तौड़ – मेवाड़ की सिसोदिया वंश की शाखा जो ''राणा शाखा'' से सम्बन्धित है। जालौर के कीतू चौहान (कीर्तिपाल) ने आहड़ पर आक्रमण कर मेवाड़ छीना था तब सामन्तसिंह (डूंगरपुर राज्य का संस्थापक) ने जो कर्णसिंह (करण सिंह का पौत्र था) उसने अपने भाई कुमार सिंह का पैतृक राज्य (मेवाड़ आहड़) को पुनः प्राप्त कर भाई को लौटाया
जैत्रसिंह सन् 1213–1253 ई.	महाधवल जी, सगर जी	योगराज नागदा का तलारक्ष	महाधवल जो पहले अन्हिलवाड़ा का प्रधान था। जो बाद में मेवाड़ आया व जैत्रसिंह का प्रधान बना। राजा सगर जिसने मोहम्मद गौरी, गुजरात के सुल्तान अहमदशाह, मालवा के मुस्लिम सुल्तान एवं दिल्ली के सुल्तान

			इल्तुतमिश से युद्ध लड़े।
रावल समरसिंह सन् 1273–1302 ई.	योगराज जी	योगराज के पुत्र पमराज महेन्द्र	योगराज मेवाड़ की राजधानी नागदा का तलारक्ष था। उसके चार पुत्र थे – पमराज, महेन्द्र, चम्पक और क्षेम थे। महेन्द्र का पुत्र बालक कोटड़ा के युद्ध में काम आया। रावल समरसिंह से रावल रतनसिंह तक सन् 1303 के शाके तक मेनारिया नागदा के योगराज के पुत्र–पुत्रादि मेवाड़ के प्रशासनिक एवं सैन्य सेवा में योगदान देने वालों में मुख्य थे। समरसिंह के वंशधर में कर्ण के ज्येष्ठ पुत्र माहप ने डूंगरपुर में रावल शाखा प्रारम्भ हुई और छोटे पुत्र राहप शाखा से मेवाड़ का सिसोदिया राजवंश प्रारम्भ हुआ। हम्मीर सिसोदिया वंश का शासक था।
रावल रतनसिंह सन् 1302–1303 ई. तक	लखम जी बोलिया राजा बोहित्य जी	मदना	लखम जी बोलिया रावल समरसिंह के समय प्रधान बने तथा प्रथम शाका सन् 1303 ई. में बोलिया परिवार की पूरी पीढ़ी भी शहीद हुई। अल्लाउद्दीन का चित्तौड़ पर आक्रमण सन् 1303 ई. रानी पद्मिनी के नेतृत्व में प्रथम शाका – जौहर, गौरा बादल सेना नायक शहीद
राणा हम्मीरसिंह सन् 1326–1364 ई.	जुहड़ जी मेहता (जालसी जी मेहता)	जयपाल, राजल, बरबड़ी देवी चारण माता पुत्र बारू	डकैत मूंजा बालेचा का वध किया तथा महाराणा अरिसिंह प्रथम ने इस कारण हम्मीर का राजतिलक किया। इसके कारण अरिसिंह प्रथम के पुत्र सज्जन सिंह, क्षेम सिंह अप्रसन्न होकर दक्षिण भारत में चले गए। चारण बरबरी देवी एवं उसके पुत्र बारू चारण ने हम्मीर की सैन्य व आर्थिक सहायता की।

महाराणा क्षेत्रसिंह सन् 1364–1382 ई.	रामदेव जी नवलखा	राजड़ जी	महाराणा क्षेत्रसिंह के समय शासन प्रबन्ध में लोक कल्याणकारी कार्य – कृषि, व्यापार, भू–प्रबन्धन कार्य
महाराणा लाखा सन् 1382–1421 ई.	रामदेव जी नवलखा	राजड़ जी	महाराणा लाखा के समय राजकुमार चूण्डा मुख्यमंत्री का कार्य करता था। जब महाराणा लाखा की माँ सोलंकिनी द्वारका तीर्थ यात्रा गई तब काबों (लूटेरा जाति) ने मेवाड़ की सैन्य टुकड़ी पर हमला कर दिया। इस समय शार्दुलगढ़ के रावसिंह डोडिया ने राजमाता की रक्षा की और वे शहीद हो गए। इनके पुत्रों कालू व धवल ने राजमाता को महलों में रखा इस कारण महाराणा लाखा ने धवल को मेवाड़ में रतनगढ़, नन्दराय व मसुदा जागीरी में दी।
महाराणा मोकल सन् 1421–1433 ई.	राजकुमार चुण्डा जी, नवलखा सहणपाल जी	राजड़ जी पुरोहित	महाराणा लाखा के ज्येष्ठ पुत्र चूण्डा ने आजन्म कुंवारा रहने की भीष्म प्रतिज्ञा की एवं मेवाड़ राज्य के संरक्षक बने। मेवाड़ के ताम्रपत्रों एवं राज आज्ञाओं (परवानों) पर पितृभक्त राव चूण्डा के हाथ का भाला चिन्ह लगाते थे। उसके नीचे महाराणा अपने हाथ से परवाने स्वीकार करते थे। प्रथम बार ताम्रपत्रों एवं परवानों पर चूण्डा के भाले के चिन्ह लगाने के बाद ही महाराणाओं द्वारा स्वीकृति का अधिकार चूण्डा जी की उप–माता महाराणा मोकल की पत्नि महाराणी राठौड़ हंसा बाई जी राज ने दिया। रामदेव जी नवलखा का पुत्र सारंग और सहसपाल प्रशासन में मंत्री मण्डल में मुख्य थे।

			राजड़ जी पुरोहित भाणुजा के थे। इनके भाई वेजड़ जी के पक्षधर बड़ा पालीवाल कहलाए तथा राजड़ जी पक्षधर छोटे पालीवाल छोटे भाणुजा में रहते थे। मोकल के समय लाखा की पत्नि हंसा बाई का भाई रणमल महाराणा मोकल का संरक्षक बना।
महाराणा कुम्भा सन् 1433–1468 ई.	रामदेव नवलखा के पुत्र सहणपाल जी, छज्जू जी बोलिया, शाह गुणराज जी		महाराणा कुम्भा के समय महेश, अत्रि, नाथ एवं मण्डन सूत्रधार थे। जय एवं अपराजित विद्वान थे।
महाराणा रायमल सन् 1473–1509 ई.	राय विनोद जी	रामदास	करमचन्द पंवार सैन्य एवं प्रशासनिक प्रबन्धों के लिए प्रसिद्ध था। राजकुमार पृथ्वीराज, जयमल एवं संग्राम सिंह तीनों भाई थे। जो नाहर मगरा के पास भीमल गाँव में स्थित एक देवी मन्दिर में अवतार चारण कन्या बीरी के पास भाग्यफल हेतु गए। उसने राणा सांगा को मेवाड़ का स्वामी होने की भविष्यवाणी की। इस पर तीनों भाइयों में सत्ता के लिए संघर्ष हुआ। पानेरी के पद पर हरिदास कप्पड़दार था। हंसराज कलावत (कायस्थ), कान्ह कायस्थ, आयण महासाणी, महासाणी महेश गुजरात के हलवद राज्य के राजा झाला के बेटे अज्जा व

			सज्जा अपने भाइयों के झगड़ों से निकल कर सन् 1506 में मेवाड़ आए व महाराणा रायमल की सेवा में रहे। महाराणा रायमल ने इनको उपकृत कर सामन्तों में शामिल किया। झालाओं के पाँच ठिकाने हैं – सादड़ी, देलवाड़ा, गोगुन्दा (प्रथम श्रेणी के ठिकाने), ताणा, झाड़ोल (द्वितीय श्रेणी के ठिकाने)।
महाराणा सांगा सन् 1509–1527 ई.	छज्जू जी बोलिया, शाह गिरधर जी पंचोली, तोला जी शाह	दामोदर	करमचन्द पंवार सैन्य एवं प्रशासनिक प्रबन्धों के लिए प्रसिद्ध था। इसने अपनी पुत्री का विवाह राणा सांगा से किया था। इसने अपने ठिकाने श्रीनगर, अजमेर में राणा सांगा को पनाह दी थी। सांगा के पुत्र भोज राज की पत्नि मीरा बहिन जो जयमल मेड़तिया की बहन थी। कमरचन्द पंवार को बम्बोरी ठिकाना दिया गया जो द्वितीय श्रेणी का है। चील जी मेहता रणथम्भौर के किलेदार थे।
विक्रमादित्य महाराणी कर्णावती (राजमाता) सन् 1531–1537 ई. 1) महाराणा रतनसिंह 2) महाराणा	शाह माधु जी चील जी मेहता	जाना शंकर जी नारायण दास जी	सन् 1533–1534 ई. में चित्तौड़ का दूसरा शाका हुआ इसमें मुख्यतः देवलिया प्रतापगढ़ का रावत बाघसिंह, देसूरी का सोलंकी भैरवदास, देलवाड़ा का राज राणा सज्जा, डोडिया भाण, रावत दूधा मुख्य थे। इस वर्ष महाराणी कर्णावती के नेतृत्व में जौहर हुआ। दूधा, सत्ता व कम्मा तीनों सुप्रसिद्ध मेवाड़ के वीरवर भीष्म चूण्डा के वंशज रावत रतनसिंह के पुत्र थे।

विक्रमादित्य 3) महाराणा बनवीर सन् 1537–1540 ई.			नंगा चूण्डा के पुत्र कान्दल का पौत्र था। इसके पिता का नाम प्रभु सिंह था। मीरां बाई, यह राणा सांगा के बड़े पुत्र भोजराज की पत्नि थी, जो मेड़ता के राज नीरमदेव के छोटे भाई व जयमल के काका रतनसिंह राठौड़ की पुत्री थी। मीरां के पिता रतनसिंह खानवा युद्ध में (सन् 1527 ई. में) राणा सांगा के सैन्य दल में थे, वह वहाँ शहीद हुए। राणा सांगा के बड़े भाई पृथ्वीराज की पासवानी पूतल दे का पुत्र बनवीर था। सांगा ने बद्चरित्र के कारण मेवाड़ से निष्कासित किया था, पर अवसर देखकर उसने राणी कर्णावती की मृत्यु के बाद सत्ता हड़प ली।
महाराणा उदयसिंह सन् 1537–1572 ई.	निहाल चन्द जी बोलिया, मेहता चील जी, आशा शाह देवपुरा, रामा शाह मसानी, भामाशाह कावड़िया	नारायण दास जी पुरोहित	कीरत वारी एवं पन्नाधाय ने चित्तौड़ से उदयसिंह को बनवीर से सुरक्षित कुम्भलगढ़ पहुँचाया। उस समय कुम्भलगढ़ का किलेदार आशा शाह देवपुरा था। अकबर का चित्तौड़ पर आक्रमण सन् 1567–68 ई. के दौरान कोठारिया रावत खान, पूर्बिया, चौहान, साईंदास चूण्डावत (सलूम्बर का पूर्वज), रावत सांगा कान्धल का पौत्र जग्गा, बागौर से रावत सांगा, मेहता चील, ईडर का मानसिंह, पानरवा का राणा पूंजा, ताणा का सांखला, मैरा, जयमल मेड़तिया, रावत पत्ता, कल्ला राठौड़ रक्षार्थ लड़े व शहीद ईसरदास, साईदास, राजराणा सज्जा, राजराणा सुल्तान आसावत इत्यादि युद्ध में

			शहीद हुए।
महाराणा प्रताप सन् 1572–1597 ई.	निहाल चन्द जी बोलिया, भामाशाह कावड़िया	जगन्नाथ जी कचरावत, कल्याण जी पानेरी	हकीम खाँ सूर, भामाशाह एवं भाई ताराचन्द, ग्वालियर नरेश रामशाह तंवर एवं उनका पुत्र शान्तिवाहन, भवानीसिंह, कल्याण पानेरी, मेहता जयमल बच्छावत, मेहता रतनचन्द खेमावत, चारण जैशा व केशव (सौदा बारहठ), डोडिया भीमसिंह, रावत कृष्णदास, रावत सांगा, पानरवा का राणा पूंजा, शक्तिसिंह, सिरोही का राव चन्द्र सेन
महाराणा अमरसिंह प्रथम सन् 19 जन. 1597–26 जन. 1620 ई. चावण्ड राज्याभिषेक	जीवा जी शाह, अक्षय राज जी, रंगो जी बोलिया	राय सुन्दर दास जी	ईडर का झाला हरदास, झाला कल्याण, राठौड़ कृष्णदास, बेदला के बल्लू चौहान और देलवाड़ा के झाला शत्रुसाल, राठौड़ किशनदास, सिसोदिया माघसिंह, शार्दुलसिंह, सहमल सिंधल, बीदा सिंधल, सांवलदास, कुंवर अर्जुन सिंह, माधव सिंह, राठौड़ माला, देवड़ा पत्ता कलावत, सोनगरा केशवदास, अक्षयराज का पोता सोनगरा सावंतसिंह चूण्डावत, दूदा सांगावत, डोडिया गोपालदास, डोडिया सादा एवं सूजा व आगरा तथा जगमाल राठौड़, मन्मनदास, बदनौर सांवत, गोगुन्दा में सम्पन्न युवराज कर्णसिंह एवं शाहजादा खुर्रम के बीच सन्धि
महाराणा कर्णसिंह सन् 1620–1628 ई.	अक्षय राज जी	द्वारकेश जी राजपुरोहित जिंत्यावास	नारायणदास शक्तावत (शक्तिसिंह का पौत्र) रतनगढ़ एवं बेंगू के परगने दिए गए। रावत मेघसिंह चूण्डावत (काला मेघ) हरदास झाला राणा कर्णसिंह का विश्वासपात्र जागीरदार
महाराणा जगतसिंह	अक्षय राज जी,	काशीदास जी	गूगावत पंचोली (जगन्नाथ राय मन्दिर का निर्माता) इसे सूत्रधार

सन् 1628–1652 ई.	भाग चन्द जी भटनागर (कायस्थ पंचोली), भामाशाह का दोहिता – जिगीशा बाई का पुत्र भाण जी मेहता (बच्छावत) यह बीकानेर के दीवान करमचन्द का पोता था अर्थात् भामाशाह की पुत्री का पुत्र	राजपुरोहित गुड़ली गांव	अर्जुन की देखरेख में सूत्रधार भाण व उसके पुत्र मुकुन्द ने बनाया। भोपत राय (धरियावद वालों का पूर्वज और महाराणा प्रताप के तीसरे पुत्र सहसमल का बेटा था) 1615 ई. की सन्धि के तहत महाराणा जगतसिंह ने भोपत राय के मुगल साम्राज्य के दक्षिण विजय में सैन्य सहायतार्थ भेजा था। दक्षिणी विजय का समाचार झाला कल्याण ने बादशाह को माण्डु में दिया। मुंशी भाणचन्द ब्राह्मण पटियाला का रहने वाला था व फारसी का विद्वान था। शाहजादा दारा शिकोव का मुंशी था। उसने ''इंशाए–ब्राह्मण'' नामक प्रस्तुत पुस्तक की रचना की। शाहजहां ने उदयपुर महाराणा के पास भेजा। मुंशीचन्द्र भाण के सहयोग से राज समुद्र पर सन्धि हुई। भाणजी मेहता मेवाड़ की सेना का सेनापति था। उसने औरंगजेब के विरूद्ध युद्ध में मेवाड़ की रक्षा की एवं शहीद हुए।
महाराणा राजसिंह सन् 1652–1680 ई.	रघुनाथ सिंह जी चुण्डावत, फतह चन्द जी	गरीब दास जी	गरीबदास, मधुसूदन भट्ट, रायसिंह झाला, कायस्थ फतहचन्द, झाला सुल्तान सादड़ी, सबल सिंह चौहान (बेदला), महाराणा का चारूमति से एवं औरंगजेब का मेवाड़ उदयपुर पर आक्रमण सन् 1679–80 ई. विवाह राणा राजसिंह द्वारा औरंगजेब की हिन्दू धर्म विरोधी व जजिया टैक्स का प्रतिरोध करना।

			महाराणा राजसिंह ने औरंगजेब के मेवाड़ आक्रमण के विरूद्ध सन् 1679–80 ई. में अपने कुंवर जयसिंह, कुंवर भीमसिंह, रावल यशकर्ण, राणावत भीमसिंह, महाराज मनोहर सिंह (महाराणा कर्णसिंह के पुत्र गरीबदास का पुत्र), महाराज दलसिंह (कर्णसिंह के छोटे पुत्र छगसिंह का पुत्र), अरिसिंह महाराणा का भाई व अपने चार पुत्रों – भगवन्त सिंह, सुभाग सिंह, फतहसिंह, गुमानसिंह, बेदला का राव सब्बल सिंह, चौहान झाला चन्द्रसेन, राठौड़ राव दुर्गादास, राठौड़ गोपीनाथ (घाणेराव), राजपुरोहित गरीबदास, खींची रामसिंह डोडिया, मंत्री दयालदास, अबू मलिक अज़ीज युद्ध में लड़े। भीण्डर का मोहकम सिंह, सलूम्बर का रतन सेन (रत्नसिंह) जो सलूम्बर के रावत रघुनाथ सिंह चूण्डावत का पुत्र था, रावत माहसिंह (बेंगु वाले काले मेघ का पुत्र), झाला जैत्रसिंह (देलवाड़ा का झाला), बैरीसाल जो बिजोलिया का था एवं सांवलदास प्रसिद्ध राव जयमल राठौड़ का वंशधर व बदनौर का स्वामी रावत मानसिंह (कानोड़ का पूर्वज), राव केसरीसिंह चौहान (पारसोली), गोगुन्दा का झाला जसवन्त इस युद्ध में सन् 1679 ई. में स्वयं औरंगजेब ससैन्य मेवाड़ आया और देबारी के युद्ध में मेवाड़ के कई योद्धा मुगल सेना का प्रतिरोध करते हुए मारे गए जिनमें जय राठौड़, गौरासंग एवं बल्लुदास काम आए।

			उदयपुर के जगदीश मन्दिर एवं नगर की रक्षार्थ 20 ''माचातोड़'' भील योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए। 22 फरवरी, 1680 को बादशाह ने उदयपुर में कुल 63 मन्दिर तोड़े। अंत में महाराणा जयसिंह के समय 18 जुलाई, 1681 को राजनगर पर सन्धि हुई। इसका राजप्रशस्ति नौ चौकी के लेख में उल्लेख है। इसमें महाराणा ने पुर, माण्डल एवं बदनौर के परगने जजिया कर के बदले मुगलों को सौंप दिए।
महाराणा जयसिंह सन् 1680—1698 ई.	दयाल दास जी	गरीब दास जी, रणछोड़ दास जी	रावत केशरीसिंह चौहान, रावत रतन सिंह चूण्डावत, राठौड़ दुर्गादास, राठौड़ रामसिंह रतलाम वाला, रावत महासिंह सारंगदेवोत, महाराज सूरत सिंह (महाराणा राजसिंह का भाई), उदयभान कोठारिया का, राव सज्जा झाला (देलवाड़ा), ठाकुर गोपीनाथ, ठाकुर गोपीनाथ घाणेराव, रावत कांधल (सलूम्बर), पारसोली का रावत केशरी सिंह जयसमन्द की झील सन् 1687 ई. एवं इसकी प्रतिष्ठा समारोह सन् 1691 ई.।
महाराणा अमरसिंह दूसरा सन् 28 सितम्बर 1698—1710 ई.	जीवा जी शाह	सुखराम जी	अमरसिंह ने शासन प्रबन्ध हेतु जागीरदारों को स्थाई जागीरदारी प्रदान कर तीन दर्जों में विभाजित किया यथा प्रथम श्रेणी के जागीरदार 16, द्वितीय श्रेणी के जागीरदार 32 (बत्तीसा), तीसरी श्रेणी के सरदार गोल के सरदार कहलाए। गोसाईं हरनाथ गिरी (सवीना मठ) का चेला नीलकण्ठ गोसाईं राठौड़ दुर्गादास, अजितसिंह (जोधपुर नरेश) एवं जयपुर नरेश

			जयसिंह (सन् 1708 ई.) में उदयपुर उदयसागर झील के पास गाड़वा में रहे। बाद में अजित सिंह को कृष्ण विलास बाग (वर्तमान में सेन्ट्रल जेल, उदयपुर) एवं महाराणा जयसिंह को सर्वऋतु विलास में ठहराया था।
महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय सन् 1710–1734 ई.	बिहारी दास जी पंचोली	संतोषराम जी	महाराणा संग्राम सिंह के तीन पुत्र हुए। जिन्हें महाराज की पदवी दी गई। सबसे बड़े पुत्र महाराज नाथसिंह को बागौर, महाराज बाघसिंह को करजाली, महाराज अर्जुन सिंह को शिवरती ठिकाना दिया।
महाराणा जगतसिंह द्वितीय सन् 1734–1751 ई.	मोती राम जी बोलिया, देवकरण जी	नन्द राम जी राजपुरोहित	सनाढ्य ब्राह्मण हरबेन (हरिवंश) था। कानोड़ के रावत पृथ्वीसिंह सारंगदेवोत को मेवाड़ से बाहर निकाल दिया। 17 जुलाई, 1734 हुरड़ा सन्धि हुई। पेशवा बाजीराव का मेवाड़ में आगमन चम्पा बाग में ठहरा। महाराणा ने पेशवा को खिराज पेटे 1½ लाख रूपये वार्षिक दर से दस वर्षों तक देना स्वीकारा। बनेड़ा परगना की आय मराठों को देना स्वीकारा। कायस्थ भटनागर देवजी भी इस समय हुए। मिला धाबाई व माना धाबाई भी इस समय थे। इस समय महद्राज सभा व महकमा खास बनाए गए। महद्राज सभा में कुल 17 सदस्य रखे गए इसने इजलास सभा का स्थान लिया। इसके सचिव मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या बनाए गए व सदस्य

			राव तखतसिंह देवला, राव अर्जुनसिंह आसींद, बाबा गजसिंह शिवरती, राजा देवीसिंह ताणा, राजराणा फतहसिंह देलवाड़ा, ठाकर मनोहर सिंह सरदारगढ़, उदयसिंह कांकरवां, मामा बख्तातर सिंह राणावत, कवि राजा श्यामलदास, मेहता राय पन्नालाल, अर्जुनसिंह सहीवाला, मेहता तखतसिंह, पुरोहित पदमनाथ, पुरोहित ब्रजनाथ, जानी मुकुन्द लाल भरतपुर वाले।
महाराणा प्रतापसिंह द्वितीय सन् 1751–1754 ई.	अमरचन्द जी बड़वा	राम राय जी	शक्तावतों एवं चूण्डावतों में वैमनस्य; देवगढ़ का जसवन्त सिंह, शाहपुरा का उम्मेद सिंह, सनवाड़ का बाबा भरतसिंह, महाराणा के विरोधी बागौर के नाथ सिंह से मिलकर महाराणा प्रतापसिंह द्वितीय को पदचुत्य करने का कदम उठाया। जिसका लाभ उठाकर मराठों ने मेवाड़ पर निरन्तर आक्रमण किए।
महाराणा राजसिंह द्वितीय सन् 1754–1761 ई.	सदाराम जी पुरोहित, फतह चन्द जी	राम राय जी	मराठा नायक सदाशिव भाऊ के नेतृत्व में मेवाड़–मराठा संघर्ष। दरबार में सामन्तीय प्रतिस्पर्धा। प्रधान पद पर अमरचन्द बड़वा, अगरचन्द मेहता, मोतीराम जी बोलिया एवं एकलिंगदास जी बोलिया प्रशासन में सक्रिय
महाराणा अरिसिंह द्वितीय सन् 1761–1773 ई.	मोती राम जी बोलिया, एकलिंगदास जी बोलिया, अमर चन्द जी बड़वा	फतह राम जी	अगर चन्द मेहता सलाहकार शाहपुरा के जालिम सिंह भी सलाहकार बने। 13 जनवरी, 1769 उज्जैन के पास क्षिप्रा नदी के पास युद्ध में मराठों का मुकाबला करते हुए सलुम्बर, शाहपुरा व बनेड़ा के प्रमुख मारे गए। कोटा के राजा जालिम सिंह झाला मेवाड़ के प्रधान अगरचन्द महाराजा अरिसिंह के साथ लड़ते हुए जख्मी हुए। इस युद्ध में

			मेवाड़ महाराणा के बागी रतनसिंह एवं उसके गुट को मराठा नायक महादजी सिन्धिया ने सहयोग किया।
महाराणा हम्मीरसिंह द्वितीय सन् 1773–1778 ई.	अमर चन्द जी बड़वा	फतह राम जी	सन् 1775 में अमर चन्द बड़वा ने महाराणा से अप्रसन्न होकर प्रधान पद से त्याग पत्र दिया। उसे बन्दी बनाया एवं जहर देकर मारा। यह कुकृत्य राजमाता की विश्वास पात्र रामप्यारी की सलाह से हुआ।
महाराणा भीमसिंह सन् 1778–1828 ई.	सतीदास जी गाँधी, सोमचन्द जी गाँधी, अगर चन्द जी मेहता, किशनदास जी पंचोली, शाह शिवलाल जी गलुण्डिया, मेहता देवीचन्द जी, राम सिंह जी मेहता, शेर सिंह जी मेहता सन् 1818 में रामसिंह मेहता को (चील जी मेहता	फतह राम जी	सेठ जोरावर मल बापना (पटवा), पूर्व में जैसलमेर के निवासी थे को महाराणा ने रावली दुकान (राजकीय बैंक) की स्थापना हेतु आज्ञा दी। मेवाड़ राज्य का आय–व्यय का ब्यौरा इस बैंक में रहता था। इनको सेठ की उपाधि दी। कर्नल जेम्स टॉड मेवाड़ का रेजिडेन्ट नियुक्त हुआ। बदनौर परगने का गाँव पारसोली की जागीरी प्रदान की। कर्नल टॉड ने इन्हें मेवाड़ राजकोष का प्रबन्धक नियुक्त किया। इनके परिवार में गुमान जी के पुत्र बहादुर मल, सवाई राम, मगनी राम, जोरावर मल, प्रताप भाई थे। 1818 ई. का कौलनामा जागीरदारों के बीच हुआ। जिसमें अजीत सिंह रावत सलुम्बर ने हस्ताक्षर किए। झाला जालिम सिंह कोटा का निवासी भी इसी समय मेवाड़ आया। आमीर खाँ पठान पिण्डारी भी इसी समय मेवाड़ आया जो बाद में टोंक का नवाब बना।

	परिवार) प्रधान बनाया जो पूर्व में माण्डल के किलेदार थे		मेहता देवीचन्द को जहाजपुर व माण्डल का किलेदार बनाया। पूर्व में रामसिंह मेहता थे। जिन्हें प्रधान बनाया। मेहता मालदास उस समय फौज बक्षी के पद पर थे और मराठों के मेवाड़ आक्रमण के समय हड़क्याखाल की लड़ाई में शहीद हुए। इनकी स्मृति में मालदास सेहरी बनी। प्रधान मेहता अगरचन्द का टोपल मगरी, कुम्भलगढ़ व हमीरगढ़ में मराठों से लड़े। अन्त में माण्डलगढ़ में निधन हुआ।
महाराणा जवानसिंह सन् 1828–1838 ई.	राम सिंह जी मेहता, शेर सिंह जी मेहता		मेवाड़ महाराणा व जागीरदारों के मध्य संशोधित कौलनामा कप्तान काब ने करवाया और दोनों तरफ से इस कौलनामा पर हस्ताक्षर करवाए सन् 1828 ई. में। इस समय गोगुन्दा के झाला लालसिंह, सलुम्बर के पदमसिंह रावत, कोठारिया के रावत जोधसिंह और आमेट रावत सालमसिंह इसी समय कर्नल टॉड अंग्रेज के रेजीडेन्ट थे। इसी समय देवीचन्द पंचोली मंत्री था। कैप्टन काब और कैप्टन सदरलैण्ड भी इसी समय था।
महाराणा सरदारसिंह सन् 1838–1842 ई.	शेर सिंह जी मेहता		सरदारसिंह के समय में भी पुराने कौलनामे में बदलाव किए गए और एक नया कौलनामा तैयार किया गया। इसमें निम्न जागीरदारों ने हस्ताक्षर किए – बेदला राव बख्त सिंह, सलुम्बर राव पदमसिंह, देवगढ़ के नाहरसिंह, भैंसरोड़गढ़ के रावत अमरसिंह, आसीन्द के रावत दुल्हेसिंह, आमेट के रावत सालिमसिंह और भीण्डर के महाराज हरिसिंह, कुराबड़ के रावत

			ईश्वरसिंह। नाथद्वारा के गोस्वामी ने इस समय स्वतन्त्र होने की कोशिश की और कर्नल स्पीयर्स के पास अपना वकील राधाकिशन दास को भेजा जिसे स्पीयर्स ने वापस लौटा दिया। नेपाल महाराजा राजेन्द्र विक्रम शाह को मेवाड़ महाराणा ने आमन्त्रित किया।
महाराणा स्वरूपसिंह सन् 1842–1861 ई.	शेर सिंह जी मेहता, मेहता गोकल चन्द जी, कोठारी केशरीसिंह जी		अंग्रेज रॉबिन्सन एजेन्ट था। सही वाला अर्जुन सिंह भी इसी समय हुए। इस समय पाणेरी गोपाल महाराणा का खासमखास था। जिसे धर्माध्यक्ष बनाया। इस समय स्वरूपशाही सिक्के जारी किए गए जो शुद्ध चाँदी के थे। जिसके एक तरफ चित्रकूट उदयपुर एवं दूसरी तरफ दोस्ती लन्दन अंकित था। सन् 1845 ई. में सरदारों की सहमती से नया कौलनामा तैयार किया गया। सलूम्बर से ''शरण'' व ''भाजगढ़'' के अधिकार वापस ले लिए गए। इस पर रावत केसरीसिंह ने हस्ताक्षर नहीं किए। इस समय 1857 की क्रान्ति हुई। क्रान्ति के समय नीमच, नसीराबाद से अंग्रेज के परिवारों को जगमन्दिर में सुरक्षित ठहराया गया। इसमें अर्जुन सिंह साहीवाला, मेहता शेरसिंह, बेदला राव बख्त सिंह की देख–रेख थी।

			इसी समय रावली दुकान का मालिक केसरीसिंह कोठारी को बनाया गया। जो कि कोठारी छगनलाल पूर्व प्रबन्धक रावली दुकान का भाई है। चान्द मल जो जोरावर मल का बेटा था उसको रावली दुकान का मालिक बनाया गया। सिरे मल को राय बहादुर की उपाधि दी गई। इन्होंने महाराणा शंभुसिंह को गोद लिया।
महाराणा शंभुसिंह सन् 1861–1874 ई.	गोकल चन्द जी मेहता	पुरोहित श्यामनाथ	राज्य मंत्री परिषद् – बेदला राव बख्तसिंह, देवगढ़ रावत, रणजीत सिंह, भीण्डर महाराज, हमीर सिंह, भैंसरोड़गढ़ रावत अमरसिंह, गोगुन्दा के लालसिंह झाला, पूर्व प्रधान मेहता शेरसिंह, प्रधान कोठारी केसरीसिंह एवं पुरोहित श्यामनाथ 26 अप्रेल, 1862 को रिजेन्सी कौंसिल द्वारा सती प्रथा निषेध नियम की घोषणा की गई। महाराणा शंभूसिंह ने मेवाड़ के जागीरदारों को ''लंगर'' एवं ''तलवार बंधाई'' का विशेषाधिकार प्रदान किया।
महाराणा सज्जनसिंह सन् 1874–1884 ई.	केसरी सिंह जी कोठारी, गोकल चन्द जी मेहता	औंकार नाथ जी राजपुरोहित	– महाराणा सज्जनसिंह के शासन काल में प्रमुख ऐतिहासिक घरानों में मामा अमानसिंह जी, कविराजा श्यामलदास जी दधिवाडिया, कोठारी बलवन्त सिंह जी, राय मेहता पन्नालाल जी, सही वाला अर्जुन सिंह जी, मेहता तखतसिंह जी, पाणेरी उदयराम जी, पुरोहित पदमनाथ जी एवं प्राणनाथ जी, इतिहासकार पं. गौरीशंकर हीराचन्द जी ओझा, पुरातत्त्ववेत्ता अक्षयकीर्ति जी व्यास थे।

			– मामा अमान सिंह जी को महाराणा सज्जनसिंह जी ने वि.सं. 1934 में 150 रू. प्रतिमाह के वेतन पर अपने निजी सचिव के पद पर नियुक्त किया। मामा अमान सिंह जी वि.सं. 1934 से 1974 तक अर्थात् 40 वर्षों तक मेवाड़ प्रशासन में अहम भूमिका अदा की। उन्होंने भील विद्रोह को अपनी सूझबूझ से समाप्त किया। सज्जन निवास बाग, विक्टोरिया म्युजियम, भूपाल नोबल्स स्कूल की स्थापना, सज्जनगढ़ का निर्माण एवं ठिकाना बोहेड़ा एवं बागौर ठिकाना की पेचीदा विवादों को हल किया। मेवाड़ में रावली दुकान (बैंक) की स्थापना की। मामाजी मेवाड़ की फौज के कमाण्डर–इन–चीफ के पद पर रहे। – मेवाड़ रियासत में टकसाल से जारी किए जाने वाले स्वरूपशाही मुद्रा प्रचलन में ''दोस्ती लन्दन'' के मुकदमे को भारतीय ब्रिटिश सरकार और इंपीरीयल कोर्ट लंदन में भी मुकदमा लड़ा और अंत में मेवाड़ सरकार द्वारा जारी किए गए मुद्रा को मान्यता दिलाई। – महाराणा सज्जनसिंह, महाराणा फतहसिंह और महाराणा भूपालसिंह के रिजेन्ट और गार्डियन रहते हुए मामा अमान सिंह ने प्रशासन में चहुंमुखी विकास में योगदान दिया। इसीलिए उन्हें मेवाड़ का दुर्गादास कहा जाता है। – 20 अगस्त, 1880 को इजलास खास के स्थान पर महद्राज सभा की स्थापना हुई। पंडित मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या इस

			सभा के सैक्रेटी और 17 अन्य सदस्य नामित किए। जिनमें 9 राजपूत जागीरदारों से और 8 अन्य वर्गों से लिए गए। जिनमें ब्राह्मण, जैन, चारण, कायस्थ वर्ग थे। महाराणा के कुशल प्रशासनिक नेतृत्व का परिणाम था कि मेवाड़ रियासत में आधुनिकीकरण हुआ।
महाराणा फतहसिंह सन् 1884–1930 ई.	भाग चन्द जी मेहता, सुखदेव प्रसाद जी, कोठारी बलवन्त सिंह जी, मेहता राय पन्नालाल जी, मेहता शेपाल सिंह जी	संतोष लाल जी, देवीलाल जी, दयाल जी	– सन् 1928 में भाई हिम्मत सिंह शिवरती वायसराय इरविन की अगवानी में महाराणा फतहसिंह के साथ रेलवे स्टेशन पर गए। उनके साथ इस दल में 23 प्रमुख सरदार तथा दरबारी थे। जिनमें पंडित धर्मनारायण, पंचोली लक्ष्मीनाथ, पंचोली शोभानाथ, पुरोहित सुन्दरनाथ, मेहता फतहलाल, पुरोहित मथुरानाथ, पाण्डे चन्द्रनाथ थे। – महाराणा फतहसिंह 2 अक्टूबर, 1928 (वि.सं. 1985) आसोद विद 3 सोमे चम्पाबाग के नजदीक हस्तीमाता मन्दिर के पीछे गए और वहाँ नए स्कूल की स्थापना की जो बाद में महाराणा भूपाल कॉलेज में क्रमोन्नत हुआ। – महाराणा फतहसिंह के शासन काल (सन् 1885–1921 ई.) में मेवाड़ में आने वाले विशिष्ट विदेशी एवं देशी मेहमानों की सूची निम्नानुसार है – **विशिष्ट विदेशी मेहमानों का उदयपुर आगमन** – प्रिंस ऑफ वेल्स एवं उसकी पत्नि (जो बाद में इंग्लैण्ड का सम्राट बना), प्रिंस एल्बर्ट विक्टर, ड्यूक एवं डची कनॉट, भारत

			के वायसराय – लॉर्ड डफरिन (8 नवम्बर, 1885), लॉर्ड लैंसडाउन, लॉर्ड एलगीन, लॉर्ड कर्जन, लॉर्ड मिन्टो, लॉर्ड हार्डिंग, लॉर्ड चैम्सफोर्ड। लॉर्ड रै (बॉम्बे का गवर्नर), ग्रांट डफ (गवर्नर ऑफ मद्रास) तथा कमाण्डर इन चीफ – लॉर्ड रॉबर्टस, लॉर्ड किचनर, सर पावर पामर इत्यादि उदयपुर आए। **भारत के देशी राजा – महाराजा का उदयपुर आगमन –** महाराजा हरिसिंह (कश्मीर नरेश) 30 मार्च, ... उदयपुर आए उन्हें 21 तोपों की सलामी दी गई। 4 अप्रेल, ... कश्मीर के लिए लौटे। 19 नवम्बर, 1902 को बड़ौदा के गायकवाड़ नरेश शियाजी राव, इन्दौर के महाराजा होल्कर नरेश, जयपुर, जोधपुर, कोटा, बनारस, धौलपुर, किशनगढ़, नाभा कपूर्थला, मोरवी, लिम्बड़ी एवं ईडर के महाराजा आए। सन् 1887 में महारानी विक्टोरिया ने मेवाड़ महाराणा फतहसिंह को जी.सी.एस.आई. सम्मान प्रदान किया। किंग जॉर्ज ने महाराणा को जी.सी.आई.एफ. एवं जी.सी.वी.ओ. सम्मान प्रदान किया। व्यक्तिगत महाराणा को 21 तोपों की सलामी का अधिकार प्रदान किया। महारानी उदयपुर को ऑर्डर ऑफ क्राउन ऑफ इण्डिया का सम्मान दिया।

			महाराज कुमार भूपालसिंह को के.सी.आई.ई. से नवाजा गया। **सन्दर्भ** – बॉम्बे टाइम्स, उदयपुर (1885 ई. – 1921 ई.), ए रिकॉर्ड ऑफ प्रोग्रेस एण्ड डिवोटेड लॉयलटी दी क्राउन – संवत् 1985 चेत्र विद रविवार 21 मार्च, 1929 को कश्मीर के महाराजा हरिसिंह जी उदयपुर नगर में मेहमान के रूप में पधारे जिन्हें लक्ष्मीविलास राजकीय गेस्ट हाउस में ससम्मान ठहराया। दूसरे दिन स्वयं महाराणा फतहसिंह ने कश्मीर महाराजा को शंभू निवास पैलेस में आमन्त्रित किया और सुर–नार (सूअर व शेर) के शिकार पर ले गए।
महाराणा भूपालसिंह सन् 1930–1956 ई.	सुखदेव प्रसाद जी, टी. राघवाचार्य जी	गणेश जी, अमरलाल जी, भूपाल लाल जी	• 23 मई, 1947 प्रताप जयन्ती के अवसर पर मेवाड़ रियासत में के. एम. मुंशी की अध्यक्षता में निर्मित मेवाड़ का संविधान लागू हुआ। • फतह मेमोरियल एवं फतह हाई स्कूल, भूपाल नोबल्स स्कूल (1921 ई.), विद्या भवन संस्थान में विद्या भवन स्कूल (1931 ई.), रामगिरी बुनियादी स्कूल की स्थापना 1937 ई., कला संस्थान विद्या भवन सन् 1937 ई., सन् 1942 ई. में विद्या भवन गोविन्दराम सेकसरिया टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज की स्थापना, महाराणा भूपाल चिकित्सालय की स्थापना, महाराणा संस्कृत महाविद्यालय, चांदपोल, महाराणा मदनमोहन मालवीय आयुर्वेदिक कॉलेज, अम्बामाता, रेलवे ट्रेनिंग स्कूल की स्थापना, महाराणा प्रताप स्मारक मोती मगरी, उदयपुर नगर

			पालिका की स्थापना, भूपालपुरा कॉलोनी, भोपाल कॉपरेटिव सोसायटी, प्रताप नगर, उदयपुर हवाई अड्डा, प्रताप नगर, राजस्थान विद्यापीठ की स्थापना सन् 1937 ई., चम्पा बाग परिसर में महाराणा प्रताप विश्वविद्यालय स्थापित करने की घोषणा की और इस हेतु चित्तौड़गढ़ में 1000 बीघा भूमि प्रदान की, राजस्थान भू विज्ञान महाविद्यालय की स्थापना, मेवाड़ में देवस्थान विभाग का गठन कर उसके अन्तर्गत आने वाले देव स्थानों, मन्दिरों, स्मारकों और भूमि आदि का प्रबन्ध मण्डल, राजस्थान की रियासतों के भारत में विलीनीकरण में पहल करके भारतीय रियासतों के एकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। • 23 मार्च, 1948 को महाराणा भूपालसिंह जी द्वारा मेवाड़ रियासत को संयुक्त राजस्थान में विलीन करने की औपचारिक सूचना भारत सरकार को दी और 11 अप्रेल, 1948 को राजस्थान में विलय पत्र की घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किए। • 18 अप्रेल, 1949 पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा उदयपुर में संयुक्त राजस्थान का उद्घाटन एवं महाराणा भूपालसिंह जी को राजप्रमुख और माणिक्यलाल वर्मा को मेवाड़ का प्रधानमंत्री बनाया। इसी क्रम में महाराणा भूपालसिंह जी को राजस्थान राज्य का महाराज प्रमुख बनाया।

महाराणा भगवतसिंह सन् 1956–1984 ई.		योगेश चन्द्र जी	• उदयपुर को विश्व पटल पर पर्यटन के क्षेत्र में पहुँचाने का श्रेय • राजस्थान में क्रिकेट को लाने का श्रेय • विश्व हिन्दू परिषद के प्रथम अध्यक्ष
महाराणा महेन्द्रसिंह/श्री जी अरविन्दसिंह सन् 1984 ई. – वर्तमान		भगवान लाल जी व उनके पुत्र चन्द्र प्रकाश जी	

परिशिष्ट – 2 – मेवाड़ के राजपुरोहितों की वंशावली

मेवाड़ के राजपुरोहित-वंशावली

1) सरसल जी पालीवाल (वि.सं. 1257 में पुरोहिताई प्राप्त की)

2) पुन्यराम जी

3) मोटल जी

4) माला जी (वि.सं. 1357)

- 5) देवा जी (देवराम जी)
  - 6) राजल जी (वि.सं. 1392) (राजलोत शाखा)
    (भाणुजा गांव पाया पुरोहित बड़े पालीवाल 44 खेड़े के मूल पुरूष)
    - 7) गांगा जी
      - 8) भला जी
      - 9) दामोदर जी
        (वि.सं. 1578 में धनवाड़ा पाया)
      - 10) सिंदा जी
      - 11) केशर जी
      - 12) राघा जी
      - 13) सहीदास जी
      - 14) पांचा जी
      - 15) केशर जी
      - 16) मानींग जी
    - दामोदर जी
      (पालीवाल 24 खेड़े के मूल पुरूष)
      - मोखा जी
      - चक्रा जी
        - अणदा जी
          - देवीदास जी
          - नारायण दास जी*
          - द्वारकेशर जी
          - काशी दास जी
          - राम राय जी
          - गरीब दास जी
        - देढ़ा जी
          - जीवा जी
          - रामदास जी
          - बलभद्र जी
          - कल्याण दास जी
          - देवदत्त जी
          - शिव जी
- साजण जी
  - वेजल जी
  - भोजल जी

* मेवाड़ राज्य का संरक्षक पुरोहित नारायण दास 16वीं शताब्दी का ''दधीचि'', ''त्यागवीर'' पालीवाल जाति का प्रकाशमान उज्जवल नक्षत्र।
महाराणा उदयसिंह के कुंवर प्रताप एवं शक्तिसिंह के बीच शिकार को लेकर परस्पर हुए संघर्ष के दौरान नारायणदास ने बीच में पड़ कर प्राणोत्सर्ग किया। इस उपलक्ष्य में महाराणा प्रताप ने पुरोहित नारायणदास के परिवार को वि.सं. 1628 में उदयपुर में बड़गांव का पट्टा दिया।

मेवाड़ के राजपुरोहित-वंशावली क्रमशः

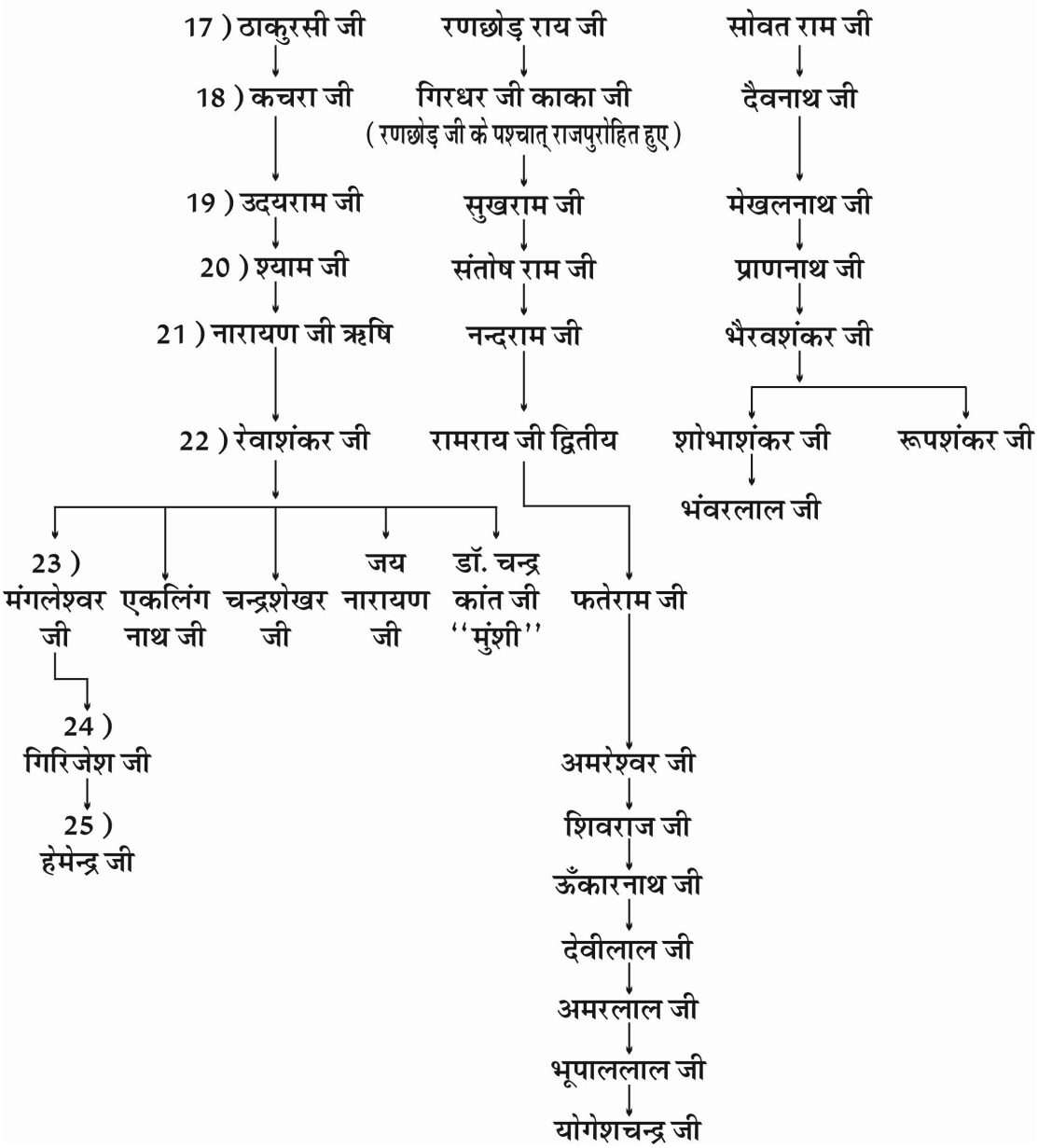

सन्दर्भ :– रा. वै. रेवाशंकर पुरोहित, आयुर्वेदाचार्य द्वारा लिखित – पालीवाल ब्राह्मण इतिहास (अथवा सरशल वंश प्रबोधनी), प्रथम संस्करण, वि. सं. 243, रामनवमी

परिशिष्ट – 3 – पानेरी घराने का सजरा

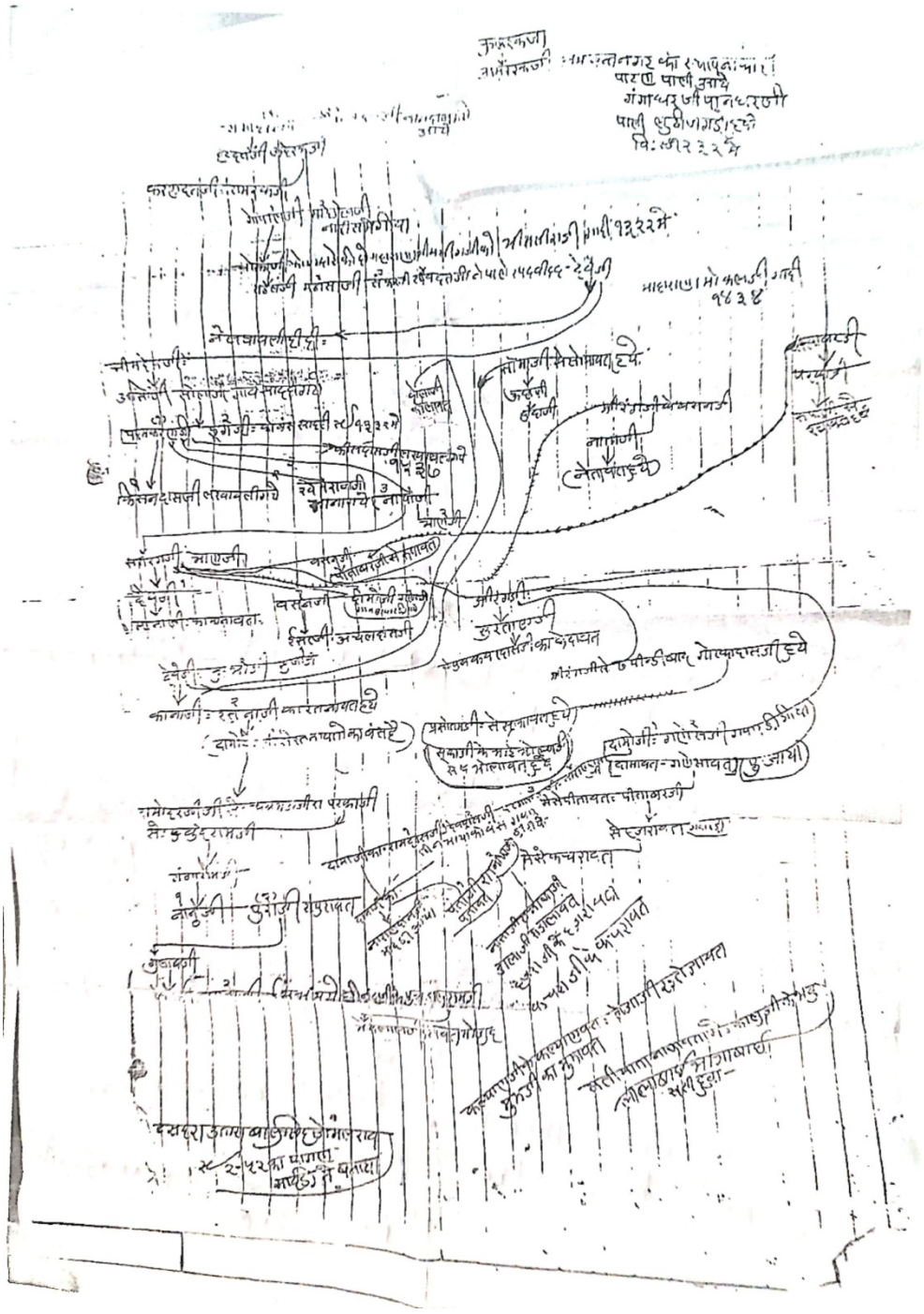

सन्दर्भ :– डॉ. जी. एल. मेनारिया, निदेशक तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान, उदयपुर एवं डॉ. अजातशत्रु सिंह शिवरती, निदेशक शिवरती शोध संस्थान, उदयपुर से प्राप्त।

परिशिष्ट – 4 – मेवाड़ रियासत का संविधान

॥ श्रीएकलिङ्गोविजयते ॥

शोध कार्य पुस्तकालय

THE Constitution of Mewar

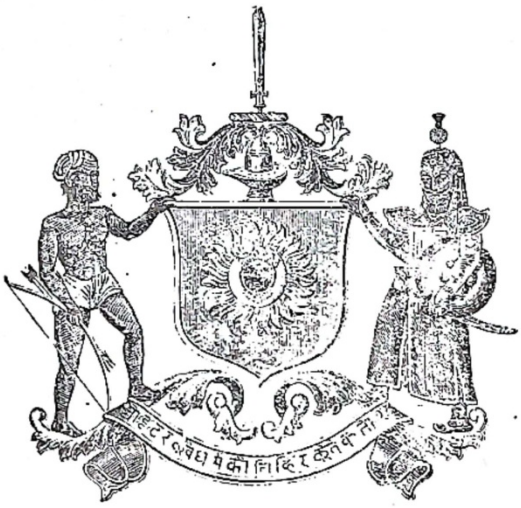

राजस्थान राज्य अभिलेखागार उदयपुर

PROMULGATED

by

Major General Maharajadhiraj Maharana
Shri Sir Bhupal Singhji Sahib Bahadur
G. C. S. I. K. C. I. E. of Udaipur.

On 23rd May, 1947.

राजस्थान राज्य अभिलेखागार
उदयपुर

Printed by Mr. D. V. Shivahare, B. A., LL. B., Manager,
at the Govt. Printing Press, Udaipur.

Price As. 8/-

सन्दर्भ :— राजस्थान राज्य अभिलेखागार, शाखा उदयपुर

परिशिष्ट – 5 – नक्शा जागीरात राज्य मेवाड़ वि.सं. 1907 (ई.सन् 1850)

सन् 1850 ई० नक्शा जागीरात मेवाड़
सम्वत 1907

नक्शा जागीरात राज्य मेवाड़

नंबर शुमार	नाम रखाप मय गाँव की तादाद	तादाद ठिकाने गाँव की तादाद वि.ई०७	पैदायश वि.ई०७	वि.ई०७ के बाद खालसे हुवा	वि.ई०७ के बाद बढ़ेगये	अब बाकी नहे	रकबा पैदायश मोजूदा	कैफियत
		ठिकाना गाँव		तादाद गाँव	ठिकाना तादाद गाँव	ठिकाना तादाद गाँव		
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
१	झाला	८	१९९	१०७०२९)		२	१००) भागी नगोड़सिंह जी १०९९) पता नेता भाग तावर सिंह जी	१०	२०१	१०८२२८)		
२	चोहान	२३	[illegible]	७८६१६)	१	३५०) चीकड़	२	१३००) आकीया गामीर सिंह जी ३१३९) भु पाल नार भुड़ मन होन सिंह जी	२४	११७	८२७०५)	पारसोली वाली की वि०में गांव बसे जिसकी आ मद खाना नं. ५ मेहै। वि.ई.२२में ए बेदले को गांव बढ़े सीमकी आमद खा नं. ५ मे है।
३	किशनावत	१५	३६२	२६०४३९)	६२	४५१३) आसी नदी ३३३६) नकी ५५८०) चावड़ २१६००) भदेसा ७०९२५)	२	पलीयाल भुड़ावत अदसन सिंह जी २५) मान पुर चु. जीवावर सिंह जी	१२	३०२	१९९६३५)	
४	सांगावत	२६	१५०	१४६९६२)	.	.	.	.	२६	१५०	१४६९६२)	
५	जगावत	२५	४४	८४८३९।।)	.	.	.	.	२५	४४	८४८३९।।)	
६	मेगावत	५	१६०	५५८०८।।।)	५	१०३३) धी नापाड़ी	.	.	४	९५५	५४००५।।।)	
७	सांगदेवोत	२	६९	३१४७७)	.	.	.	.	२	६९	३१४७७)	
८	सक्तावत	४९	२०४	१८५८५९।=)	१४ २ १६	४०१३) धागद मक गोप ५१) मोर न पुरा १ ६५।।) हा न पुरा १ १०४७१) नोहड़ा ५ १३००) साही ६९४) जा रखा कापे १०१९५।।) रा	१ १ १	७२५) उद पुरा नोलेता केशरीसिं ह जी १ ८३००) नोहड़ा ७ ८२५)	४७	१९३	१७७५८९।।=)	

नकशा उमरावान व दिगर जागीरदारान जिनके चाकरी के बजाय नकद मुकर्रर नही हुवे

नम्बर शुमार	नाम ठिकाना	हाल पैदामश
१	२	३
	(उमरावान)	
१	शिवरती	६३७१।।।)
२	करजाली	१४७१०)
	दीगर जागीरदारान	
३	काशीदास कालेड़ा	७१)
४	कजवल	६५२)
५	कानजी का गुढ़ा	५००)
६	रावतवर माला	६००)
७	गेंदखिया	२५००)
८	गोरासा	१५००)
९	टलका	२२५)
१०	ढोकरू	३००)
११	दीपचा	३५२६०)
१६	परशाद	१०००)

चाकरी के बजाय नकदवास।)

१३

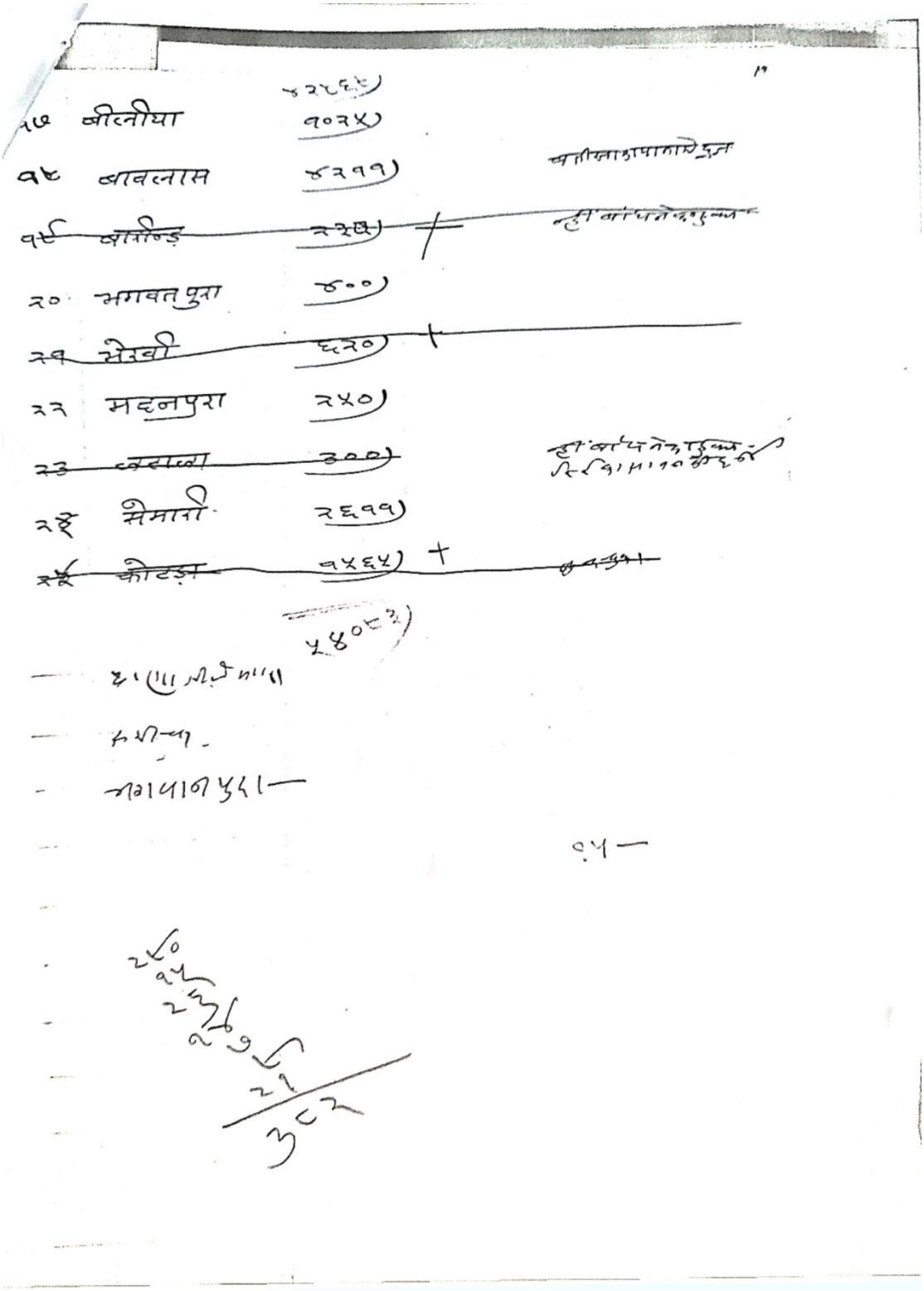

सन्दर्भ :– राजस्थान राज्य अभिलेखागार, शाखा उदयपुर

परिशिष्ट – 6 – महाराणा फतहसिंह कालीन मेवाड़ रेजीडेन्ट्स सन् 1884 से 1930 तक की सूची

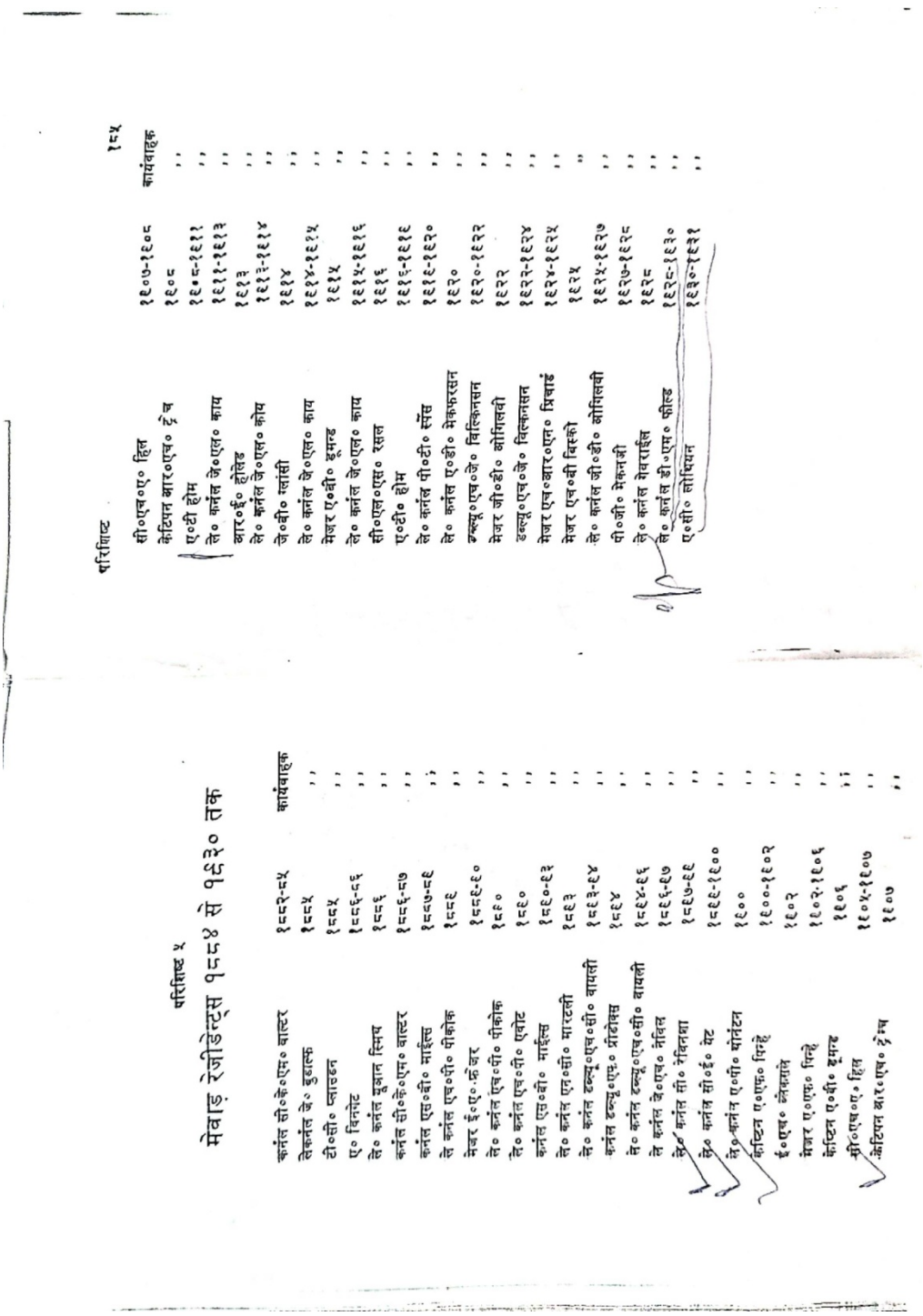

परिशिष्ट ५

मेवाड़ रेजीडेन्ट्स १८८४ से १९३० तक

कर्नल सी०के०एम० वाल्टर	१८८२-८५	कार्यवाहक
लेफ्टनेंट जे० डुबाल्क	१८८५	"
टी०सी० प्लाइडन	१८८५	"
ए० विनगेट	१८८६-८६	"
ले० कर्नल ड्रूमान स्मिथ	१८८६	"
कर्नल सी०के०एम० वाल्टर	१८८६-८७	"
कर्नल एस०बी० मार्ब्स	१८८७-८९	"
ले० कर्नल एच०पी० पीकोक	१८८९	"
मेजर ई०ए०.फ्रेजर	१८८९-९०	"
ले० कर्नल एच०पी० पीकोक	१८९०	"
ले० कर्नल एच०पी० एलोट	१८९०	"
कर्नल एस०बी० मार्ब्स	१८९०-९३	"
ले० कर्नल एस०पी० मारटली	१८९३	"
ले० कर्नल डब्ल्यू०एच०सी० वायली	१८९३-९४	"
कर्नल डब्ल्यू०एच० प्रीडोक्स	१८९४	"
ले० कर्नल डब्ल्यू०एच०सी० वायली	१८९४-९६	"
ले कर्नल जे०एच० नेबिल	१८९६-९७	"
ले० कर्नल सी० गेविनश	१८९७-९९	"
ले० कर्नल सी०ई० वेट	१८९९-१९००	"
ले० कर्नल ए०पी० मोनेटन	१९००	"
कप्तान ए०एफ० सिन्हे	१९००-१९०२	"
ई०एच० लेकमार्ले	१९०२	"
मेजर ए०एफ० सिन्हे	१९०२-१९०६	"
कप्तान ए०बी० ट्रमण्ड	१९०६	"
सी०एस०ए० हिल	१९०६	"
कैप्टन आर०एफ० ट्रेंच	१९०७-१९०७	"
	१९०७	"

परिशिष्ट

		१८५
सी०एच०ए० हिल	१९०७-१९०८	कार्यवाहक
कैप्टन आर०एच० ट्रेंच	१९०८	"
ए०टी होम	१९०८-१९११	"
ले० कर्नल जे०एल० काय	१९११-१९१३	"
आर०ई० हीलिंड	१९१३	"
ले० कर्नल जे०एल० कोय	१९१३-१९१४	"
जे०बी० ग्लांसी	१९१४	"
ले० कर्नल जे०एल० काय	१९१४-१९१५	"
मेजर ए०बी० डुमण्ड	१९१५	"
ले० कर्नल जे०एल० काय	१९१५-१९१६	"
सी०एल०एस० रसल	१९१६	"
ए०टी० होम	१९१६-१९१९	"
ले० कर्नल पी०टी० सेंसे	१९१९-१९२०	"
ले० कर्नल ए०डी० मेकफरसन	१९२०	"
डब्ल्यू०एच०जे० विल्किनसन	१९२०-१९२२	"
मेजर जी०डी० बोगिलवी	१९२२	"
डब्ल्यू०एच०जे० विल्कनसन	१९२२-१९२४	"
मेजर एच०आर०एल० प्रिचार्ड	१९२४-१९२५	"
मेजर एच०बी विस्को	१९२५	"
ले० कर्नल जी०डी० बोगिलवी	१९२५-१९२७	"
सी०जी० मेकनबी	१९२७-१९२८	"
ले० कर्नल मेवराईस	१९२८	"
ले० कर्नल डी०एम० फील्ड	१९२८-१९३०	"
ए०सी० लोयियन	१९३०-१९३१	"

सन्दर्भ :– महाराणा फतहसिंह जी और उनका काल (1884–1930 ई.), लेखक लक्ष्मी अग्रवाल, प्रथम संस्करण 1993, परिशिष्ट 5, पृ. 184–185

परिशिष्ट – 7 – महाराणा फतहसिंह कालीन भारत के गवर्नर जनरल एवं वायसराय सन् 1884 से 1930 तक की सूची

परिशिष्ट ६

भारत के गवर्नर जनरल एवं वाइसराय, १८८४ से १९३० तक

लार्ड	रिपन	१८८०-१८८४
,,	डफरीन	१८८४-१८८८
,,	लेन्सडाउन	१८८८-१८९३
,,	एल्गिन (द्वितीय)	१८९४-१८९९
,,	कर्जन	१८९९-१९०४
,,	एम्पटहील	१९०४
,,	कर्जन (पुनः नियुक्त)	१९०४-१९०५
,,	मिण्टो	१९०५-१९१०
,,	हार्डिग्ज	१९१०-१९१६
,,	चेम्सफोर्ड	१९१६-१९२१
,,	रीडिग	१९२१-१९२६
,,	इर्विन	१९२६-१९३१

सन्दर्भ :– पुस्तक – महाराणा फतहसिंह जी और उनका काल (1884–1930 ई.), लेखक लक्ष्मी अग्रवाल, प्रथम संस्करण 1993, परिशिष्ट 6, पृ. 186

परिशिष्ट – 8 – ठिकाना परसाद (रियासत मेवाड़) की वंशावली

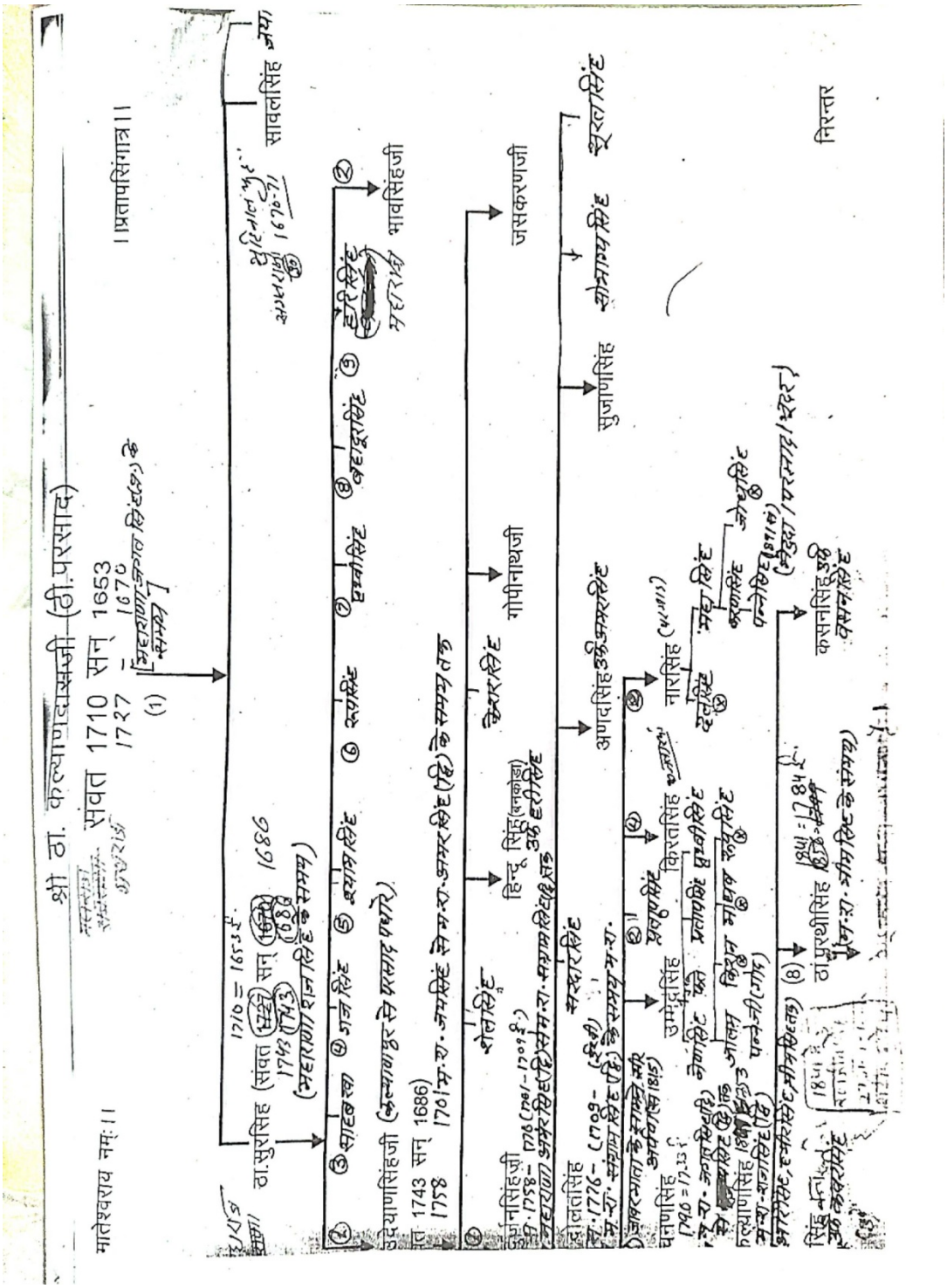

सन्दर्भ :– रतनसिंह जी एवं मोहन सिंह जी राणावत रिटायर्ड अध्यापक के निजी संग्रह से

परिशिष्ट – 9 – महाराणा भूपालसिंह जी का राज्यारोहण दरबार का दृश्य

72
Maharana Bhupal Singh at his enthronement durbar
Udaipur, 1944 or earlier. By Pannalal.
Numbered 38/2 on the reverse, with a valuation (Rs. 499) and a 20-line inscription (Appendix, no. 32) ending: ...*ye pat kalami citrakar pannalal parnaram gaud taiyar karyo / vi. sam. 2001 vaisakh sukla 3.*
38 x 50 ins.

Having been the effective ruler since 1921, Bhupal Singh finally came to the throne on the death of his father Fateh Singh on 24 May 1930[1]. On 22 August[2]

152

Mr. L.W. Reynolds, Agent to the Governor-General, Rajputana, attended the enthronement durbar in the palace, having arrived at Udaipur two days previously.

This durbar is depicted in the audience hall on the first storey of the palace called the Sabha Niromani ka Darikhana, dating from the reign of Maharana Karan Singh (1620-28). The hall is decorated with hanging glass lanterns and flowering shrubs in two painted Chinese(?) vases. The Maharana is seated at the centre of the assembly, holding a sword before him, on an ornate lion throne (*simhasana*) with red and gold

Nepal, facing them, seated at the far left, are: Prince Jagat Singh (Ka Kaka), Raj Singh (uncle of the Bada Rai), Prince Abhai Singh of Karjali and Hamir Singh of Shivarati.

Mr Reynolds, A.G.G., Rajputana, in white official dress, sits on a chair in front and footstool beside the Maharana. He holds a fly-whisk, perhaps the *kharita* or official notice of the enthronement. To the other five British officers are, from right to left: Mr C. Latham, the Mewar Resident; Mr C.L. Corfield, First Secretary to the A.G.G.; Lt.-Col. G.M.Ainscough, officiating Commandant, Mewar Bhil Corps, and Superintendent, Kherwara; Major J. Hodge, Residency Surgeon, and Mr C.G. Chatter, Director, Survey and Settlement Commissioner, Mewar.

Behind the Maharana's throne stands the minister, Raba Prabhunar Chandra. Also standing to the rear are (on the right): Tej Singh, Mewla; Mehta Lakshman Singh; Pancholi Chandranath; Pandit Lakshmanath and Balkishan; (on the left) Pancholi Mathuranath and Jiwa Dayal; Munshi Muhammad Umar and Pandit Mohanlal, (with *chowries*) Pancholi Lakshmanath and Dhabhai Singh, (with *warishdi*) Dhabhai Moti and Jethi Chamberlain. Also present are Dhabhai Tulsinath, foreground seated, and other courtiers. In the left the right the royal parasol bearers.

Possibly based on photographs of the occasion, this scrupulously detailed depiction was presented by the artist Pannalal as late as 1944. It may well be the very last in the long line of royal durbar scenes painted at Udaipur from the late 17th century onwards. Unusually for this late period (see also no. 78), it bears on the reverse a full-blown traditional inscription with dates, names and honorific titles of those attending the durbar.

1. 12th of the dark half of Jyeshtha, V.S. 1987 (the present inscription gives V.S. 1986). Gahlot, *Rajputon ka Itihas*, p.296.
2. 13th of the dark half of Bhadrapada, V.S. 1987. Ibid., p.304.

cushions and lion-supported foot-stool. Hanging on the wall behind the throne is a portrait, possibly of the late Maharana Fateh Singh.

The nobles seated to the right of the throne are: Rao Nahar Singh of Bedla, Rawat Khumman Singh of Salumbar, Rajrana Lawnat Singh of Delwara, Rawat Kesari Singh of Kanor, Rawat Tikhat Singh of Bassi, Rao Lal Singh of Parsoli, (Kaka) Lakhman Singh of Karjali, (Bhai) Shivdan Singh of Shivarati and Rawat Madan Singh of Hamirgarh. Seated in the right foreground are: Thakur Amar Singh, Lakhman Singh, Nahar Singh, Maharaja Pratap Singh and Mool Jang of

153

सन्दर्भ :– द सिटी पैलेस म्यूजियम उदयपुर – पेंटिंग ऑफ मेवाड़ कोर्ट लाईफ, लेखक एण्ड्रू टॉप्सफिल्ड

परिशिष्ट – 10 – मेवाड़ महाराणा के शिविर (कैम्प) की बैठक व्यवस्था

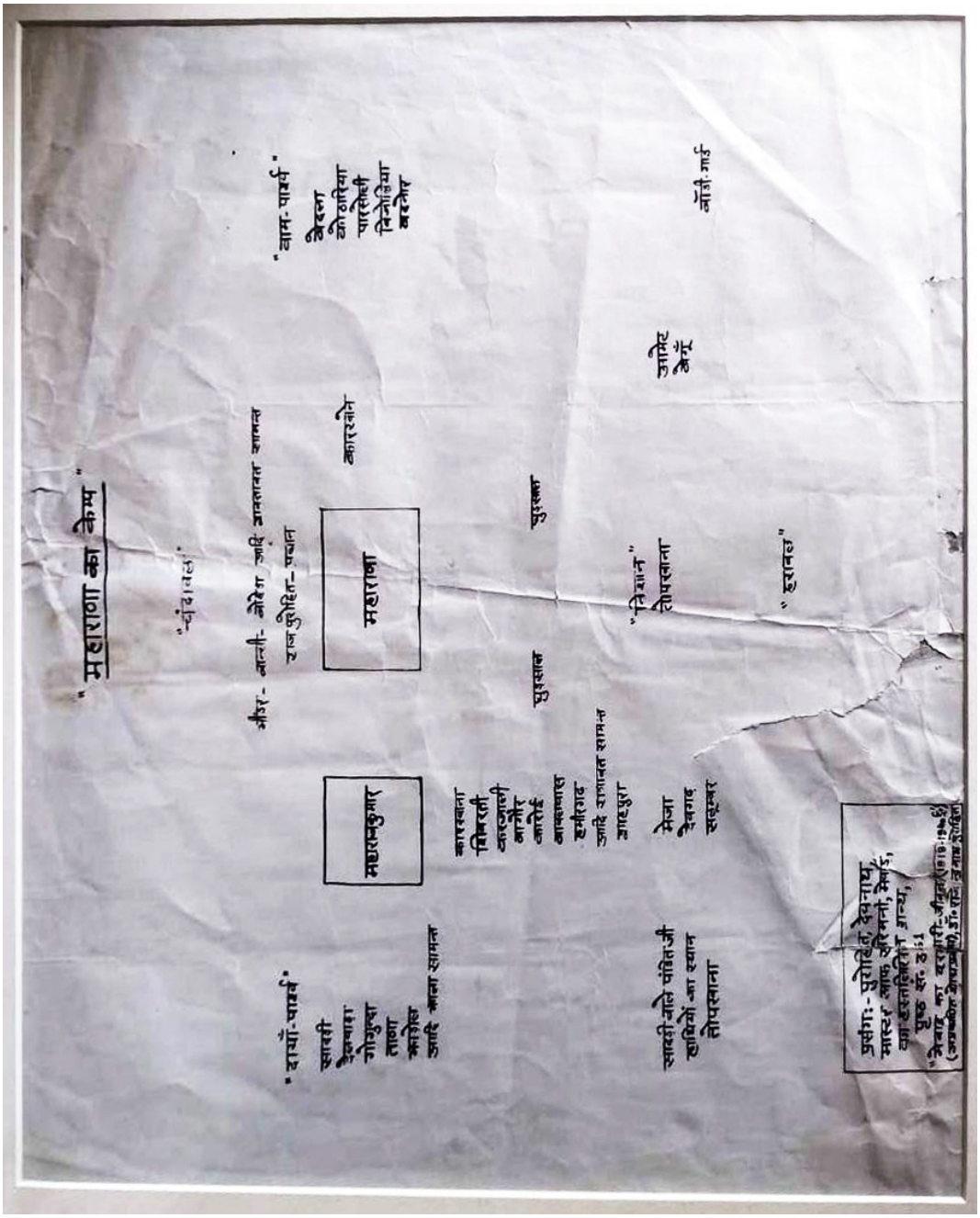

सन्दर्भ :– मेवाड़ का दरबारी जीवन (1818–1940 ई.), अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, डॉ. राजेन्द्रनाथ पुरोहित (प्रसंग – पुरोहित देवनाथ, मास्टर ऑफ सेरेमनी मेवाड़, का हस्तलिखित ग्रन्थ)

परिशिष्ट – 11 – महाराज साहब श्री शिवदानसिंह जी की तस्वीर मय लवाजमा वि.सं. 1994

परिशिष्ट – 12 – दसरावा का दरीखाना को तरीको

रिसर्च पेपर्स पब्लिश्ड / प्रजेन्टेड इन द कॉन्फ्रेन्स

MAH/MUL/03051/2012
ISSN-2319 9318

Vidyawarta®

Peer Reviewed International Multilingual Research Journal

Issue-43, Vol-01, July to Sept. 2022

Editor
Dr.Bapu G. Gholap

MAH/MUL/ 03051/2012 **ISSN :2319 9318**

आंतरविद्याशाखीय बहुभाषिक शोध पत्रिका

विद्यावार्ता™

July To Sept. 2022
Issue 43, Vol-01

Date of Publication
01 July 2022

Editor
Dr. Bapu g. Gholap
(M.A.Mar.& Pol.Sci.,B.Ed.Ph.D.NET.)

विद्येविना मति गेली, मतीविना नीति गेली
नीतिविना गति गेली, गतिविना वित्त गेले
वित्तविना शूद्र खचले, इतके अनर्थ एका अविद्येने केले

-महात्मा ज्योतीराव फुले

❖ **विद्यावार्ता** या आंतरविद्याशाखीय बहूभाषिक त्रैमासिकात व्यक्त झालेल्या मतांशी मालक, प्रकाशक, मुद्रक, संपादक सहमत असतीलच असे नाही. **न्यायक्षेत्र:बीड**

"Printed by: **Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.** Published by **Ghodke Archana Rajendra** & Printed & published at Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.,At.Post. Limbaganesh Dist,Beed -431122 (Maharashtra) and Editor **Dr. Gholap Bapu Ganpat**.

Reg.No.U74120 MH2013 PTC 251205
Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.
At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed
Pin-431126 (Maharashtra) Cell:07588057695,09850203295
harshwardhanpubli@gmail.com, vidyawarta@gmail.com
All Types Educational & Reference Book Publisher & Distributors / www.vidyawarta.com

40) आधुनिक काव्य संवेदना का विकास और कबीर
डॉ. राम बाबू मेहर, सागर, (म.प्र.) ||177

41) उदयपुर में बेदला ग्राम के कार्तिक स्वामी मन्दिर का शिलालेख (उदयपुर नगर की ...
रामसिंह राठौड़, उदयपुर (राज.) ||181

42) उपन्यासकार कृष्णा सोबती के साहित्य में स्त्री संवेदना
डा. गीता एच. तलवार, कारवार [उत्तर कन्नड] ||186

www.vidyawarta.com/03 | http://www.printingarea.blogspot.com

Harshwardhan Publication Pvt.Ltd. ● International Multilingual Research Journal ●
9850203295

का कारण भी है। सहस्राब्दों में निर्मित और विकसित मानवीय मूल्य अब विघटित होते जा रहे हैं, यह हमारी वर्तमान सभ्यता की चिंता का केन्द्रीय विषय है। यों तो संक्रमण और मूल्यहीनता की स्थिति मानवीय इतिहास में अनेक बार आई है — संक्रमण का रोना लगभग हर युग के इतिहासकार ने रोया है — पर यह मानना होगा कि अब तक के संक्रमण अपनी प्रकृति में संशोधन और सुधारपरक अधिक थे। इधर प्राय: द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के बाद से तो मूल्य सम्बन्धी मौलिक आधार ही जैसे उखड़ गये हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. लोक जागरण और हिन्दी साहित्य रामविलास शर्मा वाणी प्रकाशन नई दिल्ली

२. लोक साहित्य और संस्कृति दिनेश्वर प्रसाद जय भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

३. लोक साहित्य का अध्ययन डॉ. विलोचन पाण्डेय लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

४. लोक साहित्य की भूमिका कृष्णदेव उपाध्याय साहित्य भवन ९३, जीरो रोड, इलाहाबाद

५. लोकधर्मी नाट्य परम्परा डॉ. श्याम परमार हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी

६. समकालीन प्रतिनिधि कवि अनन्त कीर्ति तिवारी

७. साठोत्तर हिन्दी काव्य में डॉ. एस. गम्भीर विद्या विहार, गाँधी नगरराजनीतिक चेतनाए कानपुर

८. साठोत्तरी कविता में जनवादी नरेन्द्र सिंह वाणी प्रकाशन

⌘⌘⌘

41

उदयपुर में बेदला ग्राम के कार्तिक स्वामी मन्दिर का शिलालेख

(उदयपुर नगर की स्थापना के विशेष संदर्भ में)

रामसिंह राठौड़
शोधार्थी, इतिहास विभाग,
पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****

वि.सं. १६२६, शक वर्ष १४९२ ई. सन् १५६९ के वर्ष में प्रताप के पिता महाराणा उदयसिंह के शासनकाल में उत्कीर्ण यह शिलालेख उदयपुर नगर की उत्तर दिशा में बेदला ग्राम के कार्तिक स्वामी मन्दिर के सन्निकट एक बड़े चबुतरे पर निर्मित छत्री पर बने स्मारक स्तम्भ पर है। सर्वप्रथम डॉ. जी.एल. मेनारिया[१] ने २३ जुलाई १९८४ को इसे स्थानीय राजस्थान पत्रिका समाचार पत्रों में प्रकाशित कराया था। इस मन्दिर के पास उदयसिंह कालीन जीर्ण—क्षीर्ण महल, एक बावड़ी भी है। उक्त शिलालेख स्मारक स्थल के निर्माण की ज्योतिष शास्त्रानुसार काल गणना का सूक्ष्म शुभ समय प्रथम पांच पंक्तियों में उत्कीर्ण किया है। पांचवीं पंक्ति से ९वीं पंक्तियों में तत्कालीन महाराणा श्री उदयसिंह एवं राज्य के प्रधान पदाधिकारी रामामसाणी का उल्लेख हुआ है। पंक्ति १० से १२ में स्मारक स्थल पर दिवंगत सति स्तम्भ के पूर्वजों का नामोल्लेख किया है (सम्भवत: उदयसिंह को पन्नाधाय जिस वारि जाति के साथ चित्तौड़ से उसे कुम्भलगढ़ सुरक्षित ले गयी थी, उस परिवार का स्तम्भ है अथवा महाराणा उदयसिंह शासन में प्रधानमंत्री रामामसाणी की स्मृति में निर्मित है, अभी इस विषय पर शोध करने की जरूरत है।)

प्रशस्ति में सबसे ऊपर सूर्य एवं चाँद के प्रतीक बने हुए हैं, जिनके नीचे एक पुरूष व नारी की खड़ी प्रतिमाएं हैं, जो रामामसाणी अथवा पन्नाधाय के

सहयोगी वारि परिवार की होगी। शिलालेख की भाषा संस्कृत व लिपि देवनागरी है। अन्तिम तीन पंक्तियों में यहाँ निर्मित देवली (मंदिर) को भेंट स्वरूप इस मन्दिर स्मारक स्थल निमित ३० रका भूमि सुतार लाला को देने का उल्लेख किया गया है।

बेदला के शिलालेख का मूल पाठ —

।। स्वस्ति श्री संवत् १६२६ वर्षे शक १४९२ प्रवर्तमाने
।। उत्तरायणे।। ग्रीष्मऋतु।। आषाढ़ मासे शुक्ल पक्षे
।। ऐकादसी सुक्त घटी।। ४८ वि ३० श्री महाराजा अद्य
।। राजा रणा श्री उदिसिंग जी पट्ट।। राकुल
ग्रही बारी वंष जात न।। पाला सहिधन देवलो
प्राप्ति श्री।। रामामसाणी पद पंवासु जाबरी
।। लो वी देवलाक वसुंधरा रका ३०
सुतार लाला दी धाम हादि लिखांतु शुभ नव कल्याणमस्तु

शिलालेख का ऐतिहासिक महत्व —

इस लेख से ज्ञात होता है कि रामामसाणी सन् १५६९ तक उदयसिंह एवं प्रताप के साथ उदयपुर स्थित गिर्वा की पहाड़ियों में रहा और वह सन् १५५९ से १५६९ तक उदयपुर नगर के निर्माण और नवीन राजधानी बसाने के महत्वपूर्ण कार्य में संलग्न रहा होगा। बेदला के लेख में वारी वंश के उल्लेख से स्पष्ट है कि पन्नाधाय ने जिस उदयसिंह को पाला उस परिवार के मुखिया के देवलोक पर यहाँ उसका मूर्ति स्मारक और एक छतरी बनवायी। लेख में महाराणा द्वारा ३० बीघा भूमि प्रदान करने की सूचना मिलती है। यहीं पास में कुछ छतरियाँ, स्मारक और एक प्राचीन मंदिर निर्मित कराया, जिसे स्थानीय लोग कार्तिक स्वामी का मंदिर पुकारते हैं।

हल्दीघाटी के युद्ध में प्रताप के सहयोगी यौद्धाओं में रामामसाणी का नाम नहीं होकर उसके पुत्र जगन्नाथ मसाणी का होना यह प्रमाणित करता है कि बेदला के लेख के तीन वर्ष के दौरान याने १५६९ से १५७२ तक उदयसिंह ने गोगुंदा को अस्थाई राजधानी चुना, वहीं रहकर उदयसिंह की मश्त्यु हुई। अतः मेरी धारणा है कि रामामसाणी का निधन उदयसिंह के जीवन के अंतिम दिनों में बेदला में हुआ होगा। जहाँ उसका स्मारक एवं छतरी तत्कालीन इतिहास की जानकारी का पुरातात्विक प्रमाण है। यहां बेदला ठिकाने के संक्षिप्त इतिहास का उल्लेख करना प्रासंगिक है, क्योंकि महाराणा उदयसिंह द्वारा चित्तौड़ छोड़कर उदयपुर गिर्वा क्षेत्र में नई राजधानी के निर्माण और अन्य जनोपयोगी उदयसागर झील, राजमहल, सामन्तों और अन्य पदाधिकारियों के निवास हेतु बनाए गए स्मारकों को आज भी ऐतिहासिक विरासत के साक्ष्य के रूप में देखा जा सकता है। इसी तरह बेदला के निकट स्थित चिकलवास गांव में उदयसिंह के समय के चारभुजा मन्दिर (लक्ष्मीनारायण मन्दिर) में उपलब्ध शिलालेख और इस गांव के रावराणा परिवार के सजरे के आधार पर यह प्रमाणित होता है कि उदयपुर गिर्वा स्थित बेदला ठिकाना का अपना विशिष्ठ महत्व है। जो यहाँ प्राप्त कार्तिक स्वामी के मन्दिर के निकट पुराने खण्डहरनुमा महल, बावड़ी और बेदला ठिकाने के पश्चिमी दिशा में ऐतिहासिक बावड़ी को देखकर यह प्रमाणित होता है कि उदयसिंह ने चित्तौड़ पर अकबर के आक्रमण (१५६७—६८) के पूर्व ही उदयपुर नगर की स्थापना कर इसे राजधानी का रूप दे दिया था।

हाल ही में दिनांक १५ दिसम्बर २०२१ को ग्लोबल हिस्ट्री फोरम के संस्थापक अध्यक्ष डॉ. जी. एल. मेनारिया, फोरम के सचिव इतिहासकार डॉ. अजातशत्रु सिंह शिवरती के नेतश्त्व में मेवाड़ इतिहास परिषद के अध्यक्ष डॉ. गिरीशनाथ माथुर, पूर्व विभागाध्यक्ष इतिहास विभाग राजस्थान विद्यापीठ वि. वि. उदयपुर, राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सा संघ के

डॉ. मनोज भटनागर, सचिव श्री गुणवन्तसिंह देवड़ा, पेसिफिक वि.वि. के शोधार्थी श्री रामसिंह राठौड़, बड़गाँव पंचायत समिति के उप—प्रधान प्रतापसिंह राठौड़, एडवोकेट प्रेमसिंह पंवार, विजयसिंह धनेरिया इत्यादि के दल ने उदयपुर गिर्वा स्थित महत्वपूर्ण बेदला ठिकाने के राजमहल, ऐतिहासिक बावड़ियाँ, मन्दिरों व अन्य पुरा सम्पदा का सर्वेक्षण किया। इस अवसर पर डॉ. गिरीशनाथ माथुर ने बताया कि मुस्लिम आक्रमणों के समय मेवाड़ की राजधानियाँ समय—समय पर स्थानान्तरित होती थी, बेदला की एक दिशा में नागदा एवं दूसरी तरफ देबारी चित्तौड़ मार्ग पर गिर्वा में आहड़ भी राजधानी थी। आहड़ व बेदला की भौगोलिक एवं सामरिक स्थिति अकबर के चित्तौड़ से उदयपुर में नयी राजधानी के चयन की दशष्टि से महत्त्वपूर्ण होने से उदयपुर गिर्वा को महाराणा उदयसिंह ने अपने मुगल—पठान आक्रमणों की पृष्ठभूमि में यहाँ उदयसागर झील एवं राजमहल बनवाये थे।

डॉ. मनोज भटनागर ने सर्वेक्षण दल के सम्मुख अपने पिता प्रसिद्ध इतिहासकार स्व. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद भटनागर के द्वारा अनुसंधान में प्राप्त संस्कृत ग्रंथ अमरकाव्यम् के आधार पर उदयपुर नगर की स्थापना वि.सं. १६२४ याने ई.सन् १५६७ में करने के प्रमाण प्रस्तुत किए। डॉ. जी. एल. मेनारिया ने बेदला के कार्तिक स्वामी मन्दिर के शिलालेख में लिखित तिथि वि.सं. १६२६ ई.सन् १५६९ को महाराणा उदयसिंह एवं मेवाड़ के प्रधानमंत्री रामामसाणी इत्यादि की उपस्थिति के आधार पर बताया कि उदयपुर नगर की स्थापना निर्विवाद रूप से वि.सं. १६२४ में हो गयी थी। उदयपुर राजमहल में महाराणा के प्रवेश करने का श्लोक अमरकाव्य में स्पष्ट लिखा है। उदयपुर नगर में महाराणा द्वारा नई राजधानी और राजमहल के प्रवेश से सम्बन्धित तिथि के बारे में पूर्व निदेशक राजस्थान विद्यापीठ संस्थान उदयपुर के डॉ. देव कोठारी द्वारा अमरकाव्य इत्यादि ग्रंथों के सम्पादन के तहत योगदान रहा है साथ ही प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के शोध सहायक डॉ. राजेन्द्रनाथ पुरोहित के द्वारा भी साक्ष्य उपलब्ध कराए गए। प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के शोध ग्रंथों के आधार पर उक्त तिथि की परिपुष्टि होती है। अतः उदयपुर नगर की स्थापना की तिथि निर्धारण हेतु बेदला का नवीन शिलालेख मूल्यवान सिद्ध होगा।

उदयपुर की स्थापना का आधार : अमरकाव्यम् सर्ग १४ पद्य ७३ —

महाराणा राजसिंह कालीन ग्रन्थ अमरकाव्यम् जिसकी रचना पं. रणछोड़ भट्ट ने की थी। उसने ग्रन्थ के सर्ग १४ पद्य ७३ में लिखा कि वि.सं. १६२४ चैत्र शुक्ल ११ सोमवार के दिन महाराणा उदयसिंह ने नगर में प्रवेश किया और अपने नाम से इसका नाम उदयपुर रखा। इस हेतु निम्नलिखित श्लोक इस प्रकार है —

''चतुरधिके विश्त्यंद के षौड़शाख्यै, शत इह मधु शुक्ले का दशौ वासतरागे। नगर उदयसिंहों वासमरिभन्वितेत् उदयपुर शुभाख्यमचक्रे ग चक्रः।।''

अमरकाव्यम् ग्रन्थ के अतिरिक्त उदयपुर के प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान संग्रहालय में उपलब्ध प्राचीन ग्रन्थ संख्या ४२६२ के पृष्ठ १२ पर भी यही तिथि लिखि हुई है। जो इस प्रकार है — सं. १६२४ चेत सुदी ११ श्री उदेसिंघ जी उदयपुर वसावा रो आंख की दो। जो कि अमरकाव्यम् के सर्ग १४ पद्य ७३ में प्रमाण स्वरूप साक्ष्य है।

परिशिष्ठ १ : बेदला ठिकाना — संक्षिप्त परिचय

दी रूलिंग प्रिसेंज चीफ्स एण्ड लीडिंग परसनेजेज इन राजपुताना[२] नामक पुस्तक में उदयपुर रियासत के ठिकाना बेदला का उल्लेख करते हुए डॉ. जी. एल. मेनारिया ने बताया कि मेवाड़ की राजधानी जब चित्तौड़ थी, तो बेदला के चौहान वंशज व जागीरदार जो राज्य के प्रथम श्रेणी के थे, महाराणा अमरसिंह प्रथम के शासनकाल के पूर्व इस ठिकाने के सामन्त गंगरार में जागीरी के स्वामी थे, परन्तु राणा उदयसिंह के द्वारा राजधानी उदयपुर स्थानान्तरित होने के बाद महाराणा अमरसिंह प्रथम ने गंगरार के बदले उदयपुर गिर्वा क्षेत्र में उक्त जागीरी प्रदान कर दी इसके बदलाव के कारण इसका नामकरण भी बेदला हुआ।

जहाँ तक बेदला के जागीरदारों के वंशवृक्ष का सम्बन्ध है, सी. एस. बेले ने, बीकानेर के ऐजेन्ट जी. एच. ट्रेवर की रिपोर्ट (राजपूताने के रूलिंग फैमेलीज का इतिहास लिखने बाबत् गवर्नर जनरल को भेजी गयी रिपोर्ट सन् १८७९) के आधार पर सन् १९०८ में

प्रकाशित पुस्तक में लिखा है कि सम्पूर्ण राजपूताना में कुल छः जातीय राजपूत राज्य का शासन रहा है। इनमें १) राठौड़ — बीकानेर, जोधपुर, किशनगढ़, २) मेवाड़ (उदयपुर) में सिसोदिया — उदयपुर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़ व शाहपुरा, ३) चौहान — हाड़ा चौहान इसमें बूंदी व कोटा के राज्य तथा देवड़ा चौहान — सिरोही, ४) जाडोन — भाटी — करौली, जैसलमेर, ५) कच्छावा — जयपुर, अलवर (नरूक्का), ६) झाला —झालावाड़, ७) जाट राज्य — भरतपुर, धौलपुर (ये दोनों ही राज्य प्राचीन यदुवंशी शाखा से है, ये करौली व जैसलमेर की शाखा से सम्बन्धित है)

मेवाड़ के प्रथम श्रेणी के सरदारों का नक्शा — पृष्ठ ५४—५८ तक, श्यामलदास, वीर विनोद, प्रथम खण्ड[३] इस पुस्तक में उदयपुर रियासत (मेवाड़ राज्य) के प्रमुख जागीरदारों को किस महाराणा द्वारा किस वर्ष में कौनसा ठिकाना पट्टों पर दिया उसका विवरण दिया गया है।

बेदला का ठिकाना[४] महाराणा अमरसिंह प्रथम के समय वि.सं. १६५३ ई. सन् १५९७ में बल्लू चौहान को मिला इस ठिकाने के स्वामी चौहान वंश पदवी राव है। ''वीर विनोद'' नामक पुस्तक के लेखन याने राणा सज्जनसिंह के समय बेदला का राव कर्णसिंह था। इस ठिकाने को पुराने ठिकाने गंगरार (चित्तौड़ की राजधानी तब) के बदले उदयपुर गिर्वा में देने से इस अदल—बदल से इसको बेदला कहा जाता है। सन् १५९७ से महाराणा भुपालसिंह के समय राव मनोहरसिंह तक इसी चौहान वंश के अधिकार में रहा। इस ठिकाने का अदल—बदल नहीं हुआ।

सन् १९०८ में प्रकाशित Ruling Princes Chiefs and leading personage in Rajputana शीर्षक पुस्तक के पृष्ठ १७०—१७१ पर बेदला ठिकाने के तत्कालीन राव नाहर सिंह तक इस वंश का संक्षिप्त उल्लेख हुआ है। बेदला ठिकाने की वंशतालिका का पुरातात्त्विक साक्ष्य सन् १९८४ में डॉ. जी. एल. मेनारिया ने बेदला राजमहल के पीछे पश्चिमी दिशा के चान्दपोल बाहर एक ऐतिहासिक प्राचीन बावड़ी के प्रवेश द्वार की ताकों में लगे शिलालेखों से ज्ञात की। इसकी पुष्टि प्रताप शोध संस्थान, उदयपुर में उपलब्ध बेदला की ख्यात से भी होती है। इसमें लिखा है कि बेदला[५] ठिकाने के अधीन ६२ गांव थे जिनसे वार्षिक आय ८०,००० रूपये थी, उसमें से ५२२२ रूपये ठिकाने को उदयपुर दरबार को कर के रूप में देना पड़ता था। बेदला के राव नाहरसिंह का जन्म २७ अगस्त १८९५ में हुआ। वे अजमेर के मेयो कॉलेज में शिक्षित हुए। यह अपने पिता राव कर्णसिंह के सन् १९०० में उत्तराधिकारी थे। कर्णसिंह मेवाड़ में महद्राज सभा का सदस्य था। अंग्रेज सरकार द्वारा इन्हें राय बहादुर का खिताब मिला था। बेदला के राव नाहरसिंह के प्रपिता राव वख्त सिंह बड़ा बहादुर था। १८५७ की सैनिक क्रान्ति के संकट में मेवाड़ के महाराणा स्वरूपसिंह ने कप्तान शावर्स[६] के अनुरोध पर बेदला राव वख्त सिंह को एक सैन्य टुकड़ी लेकर अंगेजों की सहायतार्थ उदयपुर से नीमच भेजा। इनके साथ सहीवाला अर्जुनसिंह[७] भी था। १८५७ के विद्रोह के समय ब्रिटिश छावनियों से असहाय अंग्रेज परिवारों को जिन्हें आबू व नीमच से उदयपुर लाकर सुरक्षित रखा। इस कार्य की सेवा से प्रसन्न होकर ब्रिटिश सरकार ने इन्हें सी.आई.ई. के पद से सम्मानित किया। नीमच छावनी के यूरोपीय परिवारों को डूंगला से उदयपुर सुरक्षित लाने व महाराणा के आदेश से उनको व माउण्ट आबू की एरणपुरा छावनी से उदयपुर आये सभी यूरोपीय परिवारों को संकट के समय जगमन्दिर में ठहराया और जब तक सैनिक विप्लव समाप्त नहीं हुआ, तब तक महाराणा स्वरूपसिंह बेदला राव के सहयोग से शरण आये यूरोपियन परिवारों की रक्षा करने के कारण प्रसिद्ध है। वस्तुतः बेदला व कोठारिया ठिकाने के चौहान सामन्त मूलतः अजमेर के भारत प्रसिद्ध पृथ्वीराज चौहान के उत्तराधिकारी है। सन् ११९३ में मोहम्मद गौरी का अजमेर पर अधिकार होने अजमेर व दिल्ली के अन्तिम हिन्दू राजवंश के उत्तराधिकारी चित्तौड़ में शरण आये तब से ही १२वीं सदी से २०वीं सदी तक बेदला के चौहान मेवाड़ रियासत के सहयोगी रहे। अतः स्पष्ट है कि बेदला के तत्कालीन चौहान वंशीय जागीरदार मेवाड़ के महाराणा उदयसिंह एवं महाराणा प्रताप के सहयोगियों में प्रमुख थे। १२वीं सदी से महाराणा भूपालसिंह तक बेदला के चौहान शासकों का योगदान

चीर स्मरणीय है।

परिशिष्ठ २ : चिकलवास ग्राम का शिलालेख—

चिकलवास के शिलालेख को सर्वप्रथम डॉ. जी. एल. मेनारिया व डॉ. अजातशत्रुसिंह ने पढ़ा व उसका फोटो लिया। इसमें यहाँ प्राचीन चारभुजानाथ (लक्ष्मीनारायण) मन्दिर के प्रवेश द्वार पर यह शिलालेख उत्कीर्ण है जो महाराणा रायमल के समय बना था, परन्तु पुराना जीर्णशीर्ण होने से उदयसिंह के समय पक्का बनाया व मन्दिर को परणाया। स्थानीय रावराणा के वंशजों के सजरे को तैयार किया जो गांव के एक स्थानीय अध्यापक के घर में देखने को मिला। मुण्डारा गांव के राव की एक प्राचीन पोथी में बेदला के निकट चिकलवास के मन्दिर सम्बन्धित एक सजरा बनाया जो जिसमें महाराणा उदयसिंह के समय यहाँ एक लक्ष्मीनारायण के मन्दिर के जीर्णोद्धार करवाने का वर्णन मिलता है। चिकलवास गांव का सजरा यहाँ मन्दिर के पास रहने वाले रावराणा के निजीगश्ह में उपलब्ध है जिसमें राणा रायमल से लगाकर महाराणा फतहसिंह तक के रावराणा परिवार का वंशवश्क्ष दिया गया। इसके एक तरफ मुण्डारा गांव के रावजी शम्भूसिंह ने २५.१०.७६ को पुराने सजरे नकल के आधार पर चिकलवास गांव के लक्ष्मीनारायण मन्दिर के निर्माण जीर्णोद्धार को सत्यापित किया।

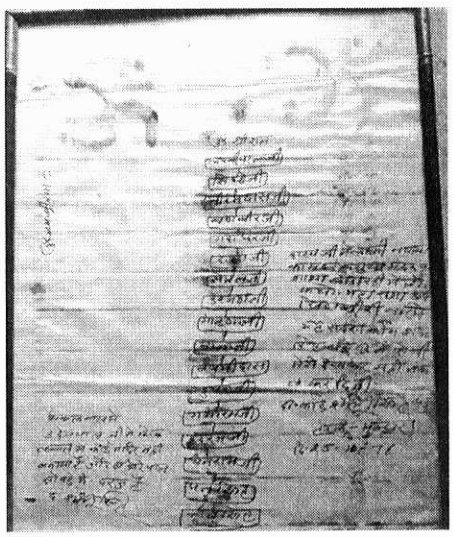

महाराणा उदयसिंह के समय चिकलवास गांव के तत्कालीन रावराणा श्री दास्य जी ने चिकलवास गांव में रायमल के समय निर्मित मन्दिर को पक्का बनवाया व परणाया। जिसका उल्लेख स्थानीय रावराणा परिवार के निजी संग्रहालय में उपलब्ध एक सजरे में हुआ।

अम्बेरी का शिलालेख का मूलपाठ (१४ जुलाई १९८६ को प्रकाशित) —

''श्री राज जी महाराजा महाराणा श्री उदिसिंघ जी श्री मुख वचनात। श्री प्रागदास ठडारस्त हल खेताम ५२ अम्बेरी जवरीरते गतुते दमासी हर्षेत दव। मुकन्ददपाल स. १६१७ वर्षे शके १४८१ सौमे ९ चैत्र मासे।''

अम्बेरी के शिलालेख का महत्व —

चित्तौड़ के पतन के वर्ष वि.सं. १६२४ (१५६८) के पश्चात् प्रताप पुनः उदयसिंह के साथ गिर्वा की पहाड़ियों में आए। इसकी पुष्टि हाल ही में ग्राम बेदला से प्राप्त वि.सं. १६२६ (सन् १५६९) के शिलालेख से होती है। अम्बेरी और बेदला से प्राप्त शिलालेखों में ९ वर्षों का अन्तर है इससे निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मेवाड़ के तत्कालीन प्रधानमंत्री रामामसाणी की देखरेख में उदयसिंह चित्तौड़ में जयमल और पत्ता को भार सौंप कर परिवार सहित ढ़ीकली गाँव में छिपकर रहे, जैसा वीर विनोद में उल्लेखित है। वस्तुतः मेरी मान्यता है कि अकबर के चित्तौड़ आक्रमण के दौरान उदयसिंह बेदला माता मंदिर के निकट रामामसाणी के साथ छिपकर रहे। बेदला में प्राचीन महल, बड़ी बावड़ी और तीन चार छतरियाँ और मकानों के अवशेष देखे जा सकते हैं। यह स्थान मुगल सेना के आक्रमण के समय सर्वाधिक सुरक्षित था क्योंकि शत्रु सेना के देबारी मार्ग से प्रवेश के समय महाराणा यहाँ से एक ओर ईसवाल होकर कुम्भलगढ़ और दूसरी तरफ श्री एकलिंगजी के दर्रे से निकलकर कुम्भलगढ़ प्रयाण कर सकते थे।

सन्दर्भ —

१) डॉ. जी. एल. मेनारिया, शोध लेख, उद्धृत, महाराणा प्रताप से सम्बन्धित स्त्रोत एवं स्थान, सम्पादक सज्जनसिंह राणावत, प्रो. के. एस. गुप्ता, श्री स्वरूपसिंह चूण्डावत, महाराणा प्रताप स्मारक समिति द्वारा प्रकाशित ग्रंथ, प्रकाशक चिराग प्रकाशन, उदयपुर वर्ष २००२,

पृष्ठ १०४ से ११०

२) दी रूलिंग प्रिसेंज चीफस एण्ड लीडिंग परसनेजेज इन राजपुताना, १९०८, पृष्ठ १७०—१७१

३) श्यामलदास, वीर विनोद, भाग १, पृष्ठ ५४—५८

४) History of Mewar by Capt. J. C. Brooks, page 8 – 9

५) उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग २, पृष्ठ १०७८—१०८२

६) कैप्टन शावर्स, मिसींग चैप्टर ऑफ इण्डियन म्यूटिनी, १८५९, पृष्ठ १७०—१८२

७) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवन चरित्र, पृष्ठ ७५—९०

साक्षात्कार —

१) दिनांक २६.१२.२०२१ इतिहासकार प्रो. डॉ. गिरीशनाथ माथुर, पूर्व विभागाध्यक्ष इतिहास विभाग, राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर।

२) दिनांक २६.१२.२०२१ इतिहासकार डॉ. जी. एल. मेनारिया, संस्थापक अध्यक्ष ग्लोबल हिस्ट्री फोरम, उदयपुर।

३) दिनांक २६.१२.२०२१ इतिहासकार डॉ. अजातशत्रु सिंह शिवरती, सचिव ग्लोबल हिस्ट्री फोरम, उदयपुर। (तुलसीप्रज्ञा, १९९५—९६ में प्रकाशित)

⌘⌘⌘

42

उपन्यासकार कृष्णा सोबती के साहित्य में स्त्री संवेदना

डा. गीता एच. तलवार

सहायक प्रद्यापिका एवं अध्यक्षा, हिंदी विभाग,

सरकारी. कला और विज्ञान [स्वायत्त] महाविद्यालय

कारवार [उत्तर कन्नड]

****

इक्कीसवीं सदी में स्त्री विषयक लेखन में उल्लेखनीय सफलता और स्थिरता दिखाई देती है। इस दौर की प्रमुख लेखिकाएं है– गीतांलिश्री, क्षमा शर्मा, प्रभा खेतान, मृदुला गर्ग, चित्रा मुद्गल आदि । भारतीय स्त्री की समस्याओं को समझने में मन्नु भंडारी, उषा प्रियंवदा, मैत्रेयी पुष्पा, दिप्ति खंडेलवाल मालती जिशी आदि की कृतियाँ रेखांकन योग्य हैं। कृष्णा सोबती, रमणिका गुप्ता, नासिरा शर्मा आदि ने स्त्री–अस्मिता पर बेबाकी से साहित्य–सृजन किया है। अमृता प्रीतम, कमलादास, तसलीमा नसरीन, अरुंधती राय आदि ने साहसपूर्ण आत्मकथाएँ लिखाकर स्त्रि–विमर्ष को समृद्ध किया है। हिंदी की नारीवादी आलोचना को राजेंद्र यादव पुरुषोत्तम, अरविंद जैन कमलाप्रसाद, सुधीश पचौरी आदि आलोंचकों ने स्त्री को निजी भाषा रचने की प्रेरणा दी है। स्त्री विमर्श की लेखिकाओं का विचार है कि श्रमिक स्त्री के बिना स्त्री– विमर्श का रचना संसार एकांगी है । वर्तमान स्त्री–विमर्ष में स्त्री–लेखन की संभावनाओं और सीमाओं

Vidyawarta®
International Multilingual Research Journal
At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed Pin-431126 (Maharashtra)
ISO9001-2015 CERTIFIED

Certificate Of Publication

This is to certify that the review board of our research journal accepted the research paper/article titled उदयपुर में बेदला ग्राम के कार्तिक स्वामी मन्दिर का शिलालेख (उदयपुर नगर की स्थापना के विशेष संदर्भ में) of Dr./Mr./Miss/Mrs. राम सिंह राठौड़

It is peer reviewed and published in the Issue 43 Vol. 01 in the month of JULY To SEPT. 2022.

Thank you for sending your valuable writing for Vidyawarta Journal

Indexed (IIJIF)
Impact Factor 8.14
Govt.of India, Trade Marks Registry Regd.No.2611690
ISSN-2319 9318

Editor in chief
Dr.Bapu G.Gholap

October to December 2023
E-Journal
Volume I, Issue XLIV

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Scientific Journal Impact Factor- 7.671

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

129. महिला के गरीबी उन्मूलन में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन का एक आर्थिक अध्ययन 431
(झाबुआ जिले के राणापुर विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में) (डॉ. हेमता डुडवे)

130. Jammu & Kashmir Post Article - 370 Abrogation: An Analysis of Socio-Economic 434
and Political Dynamics (Rafia Banoo Dar)

131. State of Democracy in Bangladesh: From Praetorianism to One Party Rule (Rafia Banoo Dar)..... 437

132. राजस्थान का कला दृश्य एवं समकालीन प्रकृति चित्रकार (डॉ.ज्वाला प्रसाद कलोशिया)..... 440

133. जनजातीय वर्ग की राजनीतिक जागरूकता का लिंग एवं शिक्षा के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन (राकेश देवड़ा)..... 443

134. The Role and Impact of the Comptroller and Auditor General (CAG) of India in Promoting 445
Financial Accountability and Transparency (Bhupendra Tank)

135. भीलवाड़ा जिले का प्रमुख धार्मिक स्थलों का अध्ययन पर्यटन के विशेष संदर्भ में (कमलेश कुमार नाथ)..... 448

136. कालिदास साहित्य में पर्यावरण चेतना (डॉ. धीरज प्रकाश जोशी, विपिन व्यास)..... 451

137. 'समयसार' के मंगलाचरण में ''सुदकेवली'' (प्रो. सुदीप कुमार जैन) 453

138. भारत के आर्थिक पर्यावरण पर वस्तु एवं सेवाकर के प्रभाव का अध्ययन (प्रवीण कुमार सोनी)..... 457

139. Exploring the Underlying Theme of Humanism in Selected Tagore's Short Narratives 460
(Dr. Hitkaran Singh Ranawat)

140. संस्कृति के वाहक राजस्थान के लोक नृत्य (कबीर शरण) 464

141. जनजातीय महिलाओं के सशक्तीकरण में सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन 469
(अंजली रजक)

142. लोक न्याय प्रणाली (डॉ. नितीश ओबेराइन)..... 472

143. Effect of Yoga and Physical Training on Selected Performance Determined Variables..... 474
Among Volleyball Players (Dr. Bhupender Sharma)

144. मानव विकास : विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. दिनेश कुमार कटुतिया)..... 477

145. कर्मचारियों को संतुष्ट एवं निष्ठावान रखने में क्षतिपूरण की भूमिका (डॉ. इन्दु अरोडा) 479

146. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020: उच्च शिक्षा में शैक्षिक नवाचार एवं शिक्षकों की शैक्षिक समस्यायें 482
(केशव लाल गुप्ता, डॉ.देवेन्द्र कुमार अग्रवाल)

147. लोकसंत महाराज चतुरसिंह जी बावजी (रामसिंह राठौड़, डॉ. अजातशत्रु सिंह शिवरती) 484

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
October to December 2023, E-Journal, Vol. I, Issue XLIV

लोकसंत महाराज चतुरसिंह जी बावजी

रामसिंह राठौड़* डॉ. अजातशत्रु सिंह शिवरती**

* शोधार्थी (इतिहास) पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राध्यापक (इतिहास) पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

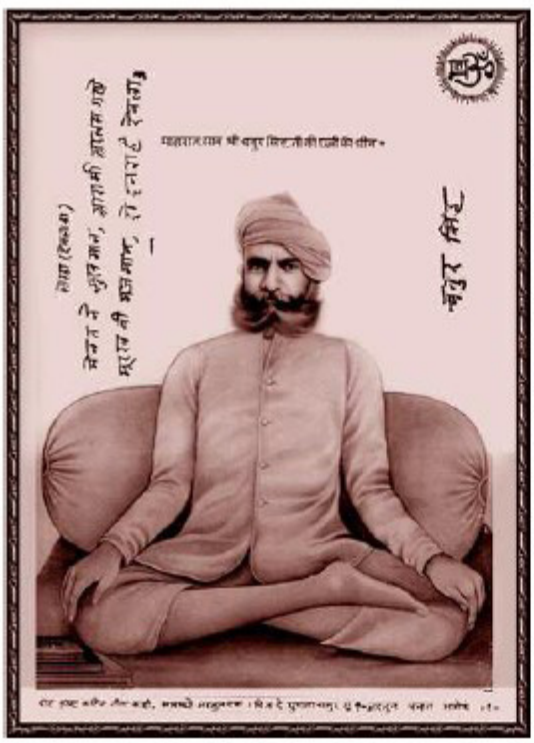

प्रस्तावना – लोकसंत महाराज चतुर सिंह जी बावजी मर्यादा पुरूषोत्तम रामचन्द्र के पवित्र वंश मेवाड़ राजवंश में योग की अलख जगाने वाले बप्पा रावल की परम्परा के संत थे और मेवाड़ की युवरानी भक्त शिरोमणी मीराबाई की भक्ति से ओतप्रोत थे। मीरां ने जिस भक्ति की लहर को आरम्भ किया, उसे महाराणा प्रताप की पत्नी अजबदे ने आगे बढ़ाया और वल्लभ कुल के तिलकायत गोस्वामी से ब्रह्म सम्बंध लिया। इस प्रकार शौर्य और अध्यात्म से जागृत मेवाड़ के गुहिलोत राजवंश में 19वीं शताब्दी में एक राज राजेश्वर संत महायोगी महाराज चतुर सिंह जी बावजी का जन्म हुआ। उन्होंने मेवाड़ में सवा सौ साल पहले अध्यात्मिक क्रांति के साथ ही राजनीति समस्याओं और जनजागृति के लिए जनभाषा मेवाड़ी का प्रयोग कर एक नए युग का सूत्रपात किया।

बावजी चतुर सिंह जी का जन्म मेवाड़ के महाराणा फतह सिंह जी के बड़े भाई और करजाली के जागीरदार महाराज सूरत सिंह जी व उनकी पत्नी कृष्ण कंवर के घर माघ कृष्णा चतुर्दशी संवत् 1936, तद्नुसार 9 फरवरी 1880 को हुआ। मेवाड़ राजवंश के से सम्बंधित भाइपा में करजाली-शिवरती परिवार के इतिहास पुरूषों में लोकप्रिय संत महाराज चतुर सिंह जी बावजी का नाम जन-जन में व्याप्त है। बावजी राजपरिवार के ऐश्वर्य को त्याग कर जीवन पर्यन्त आध्यात्मिक चेतना में लगे रहे और इसे उन्होंने सरस, सरल और मातृभाषा मेवाड़ी में अपने उपदेश जन-जन तक संप्रेषित किये। इसी कारण उन्हें योगेश्वर (योगीराज) कहा जाता है। शासन और सामंतीय व्यवस्था के गुण-अवगणु से राज्य की प्रजा को अपने काव्य और दर्शन के ग्रंथों के माध्यम से अवगत करवाया और समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन किया। इसी कारण उन्हें कई बार मेवाड़ का विवेकानंद कहकर सम्बोधित किया गया।

बावजी चतुरसिंह की बचपन से ही साहित्यिक अभिरूचि प्रगट हुई और उन्होंने विलक्षण प्रतिभा के बल पर संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, फ्रेंच, अरबी, फारसी और मेवाड़ी भाषा और बोली पर समान अधिकार प्राप्त किया। उन्होंने समान रूप से भारतीय सनातन के आध्यात्मिक ग्रंथों के साथ अब्राहमिक मत-मजहबों के ग्रंथों का भी अध्ययन किया। पिता महाराज सूरत सिंह जी भी आध्यात्मिक प्रवृत्ती के पुरुष थे और सभी तीर्थ स्थल की यात्रा के दौरान अपने पुत्र चतुरसिंह को साथ ले गए। जिससे चतुरसिंह के बाल मन पर अध्यात्म और ईश्वर के प्रति आस्था का गहन प्रभाव पड़ा। साधु-संतों के साथ सत्संग ने उन्हें पूर्णरूप से अध्यात्म की ओर आकर्षित कर लिया लेकिन परिवारिक दबाव के चलते उन्होंने शेखावाटी के एक ठिकाने छापोली के ठाकुर साहब की पुत्री से विवाह करना स्वीकार कर लिया। इस विवाह से उन्हें एक पुत्री रत्न की प्राप्ति हुई। बावजी चतुर सिंह जी की पत्नी का 27 वर्ष की अल्पआयु में ही देवलोक हो गया। इस कारण अध्यात्म की ओर आकर्षित चतुरसिंह जी का अब सांसारिक मोह माया से भी दुराव हो गया और उन्होंने स्वयं को ईश्वर के प्रति समर्पित कर दिया। वे सच्चे अर्थों में राजयोगी थे जिनका सांसारिकता के प्रति कोई लगाव नहीं था।

बावजी चतुरसिंह जी सत्य की खोज में तीर्थों के भ्रमण को निकले। इनमें उन्होंने विशेष रूप से वृंदावन व नर्मदा नदी के तट पर स्थित तीर्थ और ज्योर्तिलिंग ओंकारेश्वर की यात्रा की। दोनों ही स्थानों पर वे ख्यातनाम संतों व योगियों से मिले। ओंकारेश्वर तीर्थ में आपकी योगीराज कमल भारती से भेंट हुई। योगीराज से उन्होंने शिष्यत्व प्रदान करने की प्रार्थना की किन्तु कमल भारती जी ने उन्हें मेवाड़ के बाठेड़ा ठिकाने के गांव लक्ष्मणपुरा के

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
October to December 2023, E-Journal, Vol. I, Issue XLIV

ठाकुर गुमानसिंह को योगीवीर्य बताते हुए अपना गुरु बनाने का संदेश दिया। इसके बाद वे उदयपुर लौट आए और लक्ष्मणपुरा जाकर योगीवीर्य ठाकुर गुमानसिंह का सान्निध्य प्राप्त कर शिष्यत्व ग्रहण किया। अब गुरु के निर्देशानुसार साधाना क्रम प्रवाहित होने लगा और वे सामान्य व्यक्ति से योगी के रूप में तैयार होने लगे।

इस प्रकार बावजी चतुरसिंह के प्रथम गुरु गुमानसिंह जी लक्ष्मणपुरा थे और उन्हें से उन्हें साधना और योगसिद्ध दोनों प्राप्त हुई। अब बावजी ने अपना आश्रम नऊवा में एक कुटिर बना कर आरम्भ किया और अपना अधिक समय साधना में लगाया। वर्तमान में वहां उनका समाधि स्थल और स्मारक है। आपको आत्म साक्षात्कार संवत् 1978 में हुआ। इन्होंने योगेश्वर गुमान सिंह जी पाए आध्यात्मिक ज्ञान को जन-जन में प्रचारित करने के लिए मेवाड की राजधानी उदयपुर के निकट सुखेर गांव में आश्रम सुखधाम की स्थापना की। वर्तमान में यह आश्रम उदयपुर से निकल रहे राष्ट्रीय राज मार्ग संख्या-8 पर स्थित है। इस स्थान का अब हवा मगरी के नाम से जाना जाता है।

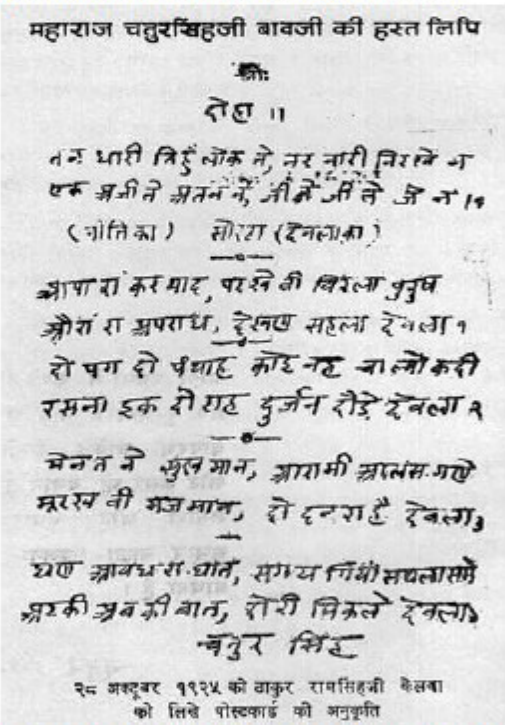
महाराज चतुरसिंहजी बावजी की हस्त लिपि

श्री:

दोहा ॥

तन धारी त्रिहुं लोक ने, नर नारी निरखे न
एक अजी ने अतन ने, जीने जीने ले न ।१
(गीतिका) सोरठा (दोलड़ा)

आपा रा कर माह, परसे की विरला पुरुष
औरां रा अपराध, देखण सहला देखला १
दो पग दो पंथाह, कोइ नह चालो कदी
रसना इक दो राह दुर्जन दौड़े देखला २

भजन ने भुलमान, आरामी आलस गणे
मूरख की मजमान, दो दन राहै देखला ३

धण आवध रा धान, सगय गिमी सथलासमें
अरकी अब की बान, दोरी निकले देखला
चतुर सिंह

२८ अक्टूबर १९२५ को ठाकुर रामसिंहजी केलवा को लिखे पोस्टकार्ड की अनुकृति

आज से सौ वर्ष पूर्व महामारी के दौर में आपने जनता के हित के लिए कई राहत कार्य करवाए। आपने जैन शास्त्र, काश्मीर शैव सिद्धान्त के ग्रंथों, इस्लाम की मूल पुस्तक कुरान शरीफ, ईसाइयत के मूल ग्रंथ बाइबल का भी अध्ययन किया। मेवाडी भाषा के प्रचार और विस्तार के साथ उसमें साहित्य सृजन का प्रारम्भिक श्रेय बावजी चतुरसिंह जी को जाता है। उन्होंने गीता, योगसूत्र, सांख्यकारिका, मार्कण्डेयकृत चंद्रशेखर स्रोत पर मेवाडी भाष में टीका लिखी। आपने चतुर चिंतामणी, समान बत्तीसी, मानवचित्र रामचरित, अनुभव प्रकाश, लेख संग्रह आदि ग्रंथों का सृजन किया। बावजी की शोधा ग्रंथ व रचनाओं पर शोधार्थी शोध के रूप में उपयोग लेते हैं। बावजी की रचनाएं आज के परिप्रेक्ष्य में उपयोगी है। महिलाओं, दलितों, किसानों, नशामुक्ति आदि पर आपने सरल रचनाएं मेवाडी भाष में सृजित की। उन्होंने वेद, पुराण, उपनिषद्, महाकाव्यों आदि को मानव जीवन में उतारने पर बल दिया, जिससे की आज का युवा सही मार्ग प्रशस्त कर सके। बावजी ने आज की कुरीतियों के ऊपर सवा सौ साल पहले दारू (मदिरा) परस्चना 'दारू री रीत' जिससे उन्होंने अपने काल में नवयुवकों को नशे से दूर रहने का संदेश दिया जो आज भी प्रासंगिक है।

दारू री दोय सदा शुरीती।
मरया पछे नरक में पड़नो, जीता जीव फजिती।
जद शिशो पी मेट दी, मद पिवा री गाळ।
वो मादवी शिशोद अब, पिवे शिशा ढाल।

समय की कीमत पर नवयुवकों को अपनी रचना से समझाने को प्रयास किया -

कर कर वृथा थंथ दूजांरों, वेंडा वगत गमायो सारो॥
वी आछा ने वी खोटा तो, वी भोगेगा वांरो॥

बावजी ने भक्ति के निर्गुण तथ्यों को बड़े ही सरल भावो और शब्दों में कह दिया -

यूं कंई पड़यो पसर ने डाकी, थारे कणी जगा जावा की लागी।
कठी पगरखी कठी अंगरखी, कठी पागड़ी न्हांखी॥
टिगट टेमरी खबर खोज नी, कटगी गाँठ टकां की।
घर घ जाण व्हियो थूं गाफिल, रेल घणी दौड़ा की॥
चढ़े जणी में पड़े उतरमओ, या है रीत अठा की।
आयो कठूं कठे उतरेगा, कतरा टेशण बाकी॥
खादी भांग, गालमा कीथा, बोतल पीथी आखी।
कूण सुणे ने कीने केवां, हालत हाय नशा की॥
शंकर सावधान व्हे जाणो, देख दशा दूजा की।
यूं कंई पड़यो पसर ने डाकी, थारे कणी जगा जावा की लागी॥
दन आंख्यो, थावया बळद, वयारो पिदो न एक।
वच मू वयारो फूट ग्यो, हिया हूना जट देखा॥

उनकी नवचेतना को जगाने वाली अमर पंक्तियां हैं, जो युगों युगों तक मानव के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती रहेगी। बावजी की शिक्षाओं से प्रेरित नाथद्वारा निवासी भूरी बाई नामक एक महिला हुई थी जो निरक्षर थी। उन्होंने सहज भक्ति, सहज ज्ञान, सहज वैराग्य, सहज व्यवहार की मार्ग चुना। भूरी बाई की काली पोथी और उनके आध्यात्मिक चैतन्य से प्रेरित होकर तत्कालीन आचार्य रजनीश जैसा दार्शनिक भी उनके साधाना केन्द्र अलख आश्रम नाथद्वारा में रहे। जिसका उल्लेख रजनीश ने अपने ग्रंथों में किया। वस्तुतः भूरी बाई संत शिरोमणि मीरा बाई, सहजो बाई, गवरी बाई, रूबिया की तरह से लोकसंत के रूप में विख्यात थे।

यूं ही सबा ही अणीज एक वात ने नरी तरै शू सम्झाई है, पण ई रो सही अर्थ तो केवल एक सतगुरू ही जाणे। लखवा वालो तो अणा अखरां रा घरां पे शतरंज रा रमणारी नांई अठी ने उठी करै है।

बावजी चतरसिंह जी की अलख पचीसी पर लिखी भूमिका स्वयं उनके कर्ता न मानने की भावों की अभिव्यक्ति तथा गुरु तथा शास्त्रों के प्रति आस्था देखने को मिलती है।

दुख ही दुख दशहु दिशा, दीखे दिन अरू रात।
सुख तो सकल सिधारियो, शेखावती से साथ।

इसी तरह उनका प्रजा के प्रति भी समभाव था। उन दिनों मेवाड़ के ठिकानों में राजपुत्रियों का विवाह होता तो एक विशेष लगान 'बाई बराड़' (चंवरी कर) एकत्रित होता था। बावजी की दो पुत्रियों के विवाह के समय जब बाई बराड़ एकत्रित की जाने लगी तो उन्होंने इसे पुनः ठिकानों को लौटाया तथा उस समय मेवाड़ के महाराणा से पैसे 5000 रुपए उधार लेकर विवाह सम्पन्न कराया। विवाह के कुछ समय पश्चात् ही उनकी पुत्री का भी स्वर्गवास हो गया। इस तरह उन्हें समाज, राज्य और प्रजा से बांधे रखने वाला आशासूत्र भी चला गया। इनको पुनः विवाह करने के लिए कहा गया परन्तु इन्होंने यह कहकर की मेरे मरने के बाद पत्नी भी दूसरा विवाह कर सकती है। उस समय के सामाजिक वातावरण में यह कठोर तंज था। तेलियों की सराय सुखेर आदि स्थानों पर अपना साधना बनाया तथा इसके बाद सुरम्य प्राकृतिक स्थान 'नऊवा' गांव में कोठरी बनाई तथा यहाँ पर साधना में डूबे रहने लगे। इसी गांव में आपको आत्मा साक्षात्कार हुआ।

आपने समाज में सुख सम्बन्धी सोच में बदलाव हेतु 'सुख समाज' नामक संस्था बनाई। इस संस्था द्वारा साप्ताहिक गोष्ठियों में प्रबुद्धजनों का रूझान बढ़ा। प्रति सप्ताह एक विषय लिया जाता। कविता, लेख आदि तैयार कर अगली साप्ताहिक बैठक में रखा जाता है। अध्यात्म के साधकों के लिए शास्त्र की अपेक्षा गुरु का अधिक योगदान है। बावजी ने कहा था–

कागद कीडी रे जस्यो, वीं में वेद पुराण।
वीं में अक्खर एक नी, उद्या अलख पहचान।।
सांख्य योग सनातन पंथ से पूरो पाठ पढ़ायो।
तत्पद लंपद वाक्य अर्थ तज लक्ष्य स्वरूप लखायो।।
गुरु वचनों को मेख से, मन का घोडा बाँध।
ज्ञान अगाडी आन के प्रेम पिछाडी साथ।।

प्रेम ज्ञान का अनुवर्ती है यह साथ गुरूकृपा से प्राप्त हुआ। अलख पचीसी के पूर्ण होने व आत्म साक्षात्कार होने को दोहे में निम्नानुसार कहा है –

उगणी सो उठ्योत्तेरे, तीज पौष सुदमाण।
नऊवा नगरी में वणी, उद्या अलख पछाण।।

आपका सहयोगी उदय लाल प्रमुख था। 'अलख पचीसी' की रचना के प्रत्येक दोहे के अंतिम पद 'उद्या अलख पछाण' के साथ समाप्त होता है। आपने अपने सहयोगी, भक्तों को इन पदों में अंकित किया है –

कन्नो काटे काकडी, देवो होजे दाल।
चतुर सिंह पोथी कणे, हवा मगरी री हाल।।
बगुला ताके मीन पै, जोगी ध्यान लगाय।
वैज्यो ताके सुरत पै, रामनाम जगसार।।
बडा बड़ा राज बचौ, थारो भाग विशाल।
मैं नत बिन मनखा जलम, जीत्यो जैठालाल।।

वर्तमान में मावली तहसील के नउवा गांव में बावजी की साधना गति पकड़ चुकी थी। यहां पर भक्तिजनों के कारण भजन–कीर्तन के क्रम में चलते रहते। इसी क्रम में यहां पर डांगी जाती का कीका जैसा अनपढ़ कृषक भी आया करता था। कीका की तन्मयता (अपनी ही धुन में लगे रहने पर) देखकर बावजी का ध्यान उस पर गया। उससे वे अत्यंत प्रभावित हुए और उनके प्रगाढ़ सम्बन्ध हुए। बावजी कीका के घर पर आने जाने लगे तथा उन्हें कीका में राम (परमेश्वर) जैसी स्थिति का अनुभव हुआ जिसे उन्होंने इस दोहे में गाया।

दोड्या तीरथ दूर रा, म्हें रह्यो कंगाल।
कीका डांगी कर दियो, नउवा में ही न्याल।

बावजी को कीका डांगी के घर में राम रमते दिखे। इस अनुभव के प्रभाव में उन्होंने कीका डांगी की अध्यात्म उड़ान की सबलता व ऊंचाई को इस दोहे में बताया।

मानो के मानो मति, कहणो म्हारो काम।
कीका डांगी रे कने, रमता लादा राम।।

इस प्रकार कीका डांगी जैसे दुर्लभ रत्न को बावजी ने पहचाना। इसी प्रकार उदयलाल डांगी उनकी सेवा में लगा रहता था। वह उनकी पुस्तकों के समूह को देखकर हंस दिया। बावजी ने हंसने का कारण पूछा तो उसने कहा कि बावजी आप अतरी पोथ्या भणोगा। इस पर बावजी ने चिंतन–मनन किया तो उन्हें अनुभूति हुई कि किसी एक विषय पर ही ध्यान केन्द्रीत करना होगा। इसके बाद बावजी ने केवल गीता पर ही अपना चिंतन स्थिर किया। इस प्रकार गीता का विश्लेषण करने वाले दोहो को उन्होंने अलख पच्चिसी के रूप में सृजित किया और इसमें उन्होंने उदा का सम्बोधित कर सृजन किया। यहां पर उनका उदा से तात्पर्य उदयशील व्यक्ति से है, जिसमें अलख यानि परमात्मा को पहचान का ज्ञान है।

अलख कहै सो आलसी, लख केश्वे नादान।
अलख लखी रो आसरो, उद्या अलख पिछाण।।
बकरी चरगी नार ने, पालो पाती जांण।
वीं बकरी रो ग्वाल है, उद्या अलख पछाण।।
कागद कीडी रे जश्यो, वींमें वेद कुराण।
वींमें अक्षर एक नी, उद्या अलख पिछाण।।
देखूं देखूं छोडने, दीखूं दूखूं ठांण।
ई दूखूं रो देखणों, उद्या अलख पिछाण।।
बाहर केवे बावला, अंतर कहे अजाण।
बाहर अंतर एक सो, उद्या अलख पिछाण।।
देबारी में उदयपुर, उदियापुर में राण।
वींरि राण दिवाण है, उद्या अलख पिछाण।।
जाणे सो ही जाणसी, या अण जाणी जाण।

नीतर ऊंधी ताणसी, उद्या अलख पिछाण।

आध्यात्मिक उन्नति के लिए किसी विशिष्ठ शैक्षिक डिग्रियों की आवश्यकता नहीं होती है। यह उद्या जैसे साधारण जन से ही समझी जा सकती है। यह बात बावजी चतुर सिंह ने दोहे में बतायी। बावजी द्वारा रचित दोहे में शुद्ध मेवाडी भाषा की प्रधानता है, क्योंकि उस समय कम पढ़े लिखे लोगों तक इसे समझने में कठिनाई कम रहती थी। साधारण जन मानस में जल्दी ही रच बस जाते थे। इस प्रकार संत बावजी चतुरसिंह जी ने योगी के रूप में तथा कवि के रूप में अपना जीवन पर्यन्त कर्म पथ पर चल कर हजारों साल पुरानी उस योग शिक्षा व ज्ञान को समाज व जन-जन में बताया। आपने जीवन भर स्थानीय भाषा मेवाडी का ही उपयोग अपने लेखन व दैनिक जीवन में किया जो आज की शिक्षा नीति में भी प्रासंगिक है।

आप द्वारा उस समय कथा प्रथम के लिए 'बाळकां री पोथी' किताब लिखी। इसको उन्होंने मेवाडी भाषा में लिखकर स्थानीय भाषा का पूरा समर्थन किया। आप द्वारा नर्मदा के तट पर जाकर आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने हेतु योगीराज कमल भारती को अपना गुरु माना परन्तु गुरु ने कहा तेरा गुरु मेवाड में ही है। इस बात की पुष्टि इनके परिवार के सदस्य श्री चन्द्रवीर सिंह राणावत ने बताया कि कहा बावजी चतुर सिंह जब नर्मदा तट पर योगियों के बीच रहकर योग साधना कर रहे थे तो उन्होंने वहां गुरु बनाने की सोची लेकिन वहां के योगी कमल भारती जिनको चतुर सिंह बावजी गुरु बनाना चाहते थे, कहा कि तेरा गुरु तो मेवाड में ही है। अध्यात्म में साधकों के लिए शास्त्र की अपेक्षा गुरु का अधिक योगदान रहता है। गुरु पद के प्रभाव की आप द्वारा रचित इन दोहों से परखा जा सकता हैं।

सांख्य योग सनातन पंथ से पूरा पाठ पढ़ायो।
तत्पद लंपट वाक्य अर्थ तज लक्ष्य स्वरूप पलखायो।।
गुरु वचनों को मेख से, मन का घोड़ा बाँध।
ज्ञान अगाडी आन के प्रेम पिछाडी साध।।

इन्होंने अध्यात्म के अलावा साहित्य में भी साधाना गद्य और पद्य में रचना करके की। अधिकांश ग्रन्थ मुक्तक शैली में है। आपने पूर्णत मेवाडी में ही लेखन किया। आपने एक मात्र मेवाडी भाषा में गीता के समश्लोकी अनुवाद ग्रन्थ लिखा है।

'योग सूत्र' : प्राणायाम रहस्य – श्वास प्रश्वान शूं इन्द्रिया चेते अर्थात् इन्द्रिया ने ज्ञान देहवे ने इन्द्रियां ने ज्ञान व्हेवा शूं मन वणे। क्यूं के इन्द्रिया रो झट झट गरणेरो खावा रो नाम हीजु मन है। मन शूं आखो संसार वणे अर्थात् निश्चय व्हेवे निश्चय शूं ही संसार है। पाछो अंवलो चालवा शूं यो मिटे। निश्चय मन में, मन इन्द्रियों में ने इन्द्रिया शांस प्रकृति में मिले जदी शास वा इन्द्रियां निश्चय आदि कई भी निस्वालश दीख जाय। जदी 'ऊ सब छुट मुक्ति व्हे' जाय है, ने ईरो उपाय, शांस में निश्चय शूं मन ने मिलावणों है। यो प्रणायाम करवा शूं व्हे है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), अलख पचीसी, भट्ट, श्याम सुन्दर एवं नौशालिया प्रेरणा (सम्पादक), प्रणव प्रकाशन, फतहपुरा उदयपुर, मकर संक्राति, विक्रम संवत् 2079
2. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), चतुर वचनामृत, प्रकाशक – महाराणा मेवाड पब्लिकेशन ट्रस्ट प्रकाशन, जन्म शती वर्ष 1980 ई.
3. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), बाळकां री पोथी, प्रकाशक – करजाली महाराज करण सिंह मेमोरियल फाउण्डेशन, उदयपुर, वर्ष 2022 ई.
4. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), मानवमित्र राम चरित्र, प्रकाशक – महाराणा मेवाड पब्लिकेशन ट्रस्ट प्रकाशन, जन्म शती वर्ष 1980 ई.
5. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), परमार्थ विचार, भाग 7, प्रकाशक – शिवशक्ति विद्यापीठ, उदयपुर, वि.सं. 2027
6. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (रचयिता), अनुभव प्रकाश, प्रकाशक – महाराणा मेवाड पब्लिकेशन ट्रस्ट प्रकाशन, जन्म शती वर्ष 1980 ई.
7. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (अनूदित), चन्द्रशेखर स्त्रोत तथा शिव महिम्न: स्त्रोत, प्रकाशक – महाराणा मेवाड हिस्टोरिकल पब्लिकेशन ट्रस्ट उदयपुर, वर्ष 2013 ई.
8. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी (टीका कृत), सांख्य-कारिका तथा सांख्य-तत्व-समास, प्रकाशक – महाराणा मेवाड हिस्टोरिकल पब्लिकेशन ट्रस्ट उदयपुर, वर्ष 2013 ई.
9. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी कृत, शेष चरित्र, प्रकाशक – महाराणा मेवाड हिस्टोरिकल पब्लिकेशन ट्रस्ट उदयपुर, वर्ष 2013 ई.
10. महाराज श्री चतुरसिंह जी बावजी कृत, चतुर चिन्तामणि, प्रकाशक – महाराणा मेवाड हिस्टोरिकल पब्लिकेशन ट्रस्ट उदयपुर, वर्ष 2014 ई.

****

Naveen Shodh Sansar
(An International Refereed/Peer Review Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793
Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
Web: www.nssresearchjournal.com, Email: nssresearchjournal@gmail.com

Certificate Of Publication

Is here by awarding this certificate to Dr./Prof./Mr./Mrs./Ms.

Ramsingh Rathore

Professor (History) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

In recognition of the publication of the paper entitled

लोकसंत महाराज चतुरसिंह जी बावजी

Published in October to December 2023 E-Journal, Volume I, Issue XLIV

Ashish Narayan Sharma
ASHISH NARAYAN SHARMA
Chief Editor

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER
Scientific Journal Impact Factor
TOGETHER WE REACH THE GOAL
INTERNATIONAL CITATION INDEX
SSRN Tomorrow's Research Today
Google Scholar
Academia.edu share research
Save Nature, Save Humanity
DIGITAL CERTIFICATE

NATIONAL SEMINAR

on

FREEDOM FIGHTERS OF MEWAR-VAGAD : LIFE AND WORKS (1857-1947)

DECEMBER 2-3, 2022

Organized by :

DEPARTMENT OF HISTORY & CULTURE

MANIKYALAL VERMA SHRAMJEEVI COLLEGE

Janardan Rai Nagar Rajasthan Vidyapeeth (Deemed-to-be University) Udaipur -313001 (Rajasthan) INDIA

Certificate

This is to certify that Prof. / Dr. / Mr./Ms. रामसिंह राठौड़ शोधार्थी *of* पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर *has participated / presented a paper/Chaired a session entitled* मेवाड़ महाराणा फतहसिंह "भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन का पक्षधर" *in the National Seminar and made a commendable contribution to the event.*

Col. Prof. S.S. Sarangdevot	***Prof. Suman Pamecha***	***Dr. Hemendra Choudhary***
Vice - Chancellor	Dean, Faculty of Social Sciences & Humanities	Seminar Director
JRN Rajasthan Vidyapeeth	MVS, College	
(Deemed-to-be- University)		

Azadi Ka Amrit Mahotsav

Department of History
Mohanlal Sukhadia University, Udaipur, India
International Conference
on
"Animals in the History of South Asia"
Date : 2nd and 3rd February, 2023

Certificate

This is certified that Prof./Dr./Mr./Ms.

RAM SINGH RATHORE

participated in an International Conference on

"Animals in the History of South Asia"

organized by Department of History,

Mohanlal Sukhadia University, Udaipur, India

on 2nd and 3rd February, 2023.

He/She has/ participated as Resource Person/presented paper titled

पौराणिक एवं इतिहास प्रसिद्ध महापुरुषों के विशिष्ट अवदान

Prof. Pratibha
Head of Department, History

Dr. Peeyush Bhadviya
Organizing Secretary

साहित्य संस्थान

जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ

(डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय) उदयपुर

एवम्

लोकजन सेवा संस्थान, उदयपुर

के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित

एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

राजस्थान की कला एवं संस्कृति

फाल्गुन कृष्णा अष्टमी, विक्रम संवत् - 2079

मंगलवार, 14 फरवरी, 2023

प्रमाण - पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रो. /डॉ./श्री/ श्रीमती /सुश्री राम सिंह राठौड़

ने 'राजस्थान की कला एवं संस्कृति' विषय पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में पाबूजी

एवं फड़

शीर्षक / विषय पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया।

हम आपके यशस्वी जीवन की कामना करते हुए इतिहास विधा के क्षेत्र में निरन्तर सार्थक अवदान की अपेक्षा करते हैं।

प्रो. एस.एस. सारंगदेवोत	डॉ. देव कोठारी	प्रो. जे. एस. खारकवाल
कुलपति	संगोष्ठी निदेशक	निदेशक
जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ		साहित्य संस्थान